मुकम्मल व मुदल्लल
मसाइले रोज़ा
कुरआन व हदीस की रौशनी में
हज़रत मुफ़्तियाने किराम दारूलउलूम देवबंद की
तस्दीक़ व ताईद करदा
मुअल्लिफ़
मौलाना क़ारी मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी
(मुदर्रिस दारूलउलूम देवबंद)

मुकम्मल व मुदल्लल

मसाइले रोज़ा

कुरआन व हदीस की रौशनी में

हज़रत मुफ़्तियाने किराम-दारुलउलूम देवबंद की तस्दीक़ के साथ

मुअल्लिफ़

मौलाना क़ारी मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी
(मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद)

लिप्यान्तरः

मो० मोकर्रम ज़हीर

नाशिर

अन्जुम बुक डिपो

मटिया महल, जामा मस्जिद (दिल्ली)

किताब का नामः... मुकम्मल व मुदल्लल मसाइले रोज़ा

मुसन्निफ़ः.......... मौलाना क़ारी मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी

लिप्यान्तरः......... मो० मोकर्रम ज़हीर

ज़ेरे निगरानीः...... शकील अन्जुम देहलवी

तादादः........... 1100

Masaile Roza

By:Maulana Qari Md. Rafat Qasmi

Published by

Anjum Book Depot

Matia Mahal, Jama Masjid, Delhi - 6

अबवाबे किताब

(1) मसाइले रमज़ान (2) रूयते हिलाल (3) मसाइले नीयत (4) सहरी के मसाइल (5) जिन चीज़ों से रोज़ा नहीं टूटता (6) जिन चीज़ों से रोज़ा टूट जाता है, सिर्फ़ क़ज़ा रखना पड़ती है (7) जिन से क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब होते हैं (8) कफ़्फ़ारा के मसाइल (9) औरतों के मसाइल (10) बच्चों के मसाइल (11) मरीज़ के मसाइल (12) मुसाफ़िर के मसाइल (13) मुतफ़र्रिक़ मसाइल (14) नज़्र के रोज़ों के मसाइल (15) नफ़्ल रोज़ों के मसाइल (16) वह उज़्र जिनकी वजह से रोज़ा न रखने की इजाज़त होती है (17) वह उज़्र जिनकी वजह से रोज़ा तोड़ देना जाइज़ होता है (18) मकरूहाते रोज़ा (19) वह चीज़ें जिनसे रोज़ा नहीं टूटता और मकरूहात रोज़ा (20) मुस्तहब्बाते रोज़ा (21) फ़िदया के मसाइल (22) इफ़्तार के मसाइल (23) सदक़ए फ़ित्र के मसाइल।

❑❑❑

फ़ेहरिस्ते उन्वानात मसाइले रोज़ा

उन्वान सफ्हात

बाब (3)

मसाइले नीयत

बाब (4)

बाब (8)

कफ़्फ़ारे के मसाइल

बाब (9)

औरतों के मसाइल

बाब (12)

मुसाफ़िर के मसाइल

बाब (13)

मुतफ़र्रिक़ मसाइल

बाब (15)

बाब (16)

बाब (17)

बाब (18)

मकरूहाते रोज़ा

बाब (19)

बाब (20)

बाब (21)

फ़िदया के मसाइल

बाब (23)

इन्तिसाब

उन

तमाम

रोज़ा दारों के

नाम

जो

महज़ अल्लाह

के लिए

रोज़े

रखते हैं!

"रफ़अ़त क़ासमी"

राए आली
हज़रत मौलाना मुफ़्ती निज़ामुद्दीन साहब मुद्दज़िल्लहुल आ़ली
सदर मुफ़्ती दारुलउलूम देवबंद

اَلْحَمْدُ لِاَهْلِهٖ وَالصَّلٰوةُ لِاَهْلِهَا وَبَعْدُ:

पेशे नज़र रिसाला "मसाइले रोज़ा मुकम्मल व मुदल्लल" अज़ीज़ मुकर्रम जनाब मौलाना हाफ़िज़ मुहम्मद रफ़अ़त साहब उस्ताज़ दारुलउलूम देवबंद की दूसरी काविश है। इससे क़ब्ल मौसूफ़ "मसाइले तरावीह मुकम्मल व मुदल्लल" इसी अंदाज़ पर तालीफ़ फ़रमा चुके हैं, जो बहमदिल्लाह ज़ेवरे तबाअ़त से आरास्ता हो कर मंज़रे आम पर आ चुकी है और हर ख़ास व आ़म से ख़िराजे तहसीन हासिल कर चुकी है।

इन दोनों रिसालों की खुसूसियत ये है कि इनमें मौसूफ़ ने अपनी जानिब से कोई बात नहीं कही है और न ही किसी मस्अला को हवाला के बग़ैर नक़्ल किया है, बल्कि हर मस्अला को अकाबिरे उम्मत की मोतमद कुतुबे फ़तावा से लफ़्ज़ बलफ़्ज़ नक़्ल कर दिया है, ताकि उसके मुसद्दक़ और सही होने में किसी को कलाम न हो, और इस तरह से मसाइले तरावीह में तक़रीबन **400** मुस्तनद फ़तावा और मसाइले रोज़ा में **418** मुस्तनद फ़तावा इकट्ठे मिल जाएँगे।

दूसरी ख़ूबी ये है कि हर मस्अला को अबवाब व अनावीन पर तक्सीम कर दिया है, ताकि तलाश में सहूलत और आसानी हो।

उम्मीद है कि जिस तरह फ़ज़ाइल का मजमूआ उम्मत के लिए मुफ़ीद व कारआमद है उसी तरह मसाइल का ये मजमूआ भी उम्मत के लिए इंशाअल्लाह मुफ़ीद व कारआदम होगा। मसाजिद नीज़ दीनी व तबलीगी हलक़ों में फ़ज़ाइल सुनाने का दस्तूर है इसी तरह अगर इसको भी सुनाने का दस्तूर बना लिया जाए तो अवाम को बयक-वक़्त दोगुना फ़ायदा पहुंचेगा।

दुआ है कि अल्लाह तआला मौसूफ़ की इस सई को मक़बूल व नाफ़ेअ बनाऐं और आइंदा भी इसी तरह के मुफ़ीद व कारआमद मसाइल के मजमूअे तालीफ़ फ़रमाते रहें, क्योंकि मसाइल के इस क़िस्म के मजमूअे अब तक उर्दू ज़बान में नायाब हैं। मौसूफ़ की ये कोशिश उसी अंदाज़ की है जिस अंदाज़ की फ़तावा हिन्दीया की अरबी में है।

”وَمَا ذٰلِکَ عَلَى اللّٰهِ بِعَزِيْزٍ۔ اٰمِيْنَ يَارَبَّ الْعَالَمِيْنَ۔ بِجَاهِ سَيِّدِ الْمُرْسَلِيْنَ وَ خَاتَمِ النَّبِيِّيْنَ۔“

फ़क़त

अलअब्द निज़ामुद्दीन

मुफ़्तिये दारुलउलूम देवबंद

25—5—1407 हिजरी

❖❖❖

तआरुफ़
अज़ हज़रत मौलाना मुफ़्ती ज़फ़ीरुद्दीन साहब ज़ीदा मजदुहुम
(मुफ़्तिये दारुलउलूम देवबंद)

"الحمد لله رب العلمين والصلوة والسّلام على
سيّد المرسلين وعلى اله و اصحابه اجمعين۔"

इस्लाम के बुनियादी अरकान में रोज़ा भी एक अहम रुक्न है। जिसे मुसलमान बराबर ज़ौक़ व शौक़ से अदा करते आ रहे हैं। चूंकि रोज़ा के लिए साल का एक महीना "रमज़ान" मख़सूस है। दिन रात साल के तमाम हिस्सों में न होने की वजह से उमूमन उसके मसाइल व अहकाम अच्छी तरह ज़ेहन नशीन नहीं रहते। लेकिन जब ये माहे मुबारक आता है तो हर आ़क़िल व बालिग़ मुसलमान को मसाइल व अहकाम की तलाश शुरू हो जाती है। ये भी एक हक़ीक़त है कि मसाइल व अहकाम नौअ़ बनौअ़ होते हैं। बाज़ औक़ात आलिमे दीन भी उलझ जाता है।

इसलिए ज़रूरत थी कि कोई ऐसी किताब मुरत्तब हो जाए जो मोतबर व मुस्तनद भी हो और साथ ही तमाम मसाइल पर हावी भी हो। ख़ुशी की बात है कि दारुलउलूम देवबंद के उस्ताज़ मोहतरम मौलाना हाफ़िज़ रफ़अ़त साहब ने इन मसाइल व अहकाम को बड़ी मेहनत व जांफ़शानी से मुख़्तलिफ़ कुतुबे फ़तावा व फ़िक़्ह

से यकजा किया, फिर उसको मुतअद्दद अबवाब पर तक़्सीम किया और हर मस्अले को उसके मुनासिब बाब के नीचे दर्ज किया है और जिस किताब से मस्अला लिया गया है उसका हवाला भी दर्ज कर दिया गया है। जिसकी वजह से इस किताब की क़द्र व क़ीमत में बड़ा इज़ाफ़ा हो गया है।

ख़ाकसार के इल्म के मुताबिक़ क़दीम व जदीद मसाइल का ऐसा मजमूआ अब तक शाए नहीं हुआ। कोई भी छोटा बड़ा ऐसा मस्अला नहीं है जो इसमें न आ गया हो। मैंने इस किताब के एक मोअ़तदबेह हिस्सा का मुतालआ़ किया है और मुतालआ़ करने के बाद मुअल्लिफ़ के लिए दिल से दुआ़एं निकलीं, अल्लाह तआ़ला मुअल्लिफ़ को जज़ाए ख़ैर अता फ़रमाए और उनके लिए ज़ादे आख़िरत बनाए।

तवक़्क़ो है कि ये किताब छप कर एक बड़ी कमी को पूरा करेगी और रोज़ा रखने वालों के लिए बल्कि आम मुसलमानों के लिए एक बेशबहा नेअ़मत साबित होगी और हर मुसलमान इस किताब का रखना अपने लिए ज़रूरी समझेगा। बिलख़ुसूस अह्ले इल्म के लिए ये मजमूआ एक नेअ़मतेग़ैर मुतरक़्क़बा साबित होगा।

मेरी दुआ़ है कि अल्लाह तआ़ला मुअल्लिफ़ की उम्र और काम दोनों में बरकत अता करे और मज़ीद ख़िदमत का ज़्यादा से ज़्यादा मौक़ा इनायत फ़रमाए। आमीन! या रब्बलआलमीन।

तालिबे दुआ़
मुहम्मद ज़फ़ीरुद्दीन गुफ़िरलहू
मुफ़्तिये दारुलउलूम देवबंद
14 जमादिल औवल 1407 हिजरी

❖❖❖

राए आली
हज़रत मौलाना मुफ़्ती हबीबुर्रहमान साहब ख़ैरआबादी ज़ीदा मजदुहुम

(मुफ़्तिये दारुलउलूम देवबंद)

بسم اللہ الرحمٰن الرحیم

फ़िक़्ह के लाखों मसाइल व अहकाम में ग़ोता ज़नी करना और उनमें थोड़े थोड़े फ़र्क़ से अहकाम का फ़र्क़ समझना हर शख़्स के बस की बात नहीं है। इस ख़िदमत के लिए ख़ास क़िस्म की मुनासबत व सलाहियत और तफ़क़्क़ोह दरकार है।

अ़ज़ीज़ मोहतरम मौलाना मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ने जो फ़िक़्ह के क़दीम व जदीद मसाइल व जुज़ईयात से काफ़ी दिल चस्पी रखते हैं बहुत सी फ़िक़्ही किताबों को सामने रख कर रोज़ा के मसाइल व अहकाम का ये नादिर मजमूआ़ तैयार किया है। इसमें रोज़े के तफ़सीली अहकाम के साथ मौसूफ़ ने रूयते हिलाल के ज़रूरी मसाइल भी ज़िक्र किए हैं और हर मस्अले को बहवाला तहरीर करने का एहतेमाम किया है और बड़े ज़ौक़ व शौक़ और अर्क़ रेज़ी के साथ ये ख़िदमत अंजाम दी है और उर्दू दां तब्क़ा के लिए बड़ी सहूलत मुहैया फ़रमा दी है।

अल्लाह तआ़ला से दुआ़ है कि वह इस मजमूआ़ को क़बूलियत

अता फ़रमाए और अज़ीज़ मौसूफ़ के लिए ज़ख़ीरए आख़िरत और ज़रीअए नजात बनाए। आमीन!

हबीबुर्रहमान ख़ैराबादी
दारुलउलूम देवबंद
5–8–1407 हिजरी

सबबे तालीफ़

"نحمدہٗ و نصلی علٰی رسولہ الکریم"

मैं बावजूद अपनी बे बज़ाअ़ती, कम इल्मी और बे अमली के महज़ अपने असातिज़ा के हुक्म की तामील में इस अहम उनवान "मसाइले रोज़ा" पर ये ख़िदमत अंजाम दे सका जो सिर्फ़ अल्लाह का फ़ज़्ल व करम और उन्ही बड़ों की दुआवों का नतीजा है। इससे क़ब्ल "मसाइले तरावीह" मुकम्मल व मुदल्लल और "मसाइले आदाबे मुलाक़ात" हर दो किताबें मुरत्तब कर के अपने असातिज़ा की ख़िदमत में पेश कीं तो उन्होंने पसंद फ़रमा कर तस्दीक़ी कलिमात से नवाज़ा और हिम्मत अफ़ज़ाई फ़रमाते हुए इस अहम काम के लिए मामूर फ़रमाया।

इस ख़िदमते ग्रामी को मैंने कहां तक सही अंजाम दिया है, नहीं कह सकता। अलबत्ता ये ज़रूर है कि बंदा ने अपनी बिसात के मुताबिक़ रोज़मर्रा पेश आने वाले मसाइल को जमा करने की हत्तलवुस्अ़ कोशिश की है।

"رَبَّنَا تَقَبَّلْ مِنَّا اِنَّکَ اَنْتَ السَّمِیْعُ الْعَلِیْمُ"

मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी
मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद
25 सफ़र 1407 हिजरी

पहला बाब

फ़ज़ाइले रमज़ान

بسم اللہ الرحمٰن الرحیم

”يٰاَيُّهَاالَّذِيْنَ اٰمَنُوْ اكُتِبَ عَلَيْكُمُ الصِّيَامُ كَمَا كُتِبَ عَلَى الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ۔الآية“

ऐ ईमान वालो तुम पर रोज़ा फ़र्ज़ किया गया, जिस तरह तुम से पहली उम्मतों के लोगों पर फ़र्ज़ किया गया था, इस तवक़्क़ो पर कि तुम रोज़ा की बदौलत रफ़्ता रफ़्ता मुत्तक़ी बन जाओ। (अलबक़रह)

लफ़्ज़ ''सियाम'' की तहक़ीक़

लफ़्ज़ सियाम के लुग़वी माना किसी अम्र से बाज़ रहना हैं, चुनांचे अगर कोई बोलने या खाने से बाज़ रहे या बोलना या खाना छोड़ दे तो उसे लुग़त में ''साइम'' कहते हैं इसकी मिसाल कुरआन हकीम में ”اِنِّــــىْ نَــذَرْتُ لِـلـرَّحْـمٰـنِ صَوْماً“ मैंने अल्लाह से सौम की मिन्नत मानी है। यानी ख़ामोश रहने और कलाम न करने की और शरीअ़ते इस्लाम में ''अस्सौम'' या रोज़ा ये है कि आदमी सुब्हे सादिक़ से सूरज गुरूब होने तक खाने पीने और शहवते नफ़सानी के पूरा करने से रोज़ा की नीयत के साथ रुका रहे। और दिन की मीआद सुब्ह सादिक़ के ज़ाहिर हो

जाने से आफ़ताब के गुरूब हो जाने तक है और जिसने इतना कर लिया उसका रोज़ा हो गया। और गोया रोज़ा का जिस्म बन गया। अब जिस तरह जिस्म की सेहत व तंदुरुस्ती के लिए इंसान बहुत सी चीज़ों से परहेज़ करता है। उसी तरह रोज़े के अन्दर भी कुछ परहेज़ हैं।

रमज़ानुलमुबारक का रोज़ा इस्लाम के अरकान में से एक अहम रुक्न है जिसके बग़ैर आदमी अधूरा मुसलमान रहता है।

रमज़ान का रोज़ा हर मुसलमान आक़िल, बालिग़, मर्द और औरत पर जिसमें रोज़ा रखने की ताक़त हो फ़र्ज़े अ़ैन है। जब तक कोई उज़्र न हो रोज़ा छोड़ना दुरुस्त नहीं। और अगर रोज़े की मन्नत (नज़्र) क़रे तो वह रोज़ा फ़र्ज़ हो जाता है। क़ज़ा और कफ़्फ़ारे के रोज़े भी फ़र्ज़ हैं। इसके अलावा सब रोज़े नफ़्ल हैं, जिन्हें रखें तो सवाब है, न रखें तो कोई गुनाह नहीं है। अलबत्ता ईद और बक़रईद के दिन और ईदुलअज़हा के बाद तीन दिन रोज़ा रखना हराम है।

रोज़े की तारीख़

रोज़ा की इब्तिदा आदम अलैहिस्सलाम के ज़माने ही से हो गई थी। चुनांचे रिवायात से मालूम होता है। आप के दौर में "अैयामे बीज़" यानी हर माह की तेरहवीं, चौदहवीं और पन्द्रहवीं तारीख़ के रोज़े फ़र्ज़ थे। यहूद और नसारा भी रोज़े रखते थे, यूनानियों के यहां भी रोज़ा का वजूद मिलता है।

हिन्दू धर्म, बुध मज़हब में भी बरत (रोज़ा) मज़हब का रुक्न है और पारसियों के यहां भी रोज़े को बेहतरीन

इबादत समझा गया है, अलग़रज़ दुनिया के तमाम मज़ाहिब में रोज़े की फ़ज़ीलत और अहमियत पाई जाती है। और हज़रत आदम अलैहिस्सलाम से ले कर ख़ातिमुन्नबीयीन हज़रत मुहम्मद (स.अ.व.) तक हर क़ौम व मिल्लत में रोज़े का वजूद किसी न किसी शक्ल में मिलता है।

रोज़ा कब फ़र्ज़ हुआ?

नबी करीम (स.अ.व.) नुबूवत मिलने के बाद तेरा साल तक मक्का मुअज़्ज़मा ही में लोगों को ख़ुदाए पाक का हुक्म सुनाते और तबलीग़ करते रहे और बहुत ज़माने तक सिवाए ईमान लाने और बुत परस्ती छोड़ने के अलावा कोई दूसरा हुक्म न था। फिर आहिस्ता आहिस्ता अल्लाह तआला के यहां से अहकाम आने शुरू हुए। इस्लाम के अरकान में सब से पहले नमाज़ फ़र्ज़ हुई फिर मक्का मुअज़्ज़मा से हिजरत फ़रमाने के बाद जब आप मदीना मनौवरा तशरीफ़ लाए। तो वहां बहुत से अहकामात आने शुरू हुए, उन्ही में से एक हुक्म रोज़े का भी था।

रोज़े की तकलीफ़ चूंकि नफ़्स पर शाक़ गुज़रती है इसलिए उसको फ़रज़ीयत में तीसरा दर्जा दिया गया। इस्लाम ने अहकाम की फ़रज़ीयत में ये रविश इख़्तियार की कि पहले नमाज़ जो ज़रा हल्की इबादत है। इस को फ़र्ज़ किया, उसके बाद ज़कात को और ज़कात के बाद रोज़ा को। सब से पहले आशूरा यानी मुहर्रम की दस तारीख़ का रोज़ा फ़र्ज़ था उसके बाद रमज़ान शरीफ़ के रोज़ों का हुक्म हुआ और आशूरा की फ़रज़ीयत ख़त्म हो गई।

रोज़े के अन्दर शुरू में इतनी सहूलत और रिआयत

थी कि जिसका जी चाहे रोज़ा रख ले और जो चाहे एक रोज़ा के बदले किसी ग़रीब को एक दिन का खाना खिला दे, अल्लाह तआ़ला ने अपने बंदों की कमज़ोरियों पर नज़र फ़रमाते हुए आहिस्ता आहिस्ता रोज़ों की आदत डलवाई। चुनांचे जब कुछ ज़माना गुज़र गया और लोगों को रोज़ा रखने की कुछ आदत हो गई तो माज़ूर और बीमार लोगों के सिवा बाक़ी सब लोगों के हक़ में ये इख़्तियार ख़त्म कर दिया गया और हिजरत से डेढ़ साल बाद दस शाबान 2 हिजरी को मदीना मनौवरा में रमज़ान के रोज़ों की फ़रज़ीयत का हुक्म नाज़िल हुआ और इनके अलवा कोई रोज़ा फ़र्ज़ न रहा। इसका फ़र्ज़ होना किताब व सुन्नत और इजमा से साबित है।

(किताबुलफ़िक्ह अललमज़ाहिबिलअरबा जिल्द–1 सफ़्हा–872 व जिल्द–1 सफ़्हा–875 ज़ादुलमआ़द जिल्द–1 सफ़्हा–160)

रोज़ा का फ़ल्सफ़ा

ये एक हक़ीक़त है कि इंसान अशरफ़ुलमख़लूक़ात है, और उसकी रफ़अ़त व अज़मत और तसल्लुत व इक़्तिदार के आगे तमाम काएनात सर निगूँ है, लेकिन ये बात बहुत ही कम लोग जानते हैं कि इंसान के इस शर्फ़ व एज़ाज़ और अज़मत व इक़्तिदार का मेयार और सबब क्या है?

इंसान का शर्फ़ व एज़ाज़ इस बात में है कि वह नफ़्से सरकश को क़ाबू में ला कर अपनी ख़्वाहिशात पर ग़ालिब आ कर फ़राइज़े अबदीयत बजा लाए और अपना मनशाए तख़लीक़ पूरा करे, मारिफ़ते इलाही और रज़ाऐ ख़ुदावंदी की तलाश व जुस्तुजू उसका मुक़द्दम और अह

फ़रीज़ा है, अगर एक इंसान अपने इस फ़र्ज़े अब्दीयत से ग़ाफ़िल और ना–बलद है तो वह ख़सारे में है, उस चीज़ को अल्लाह तआ़ला ने इस तौर पे फ़रमाया– "قَدْ اَفْلَحَ مَنْ تَزَكّٰی" यानी जिसने अपने नफ़्स को पाकीज़ा कर लिया उसने फ़लाह पाई और जिसने ऐसा न किया उसने अपने आपको तबाह किया, इससे मालूम हुआ कि शरीफ़ और मुअज़्ज़ज़ और सआ़दतमंद इंसान वह है जो अपने नफ़्स पर क़ाबू हासिल करे, और उसे पाकीज़ा बनाए, और नफ़्स को क़ाबू में करने के लिए तीन चीज़ों की ज़रूरत है, औवल ये कि– नफ़्स को तमाम शहवतों और लज़्ज़तों से रोका जाए क्योंकि जब सरकश घोड़े को दाना घास न मिले तो वह ताबेअ़ हो जाता है। इसी तरह नफ़्स की सरकशी भी दूर होती है। दोमः उस पर इबादत का बहुत सा बोझ लाद दिया जाए, जिस तरह जानवर को दाना घास कम मिले और उस पर बोझ बहुत सा लाद दिया जाए तो वह नर्म हो जाता है, यही हाल नफ़्स का है। सोमः हर वक़्त ख़ुदा तआ़ला से मदद चाहें, ज़रा ग़ौर तो फ़रमाऐं यही तीन बातें रोज़े में बदर्जए अतम व अकमल रखी गई हैं, इससे मालूम हुआ कि नफ़्स की कूवत तोड़ने के लिए और अपनी तमाम कूवतों को एतेदाल में लाने के लिए हमें रोज़े रखने का हुक्म हुआ है।

एक फ़ल्सफ़ा ये भी है कि मुसीबत ज़दा इंसान ही किसी की परेशानी व दुख का सही एहसास कर सकता है, और रोज़े से ये बात पाई जाती है कि बड़े से बड़े सरमायादार, दौलतमंद को भी जब एक बार भूक व प्यास का ज़ाएक़ा (रोज़े की वजह से) चखने का मौक़ा मिलता

है, और जब अपने मासूम, नन्हे बच्चों के रोज़े के मौक़ा पर उनकी मुतग़य्यर हालत देखता है तो उसको गुरबत ज़दा लोगों की भूक व प्यास का एहसास होता है, और ये जज़्बा भी दिल के किसी गोशे में उभरने लगता है कि इन मफ़लूकुलहाल भूके प्यासे लोगों की सदक़ा व ख़ैरात से मदद की जाए। दौलतमंद ख़ुश हाल को अगर रोज़े में भूक व प्यास की तकलीफ़ न बरदाश्त करनी पड़ती तो सारी उम्र गुज़रने पर भी भूक व प्यास का एहसास न होता, और अगर कोई भूका ज़रूरतमंद उसके सामने हाथ फैलाता और अपनी तकलीफ़ व परेशानी का इज़हार कर के कुछ तलब करता तो चूंकि दौलतमंद को फ़ाक़े की तकलीफ़ मालूम ही नहीं इसलिए वह उस पर कैसे रहम खाता। बरख़िलाफ़ रोज़ा रखने के कि उसकी वजह से ग़रीबों, मुहताजों और यतीमों की दस्तगीरी का जज़्बा पैदा होता है, और उनके साथ हमदर्दी व ईसार जैसी ख़ूबियों का वजूद अमल में आता है।

रोज़े के जिस्मानी और रूहानी फ़वाइद

अगर दुनियावी और जिस्मानी एतेबार से देखा जाए तो मालूम होगा कि रोज़ा मुसलमानों को चुस्त व चालाक, साबिर व शाकिर, एक दूसरे के लिए हमदर्द व ग़मगुसार और एक मज़बूत व मुनज़्ज़म क़ौम बनाने में बेहतरीन ज़रीआ है। अगर रोज़े की हक़ीक़त को मद्दे नज़र रख कर पाबंदी व ख़ुलूसे दिल के साथ रोज़ा रखें तो हिर्स, तमअ़ और शिकम परवरी का माद्दा उनमें से बिल्कुल चला जाए और इंसानी लिबास में फ़रिश्ते नज़र आयें, नीज़ उसके ज़रीआ नज़्म व ज़ब्त की वह कूवत हासिल हो कि दुनिया

की तमाम ताक़तें उनके सामने सर निगूँ हो जाएँ।

उसूले तिब की रू से रोज़ा जिस्मानी सेहत हासिल करने का बेहतरीन ज़रीआ है, इसलिए कि ग्यारह महीने तक जो ख़राब और फ़ासिद रुतूबतें जिस्म में जमा हुईं वह एक माह के रोज़े से सब ख़ुश्क हो जाती हैं, सेहत व तवानाई में नुमायां तरक़्क़ी होती है, इसके अलावा रोज़े में और बहुत से जिस्मानी और माद्दी फ़ाएदे हैं। जहां तक रूहानी फ़वाएद का तअ़ल्लुक़ है तो वह भी बेशुमार और अनगिनत हैं। मसलन फ़रिश्ते खाने पीने और जिमाअ़ करने से पाक और मुनज़्ज़ह हैं, इसी तरह अल्लाह तआ़ला भी इन ख़्वाहिशात से पाक व मुनज़्ज़ह है। इसलिए रोज़ा रखने से इंसान थोड़ी देर के लिए इस मलकूती सिफ़त में नज़र आता है और उस वक़्त "تَخَلَّقُوْا بِاَخْلَاقِ اللّٰه" का भी एक मुज़ाहरा होता है।

रोज़े से अख़लाक़ व रूहानियत की क़ूवतें पैदा होती हैं और दिल व दिमाग़ रौशन हो जाते हैं। भूक प्यास की तकलीफ़ गुनाहों का कफ़्फ़ारा हो जाती है और इंसान ज़ब्ते नफ़्स के एतेबार से मुकम्मल इंसान बन जाता है। रोज़े से मिज़ाज में इज्ज़ व इंकिसारी आ जाती है, भूक की मुसीबत और तकलीफ़ का अंदाज़ा होता है, और इसकी वजह से बनीनौए इंसान की मुसीबत और तकलीफ़ का अंदाज़ा कर के इमदाद का जज़्बा पैदा होता है।

रोज़ेदार हर वक़्त अल्लाह की इबादत में शुमार होता है, क्योंकि जब रोज़े दार को भूक प्यास लगती है और उसका नफ़्स खाने पीने का तक़ाज़ा करता है तो उसका दिल बराबर शाम तक यही कहता रहता है कि नहीं अभी

अल्लाह की इजाज़त नहीं है। उसका दिल हिम्मत व इस्तिक़लाल के साथ अल्लाह की तरफ़ मुतवज्जेह रहता है और दिल का अल्लाह की तरफ़ मुतवज्जेह होना ही सब इबादतों की जान है। अलग़रज़ रोज़ा एक बड़ी आला दर्जा की इबादत है।

फ़ज़ीलते रोज़ा

फ़ज़ाइल की किताबों में इसका मुफ़स्सल ब्यान आया है। बतौर नमूना तीन अहादीस पेश कर के मसाइले रोज़ा ब्यान करना है।

नबी करीम (स.अ.व.) ने इरशाद फ़रमाया जिसने रमज़ान के रोज़े महज़ अल्लाह के लिए समझ कर रखे तो उसके सब अगले गुनाहे सग़ीरा बख़्श दिये जाएँगे।

आप (स.अ.व.) का इरशादे मुबारक है कि रोज़ेदार के मुंह की बदबू अल्लाह के नज़दीक मुश्क की ख़ुशबू से भी ज़्यादा प्यारी है, क़यामत के दिन रोज़े का बेहद सवाब मिलेगा।

बुख़ारी शरीफ़ में रिवायत है कि रोज़ादारों के लिए क़यामत के दिन अर्श के नीचे दस्तरख़्वान चुना जाएगा और वह लोग उस पर बैठ कर खाना खाएँगे और सब लोग अभी हिसाब ही में फंसे होंगे। इस पर वह कहेंगे कि ये लोग कैसे हैं कि खा पी रहे हैं। और हम अभी हिसाब ही में फंसे हुए हैं। उनको जवाब मिलेगा कि ये लोग रोज़ा रखा करते थे और तुम लोग रोज़ा नहीं रखते थे।

तशरीह: रोज़े की निस्बत अल्लाह तआला का क़ानून तमाम इबादतों से अलग थलग है, क्योंकि तमाम इबादतों का सवाब फ़रिश्तों के ज़रीआ इस से सात सौ गुना तक

दिलवाया जाएगा। लेकिन रोज़ा ही एक ऐसी इबादत है जिसके बारे में इरशाद हुआ है कि–

"रोज़े का बदला मैं ख़ुद देता हूं।" फ़रिश्तों का भी वास्ता न होगा, इससे ज़्यादा रोज़ेदारों के लिए और क्या ख़ुशी हो सकती है कि वह अपनी इबादतों का बदला अपने मालिक के मुबारक हाथों से पायेंगे, किसी ग़ैर को दख़ल तक न होगा, दुन्यवी ज़िन्दगी में हम देखते हैं कि जो चीज़ सरकारी हुक्काम के ज़रीआ तक़्सीम कराई जाए उसमें और बादशाह या वज़ीरआज़म के हाथ से दी हुई चीज़ में कितना फ़र्क़ होता है।"

ज़रा ग़ौर फ़रमाइये कि क़यामत के दिन उस हौलनाक वक़्त में जब कि अवाम तो अवाम बल्कि अंबिया व औलिया तक ख़ुदा की अज़मत व जलाल से सहमे होंगे। और ख़ुदा की मख़लूक़ अपने गुनाहों की वजह से सख़्त पसीने में होगी, कोई घुटने तक, कोई पूरे का पूरा पसीने में डूबा हुआ होगा, और ये सूरज जिसकी तपिश आज इतनी दूर से परेशान किये देती है, उस दिन बिलकुल सरों के ऊपर खड़ा हुआ दिमाग़ खौला रहा होगा। ऐसे नाज़ुक वक़्त में ख़ुदाए पाक का ख़ुद अपना कलाम किसी की शिफ़ाअत करे और रोज़े जैसा मुबारक अमल किसी बंदे को बख़्शवाए, तो ऐसे वक़्त में जब कि डूबते हुए को तिनके का सहारा भी बहुत है, सिफ़ारिशों का मिल जाना किस क़दर क़ीमती नेअ़मत होगा।

मोहतरम व मुकर्रम! इन अहादीस के पढ़ने और सुनने के बावजूद भी रोज़ा रखने का शौक़ व जोश ख़ुदा न ख़ास्ता पैदा न हो तो यक़ीनन वह दिल पत्थर से ज़्यादा

सख़्त और गुनाहों की कसरत से दिल बिलकुल ज़ंग आलूद है, उसको सिद्क़े दिल से तौबा करनी चाहिए।

उम्मीद है कि ख़ुदाए रहीम व करीम उसके गुनाह बख़्श देगा और उसके दिल को साफ़ कर के उसकी सख़्ती को नर्मी से बदल देगा।

दूसरा बाब

रुयते हिलाल के मसाइल

इस्लाम के उसूल

इस्लाम के उसूल सादा और नज़री हैं उसने मुख़्तलिफ़ इबादातों और तेहवारों के औक़ात के लिए ऐसी चीज़ों को मेयार बनाया है जिनका समझना और जानना हर आम व ख़्वास और नख़्वाँदा व तालीम याफ़्ता आदमी के लिए मुम्किन है, उसी का एक जुज़ ये है कि उसने क़मरी महीनों के बारे में तकल्लुफ़ात से काम लेने के बजाए चांद देखने या महीने के तीस दिन मुकम्मल करने को "कसौटी" क़रार दिया है, उसकी वजह ज़ाहिर है कि एक तो इस्लाम का मिज़ाज ही ऐसी तकल्लुफ़ आमेज़ तहक़ीक़ात का उन उमूर में नहीं है जिनका हर ख़ास व आम आदमी से तअल्लुक़ हो।

दूसरे अह्ले फ़न की रायें भी एक दूसरे से मुख़्तलिफ़ होती हैं और कभी ग़लत भी साबित होती हैं। जैसा कि आये दिन जनत्रियों और तक़वीमों में इसका मुशाहदा होता रहता है। इसीलिए हमारे इमाम आज़म (रह.) का ये मसलक है कि फ़लकीयाती उलूम और हिसाब पर ईद व रमज़ान का फ़ैसला दुरूस्त नहीं, हां हिजरी सन को राएज करने के लिए ऐसे महीनों में ऐसे फ़न्नी अंदाज़ों का एतेबार

किया जा सकता है, जिसकी किसी ख़ास तारीख़ से कोई शरई इबादत मुतअ़ल्लिक़ न हो।

(जदीदी फ़िक़्ही मसाइल जिल्द–1, सफ़्हा–88)

रूयत के दो जुज़

चाँद के सिलसिले में ये बात समझ लेनी चाहिए कि इस सिलसिले के दो जुज़ हैं, चाँद देखना और चाँद देखने की शहादत। पहले जुज़ के सिलसिले में जो लोग कहते हैं कि हवाई जहाज़ में उड़ कर या दूरबीन से चाँद देख लेने में कोई मुज़ाएक़ा नहीं होना चाहिए, उन्हें दरअस्ल सब से बड़ी ग़लत फ़ह्मी ये हो गई है कि मस्अला चाँद के वजूद का है। हालांकि ये क़तअन ग़लत है, क्योंकि शरीअ़त में "वजूदे चाँद का एतेबार नहीं है।" बल्कि मोतबर चाँद की रूयत (चाँद का खुली आँखों देखना) है। यानी शरीअ़ते इस्लाम ने जिन मआ़मलात का मदार चाँद के होने पर रखा है उसमें "फ़ौक़ल उफ़ुक़" चाँद का वजूद काफ़ी नहीं है, बल्कि उसका क़ाबिले रूयत होना और आम आँखों से देखा जाना ज़रूरी है। क्योंकि ये बात हर पढ़ा लिखा शख़्स जानता है कि चाँद किसी वक़्त और किसी दिन भी मादूम नहीं होता, बल्कि अपने मदार में कहीं न कहीं मौजूद होता है। लिहाज़ा अगर आलाते जदीदा के ज़रीए चाँद देखना काफ़ी हो जाए तो उसके लिए उनतीस व तीस तारीख़ ही की क्या शर्त ज़रूरी होगी। बल्कि हवाई जहाज़ में उड़ कर किसी बुलंद उफ़ुक़ से ऐसी दूरबीनों के ज़रीए जो आफ़ताब की शुआ़ओं को इंसानी निगाहों के दरमियान हाएल न होने दें। सत्ताईस या अट्ठाईस को भी चाँद देखा जा सकता है।

लिहाज़ा मालूम हुआ कि इन तमाम मआमलात में जिन का मदार चाँद पर होता है और जिन में रमज़ान व ईदैन भी शमिल हैं मशरूई तौर पर इसका एतेबार नहीं किया गया है कि चाँद उफुक़ पर मौजूद हो, बल्कि मोतबर ये है कि चाँद क़ाबिले रूयत हो और आम आँखों से देखा जाए।

(हाशिया मज़ाहिरे हक़ जदीद जिल्द–2, सफ़्हा–87)

चाँद देखने की कोशिश फ़र्ज़े किफ़ाया

मुलसलमानों पर ये अम्र बतौर फ़र्ज़े किफ़ाया आएद होता है, कि शाबान और रमज़ान की उनतीस तारीख़ को गुरूबे आफ़ताब के वक़्त चाँद देखने की कोशिश की जाए। क्योंकि रमज़ान का चाँद और रोज़ा अरकाने दीन में से है जो चाँद देखने पर मौक़ूफ़ है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–892)

रूयते हिलाल के लिए दूरबीन का इस्तेमाल

सवाल: माहे हिलाले ईद व रमज़ान के लिए दूरबीन इस्तेमाल करन कैसा है?

जवाब: दूरबीन महज़ एक निगाह को बढ़ाने वाला आला है, जैसा कि ऐनक (चश्मा), उससे देखने में कोई हरज नहीं हाँ अगर कोई ऐसी दूरबीन ईजाद हो जाए कि चाँद उफुक़ के पीछे होने के बावजूद नज़र आ जाए तो ये जाइज़ नहीं, क्योंकि चाँद व सूरज हमेशा उफुक़ पर रहते हैं। (इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–109)

रूयते हिलाल के लिए हवाई जहाज़ का इस्तेमाल

अह्दे रिसालत (स.अ.व.), ख़िलाफ़ते राशिदा और ख़ैरुलकुरून के मामूल की बिन पर हमारे नज़दीक किसी

तरह ये मुस्तहसन और पसंदीदा नहीं है कि हवाई जहाज़ में उड़ कर चाँद देखने का एहतेमाम किया जाए। उसके ये मआ़ना नहीं कि इत्तिफ़ाक़ी तौर पर कोई हवाई जहाज़ का मुसाफ़िर चाँद देख ले और आ कर शहादत दे तो उसकी शहादत क़बूल न की जाए क्योंकि उसकी शहादत रद करने की कोई वजह नहीं, बल्कि नीचे की हवा में गर्द व गुबार और बुख़ारात की वजह से मुस्तबअद नहीं कि चाँद नजर न आए और बुलंद जगह पर हवा साफ़ होने की वजह से नज़र आ जाए।

शर्त ये है कि हवाई परवाज़ इतनी ऊँची न हो कि जहाँ तक ज़मीन वालों की नज़रें पहुंच ही न सकें, क्योंकि शरअ़न रूयत वह ही मोतबर है कि ज़मीन पर रहने वाले अपनी आँखों से देख सकें, इसलिए अगर बीस हज़ार फ़िट की बुलंदी पर परवाज़ कर के कोई शख़्स चाँद देख आए तो उस बस्ती (शहर) के लिए रूयत मोतबर नहीं जिसको आ़म इंसान बावजूद मतलअ़ साफ़ होने उसको नहीं देख सके। (आलाते जदीदा सफ़्हा–186)

चाँद के बारे में नुजूमी की राए ग़ैर मोतबर

रूयते हिलाल के बारे में नुजूमी यानी सितारा शनास की बात क़ाबिले एतेबार नहीं है, लिहाज़ा उनके हिसाब की बिना पर लोगों को रोज़ा रखना ज़रूरी नहीं है। क्योंकि शारेअ़ अलैहिस्सलाम ने रोज़े को मुक़र्ररा अलामतों के साथ वाबस्ता किया है। जिसमें कोई तबदीली नहीं हो सकती, और वह अलामतें हिलाल का नज़र आना, या माहे शाबान के तीस दिन का पूरा हो जाना हैं। नुजूमियों का क़ौल ख़्वाह कितना ही दक़ीक़ नज़रीयात की बिना

पर हो उन में क़तईयत नहीं पाई जाती, क्योंकि अक्सर औक़ात उनकी रायें बाहम मुख़्तलिफ़ होती हैं।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–892)

एक आम ग़लत फ़हमी!

शरीअ़त में रजब की चौथी तारीख़ का कोई एतेबार नहीं, ये जो मशहूर हैं कि जिस दिन रजब की चौथी तारीख़ होगी उस दिन रमज़ान की पहली तारीख़ होती है शरीअ़त में इसका एतेबार नहीं, अगर चाँद न हो तो रोज़ा नहीं रखना चाहिए। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–5)

चाँद के होने न होने में पंडित की बात का एतेबार नहीं

चाँद देख कर ये कहना कि ये चाँद बहुत बड़ा है, कल का मालूम होता है, ये बुरी बात है। हदीस में आया है कि– "ये क़यामत की निशानी है, जब क़यामत क़रीब होगी तो लोग ऐसा किया करेंगे।" ख़ुलासा ये है कि चाँद के बड़े छोटे होने का भी एतेबार न करो और न हिन्दुओं की इस बात का एतेबार करो कि आज दूज है आज ज़रूर चाँद है। शरीअ़त में ये सब बातें वाहियात का दर्जा रखती हैं, जिनका कोई एतेबार नहीं।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्स–3 सफ़्हा–5, बहवाला मिश्कात सफ़्हा–174)

शहादत क्या है?

शहादत के सिलसिले में मुख़्तसर तौर पर ये बात जान लेनी ज़रूरी है कि– "ख़बर और शहादत" दो अलग अलग चीज़ें हैं। बाज़ बातें ऐसी होती हैं जो– "ख़बर" होने की हैसियत से तो मोतबर और क़ाबिले एतेमाद होती हैं, मगर बहैसियते शहादत नाक़ाबिले क़बूल हाती हैं। इन

दोनों में ये फ़र्क़ इस्लाम ही में नहीं, बल्कि हमारी इस दुनिया में क़ानूनी तौर पर ये फ़र्क़ मुसल्लम है। तार, टलीफून, रेडियो, टी0 वी0, अख़बार और ख़ुतूत के ज़रीए जो ख़बरें आती हैं अगर उनका मोतबर होना मालूम हो तो बहैसियते ख़बर सारी दुनिया में क़बूल की जाती हैं और उन पर एतेमाद करते हुए सारे काम अंजाम पाते हैं लेकिन किसी मुक़द्दमा और मआमले की शहादत की हैसियत से इन ख़बरों को दुनिया की कोई अदालत तस्लीम नहीं करती, बल्कि ये ज़रूरी होता है कि गवाह मजिस्ट्रेट के सामने हाज़िर हो कर शहादत दे, ताकि गवाही और शहादत के जो उसूल हैं उन पर उनको परखा जा सके और शहादत के सही और ग़लत होने का कोई फ़ैसला किया जा सके। इस फ़र्क़ को जान लेने के बाद मालूम होना चाहिए कि आम तौर पर रूयते हिलाल के मआमले को शरीअत ने शहादत का मआमला क़रार दिया है और शहादत का ये ज़ाब्ता है कि वह उस वक़्त तक क़ाबिले क़बूल नहीं होती जब तक शहादत की शराइत के मुताबिक़ न हो।

शहादते हिलाल की इब्तिदाई तीन शर्तें तो वही हैं जो तमाम मआमलात की शहादत के लिए शर्त हैं यानी गवाह का आक़िल, बालिग़ और बीना होना। चौथी शर्त गवाह का मुसलमान होना, और पाँचवीं शर्त जो सब से अहम है वह उसका आदिल होना है। और आदिल उस शख़्स को कहते हैं जो गुनाहे कबीरा से महफ़ूज़ हो और सग़ीरा गुनाह पर इसरार न करता हो। नीज़ उसकी ज़िन्दगी में रास्त बाज़ी (सच्चाई), साफ़ गोई और नेकोकारी का पहलू

ग़ालिब हो, और दुनिया की नज़रों में वह क़ाबिले एतेमाद समझा जाता हो। छटी शर्त– लफ़्ज़े शहादत का इस्तेमाल है, यानी शाहिद इस तरह कहे कि मैं शहादत देता हूं कि फ़लां वाक़िआ इस तरह हुआ है। सातवीं शर्त ये है कि जिस वाक़िआ की शहादत दे रहा हो उनका बचश्मे ख़ुद शाहिद है।

महज़ सुनी सुनाई बात न हो। और आठवीं शर्त, "मजलिसे क़ज़ा" हो यानी शाहिद के लिए ज़रूरी है कि क़ाज़ी की मजलिस में ख़ुद हाज़िर हो कर शहादत दे। पसे पर्दा या दूर से बज़रीआ ख़त या टेलीफून, वाएरलेस और रेडियो, टी0 वी0 वग़ैरा के ज़रीए से कोई शख़्स शहादत दे तो उसे शहादत नहीं कहेंगे बल्कि वह ख़बर का दर्जा पाएगी।

(हाशिया मज़ाहिरे हक़ जदीद जिल्द–2 सफ़्हा–88)

रूयते हिलाल में रेडियो का शरई हुक्म

रेडियो के ज़रीए से आमदा इत्तिलाआत व एलानात का शरई हुक्म ये है कि अगर ये एलानात व इत्तिलाआत शरई उसूल व ज़वाबित के मुताबिक़ आ जाएँ ख़्वाह किसी ख़ित्तए मुल्क से आ जाऐं। सुबूत के लिए शरअन काफ़ी होंगे, मसलन किसी मरकज़ी शहर में जहां का मतला साफ़ रहता हो गुबार आलूद न रहता हो और वहां रेडियो स्टेशन भी हो, हुकूमत की जानिब से ये इंतिज़ाम करा लिया जाए कि कोई मुसलमान हाकिम शहादते शरई के ज़रीए रूयत का सुबूत हासिल कर के बईं अलफ़ाज़ ये एलान कर दिया करे कि रूयत का सुबूते शरई हासिल कर के ये एलान किया जाता है कि कल यौमे फ़लाँ से

मसलन यकुम रमज़ान है, या यकुम शौवाल है, तो ये एलान मोतबर होगा और उस पर अमल करना उसूले मज़हब के मुताबिक़ सही और दुरुस्त होगा। सिर्फ़ इस बात को मलहूज़ रखना होगा कि उस एलान पर अमल करने से महीना बजाए उनतीस व तीस दिन का होने के अट्ठाईस या इकतीस दिन का न हो रहा हो।

अगर हुकूमत की तरफ़ से ऐसा बाक़ाएदा नज़्म न हो सके तो आपसी इंतिज़ाम से एक हिलाल कमेटी बनाई जाए, जिसके सब अफ़राद बाशरअ़ मुसलमान हों और उसमें एक समझदार आलिम को भी जो मसाइले मुतअल्लिक़ा से बख़ूबी वाक़िफ़ हो, शरीक कर लिया जाए, ताकि तमाम शरई कारवाई बावसूक़ तरीक़े से मुकम्मल हो सके। वह शरई हिलाल कमेटि, रूयते हिलाल का सुबूत हासिल कर के रेडियो स्टेशन से अपनी निगरानी में एलान नश्र करवाए कि रूयते हिलाल का शरई सुबूत फ़राहम कर के ये एलान किया जाता है। कल सुब्ह ईद है, मसलन या इस वक़्त से माहे रमज़ान की शब होगी सुब्ह से रोज़े रखे जाऐं।

इस दूसरी सूरत में हुकूमत से सिर्फ़ इतना काम लेना है कि हुकूमत और प्रोग्रामों के साथ इस प्रोग्राम के नश्र होने की मंजूरी कर दे और हिलाल कमेटी का कोई मुस्लिम वकील या मुस्लिम नुमाइंदा वहां पहुंच कर एलान कर दिया करे। रेडिया स्टेशन उमूमन इस क़िस्म की ख़बरें व एलानात ख़ुद नश्र करते रहते हैं उनको इसके मंजूर करने में कुछ दिक़्क़त न होगी। सिर्फ़ इतना लिहाज़ करना होगा कि इस नशरीया के अलफ़ाज़ शरई होंगे। जिसको हिलाल कमेटी ख़ुद मुरत्तब कर देगी।

अगर हुकूमत ग़ैर मुस्लिम से भी ये इंतिज़ाम करा लिया जाए जब भी शरअ़न नाफ़िज़ व सही होगा और सारे मुसलमान इसके मुताबिक़ आसानी से अमल कर सकेंगे। अगर ये इंतिज़ाम कर लिया गया तो मुस्तक़िल हल निकल आएगा और ख़त व टेलीफून सब से ज़्यादा क़वी व इत्मीनान बख़्श होगा और हर तरह के शरई उसूल व ज़वाबित के मुताबिक़ होगा।

(निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–82)

रेडियो की ख़बर के मुतअ़ल्लिक़ हिन्दुस्तान के मुस्तनद उलमा का फ़ैसला

रेडियो की ख़बर एक एलान की हैसियत रखती है, ये एलान अगर रूयते हिलाल की बाज़ाब्ता कमेटी की जानिब से हो जो चाँद होने की बाक़ाएदा शहादत लेकर चाँद का फ़ैसला करती है, या किसी ऐसे शख़्स की जानिब से हो जिसको वहां के मुसलमानों ने क़ाज़ी या अमीरे शरीअ़त की हैसियत से मान रखा है और वह बाज़ाब्ता शहादत लेकर फ़ैसला किया करता है और एलान करने वाला ख़ुद क़ाज़ी या अमीरे शरीअ़त या रूयते हिलाल कमेटि का सदर या कमेटी का मोतमद मुस्लिम नुमाइंदा हो तो मक़ामी कमेटी या क़ाज़ी या अमीर के लिए जाइज़ होगा कि वह उस पर एतेमाद कर के रूयते हिलाल का फ़ैसला कर दे। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–186, बहवाला रूयते हिलाल रमज़ान व ईद के मसाइल व दलाइल सफ़्हा–96)

रूयते हिलाल में टेलीफून का शरई हुक्म

उन मवाक़े पर जिनका तअ़ल्लुक़ ख़बर व इत्तिला से

है टेलीफ़ोन का भी एतेबार है, लेकिन जहां शहादत और गवाही मतलूब है वहां महज़ फून काफ़ी नहीं है, रूबरू हाज़िरी ज़रूरी है, ऐसे मवाक़े पर इस तदबीर पर अमल करना चाहिये कि दारुलक़ज़ा या रूयते हिलाल कमेटी की जानिब से मुख़्तलिफ़ अहम मक़ामात पर ऐसे ज़िम्मादार मुअैयन हों जो रूयते हिलाल की गवाही ले लें और फिर फून के ज़रीए मरकज़ को उसकी इत्तिला कर दें।

ख़त व तार और टेलीफून की ख़बर के सिलसिले में मजलिसे तहक़ीक़ाते शरईया नदवतुलउलमा का फ़ैसला हस्बे ज़ैल है–

तार व ख़त, टेलीफून की ख़बर मोतबर नहीं है, हां अगर ख़ुसूसी इंतिज़ाम के तहत मुतअद्दद जगहों से फून और ख़त आयें और उलमा कहें कि उनसे ज़न्ने ग़ालिब पैदा होता है तो इस बुनियाद पर उलमा का फ़ैसला क़ाबिले क़बूल होगा।

(जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा–86, 89)

टेलीफून के बारे में मौलाना थानवी का फ़तवा

जिन अहकाम में हिजाब मानेअ़ए क़बूल है उसमें (टेलीफून) का वास्ता ग़ैर मोतबर है और जिन में हिजाब मानेअ़ नहीं उनमें अगर क़राइने क़वीया से मुतकल्लिम की तअ़यीन हो जाए कि फ़लाँ शख़्स बोल रहा है तो मोतबर है।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–78)

मुतअद्दद जगहों से टेलीफून आने का हुक्म

जब मुतअ़द्दद जगह से या किसी एक ऐसे शहर से जहां नामवर उलमा और मुफ़्तियाने किराम हों। मुख़्तलिफ़ लोगों के ये बयानात मौसूल हों कि हम ने ख़ुद चाँद

देखा है, या हमारे शहर के क़ाज़ी या हिलाल कमेटी के सदर या मुफ़्ती या मोतमद अलैह शख़्स ने शहादत सुन कर चाँद होने का फ़ैसला दिया है।

और जब ऐसे ब्यान देने वालों की तादाद इतनी कसीर हो जाए कि अक़लन उनके झूट बोलने का कोई एहतेमाल बाक़ी न रहे, और ख़बर मुस्तफ़ीज़ के दर्जे में आ जाए, और उन ख़बरों के सही होने का यक़ीन या ग़लबए ज़न मक़ामी क़ाज़ी या हिलाल कमेटी के सदर या मोतमद अलैह शख़्सियत को हासिल हो जाए। तो उनको ईद के चाँद का एलान करने का भी हक़ हासिल हो जाएगा। एक दो फ़ून काफ़ी न होंगे और यही ख़त का हुक्म है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–189)

रूयते हिलाल में ख़त का शरई हुक्म

ख़त का हुक्म ये है कि अगर ख़त लिखने वाले ने दो मोतबर व सिक़ह वाले मुसलमानों के सामने ख़त लिख कर और उन दोनों को उस पर शाहिद बना कर ख़त के हमराह भेजा है और ये दोनों ख़त लाने वाले ख़त ला कर शहादत दें कि कातिब ने हमारे सामने ये ख़त लिखा है तो ये ख़त मोतबर और हुज्जत बनेगा, पस ये ख़त लिखने वाला क़ाज़ी शरई, या उसका क़ाइम मक़ाम (जैसे रूयते हिलाल कमेटी वग़ैरा है) और उस ख़त में सुबूते रूयत की इत्तिला लिखी है, तो उस ख़त पर अमल करना वाजिब होगा। हाँ अगर मुख़्तलिफ़ मक़ामात से मुख़्तलिफ़ आदमियों के ख़त रूयते हिलाल के सुबूत के सिलसिले में इतनी तादाद में आ जाऐं, कि इनकार की गुंजाइश न रहे तो इस सूरत में उसका भी एतेबार हो जाएगा और मुफ़ीद

रूयत बन जाएगा। (निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–131)

तार की शरई हैसियत

महज़ तार या ख़त की ख़बर पर एतेमाद कर के रोज़ा रखने या इफ़्तार करने का शरअ़न हुक्म नहीं है, अलबत्ता अगर तार या ख़त की वह ख़बर मुसद्दक़ हो जाए या दूसरे क़राइने सिद्क़ के साथ मुऐयद हो जाए तो अमल करना दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–376)

जंतिरी का शरई हुक्म

उनतीस शाबान को अब्र की वजह से किसी ने चाँद नहीं देखा और जंतिरी वग़ैरा में उनतीस का चाँद लिखा है और सब लोगों का यही ख़्याल है कि चाँद उनतीस का होगा, इस सूरत में जंतिरी और तार पर एतेबार कर के यकुम रमज़ान की तारीख़ मान लेना दुरुस्त है या नहीं?

इस सूरत में तीस दिन शाबान के पूरे कर के उसके बाद यकुम रमज़ान को क़ाइम करना चाहिए, जैसे कि हदीस शरीफ़ में चाँद के बारे में आया है कि– "चाँद देख कर रोज़ा शुरू करो और चाँद देख कर इफ़्तार करो।" और जंतिरी व तार पर एतेबार नहीं करना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–369, बहवाला रद्देमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–132 व मिश्कात सफ़्हा–174)

जिन मक़ामात में मुसलसल चाँद तुलूअ़ या गुरूब रहता हो वहाँ पर रमज़ान कैसे मनाऐं

जिन मक़ामात में चाँद रोज़ाना तुलूअ़ व गुरूब न होता हो, बल्कि कई कई दिन या कई कई माह मुसलसल चाँद तुलूअ़ रहता हो या गुरूब रहता हो। जैसा कि अर्ज़े

तिसईन और उसके मुज़ाफ़ात के बाज़ मक़ामात हैं, तो उन मक़ामात में किसी क़रीबी मक़ाम को (जहां चाँद दो दिन के अलावा पूरे माह में रोज़ाना तुलूअ़ व गुरूब हो कर अपना माहाना दौर पूरा कर लेता है और आसानी से उसका इल्म व मुशहदा हो सकता हो) बुनियाद बना कर माहे रमज़ानुलमुबारक का और उसकी पहली तारीख़ का तअैयुन कर के गर्दिशे लैल व नहार के मजमूआ़ के साथ मुन्तबिक़ कर लें, फिर एक मजमूआ़ को पूरी एक रात और दिन (चौबीस घंटे) क़रार दे और उसके निस्फ़े औवल को रात का हिस्सा क़रार दे कर उसके ख़त्म होने से तक़रीबन दो घंटे क़ब्ल सहरी खा कर रोज़े की नीयत कर लिया करें, और निस्फ़ सानी (जो दिन का हिस्सा शुमार होगा) पूरा होते ही रोज़ा इफ़्तार कर लें और मग़रिब वग़ैरा की नमाज़ें अदा कर लें।

(निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–78)

जहां उफ़ुक़ साफ़ न रहता हो वहां सुबूते रमज़ान का शरई तरीक़ा

सवालः जिस मुमालिक में फ़ज़ा अब्रआलूद रहती हो (मसलन बरतानिया) और रूयते शहादत का इमकान ही न हो, वहां शहादते हिलाल की क्या सूरत होगी? मुसलमानों के लिए रेडियो की इत्तिला पर रूयते हिलाल मोतबर समझना दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः जब किसी रेडियो के बारे में ये इल्म व यक़ीन हासिल हो जाए कि वह शरई सुबूत के बाद ही रूयत का एलान करता है तो उस एलान पर अमल कर लेना दुरुस्त रहेगा। बशर्ते कि उस पर अमल करने से महीना

अट्ठाइस दिन या इकतीस दिन का न होता हो।

और अगर ऐसा इल्म व यक़ीन हासिल न हो लेकिन ज़न्ने ग़ालिब हासिल हो जाए कि रूयते हिलाल का शरई सुबूत हासिल करने के बाद ही ये एलान हुआ है तो उस पर भी अमल कर लेना दुरुस्त होगा। ख़्वाह दुनिया के किसी ख़ित्ते से आए। बशर्ते कि उस पर अमल करने से महीना 28 दिन या 31 का न हो रहा हो।

और अगर ये ज़न्ने ग़ालिब भी हासिल न होता हो, लेकिन मुख़्तलिफ़ अतराफ़ व मुमालिक से सुबूते रूयत की इत्तिला इतनी तादाद में आ जाए कि उतनी तादाद में आदतन किज़्ब पर इत्तिफ़ाक़ नहीं होता तो इस्तिफ़ाज़े की सूरत बन कर उसके मुताबिक़ भी अमल कर लेना दुरुस्त है।

नोटः इन सब सूरतों में अवाम के अमल व यक़ीन या ज़न्ने ग़ालिब या इस्फ़िाज़ा क़रार देने का एतेबार न होगा। बल्कि मक़ामी रूयते हिलाल की शरई कमेटी के फ़ैसला व ज़न्ने ग़ालिब का एतेबार होगा। और अगर मक़ामी शरई रूयते हिलाल कमेटी न हो, तो वहां के ख़तीबे जामा मस्जिद व ईदगाह और वहां के मोतमद उलमा का फ़ैसला जब ज़न्ने ग़ालिब या इस्तिफ़ाज़े के हुसूल का होगा तो वह मोतबर होगा।

अगर इन मज़कूरा सूरतों में कोई सूरत मुयस्सर न हो या फ़िक़्हे हनफ़ी के उसूल पर पूरी न उतरती हो और परेशानियाँ ही हों जो सवाल में मज़कूर हैं तो ऐसी सूरत में ये करना चाहिए कि अगर उस ख़ित्ते में शाफ़ई या हंबली या मालिकी लोग रहते हों तो जो महीना 28 या

31 दिन का न होता हो, उस सूरत में भी अ़वाम ख़ुदराई न करें, बल्कि उलमाए अहनाफ़ से उसके बारे में फ़तवा हासिल करें। अगर ये़ सूरत भी मुयस्सर न हो यानी शाफ़ई, मालिकी लोग भी न बसते हों, या बसते हों मगर मज़कूरा मोतमद फ़तावा मौजूद न हों, या उनके फ़तावा आपस में मुतज़ाद हों तो फिर उलमाए अहनाफ़ ही का मोतमद फ़तवा हासिल करें, या उनके फ़िक़्ह की मोतमद किताबों से रूजूअ़ कर के इस मजबूरी की सूरत में उनका मोतमद मसलक तलाश कर के उसके मुताबिक़ अमल करें।

(निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–234 ता 236)

शहादत के मआ़मले में जो दीन का पाबंद नहीं है उसका हुक्म

जो आदमी दीन का पाबंद नहीं, बराबर गुनाह करता रहता है, मसलन नमाज़ नहीं पढ़ता, या रोज़े नहीं रखता, या झूट बोला करता है, या और कोई गुनाह करता है, शरीअ़त की पाबंदी नहीं करता, तो शरअ़ में उसकी बात का कुछ एतेबार नहीं है, चाहे जितनी क़स्में खा खा कर ब्यान करे, बल्कि ऐसे अगर दो तीन आदमी हों तो उनका भी एतेबार नहीं। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–5, बहवाला हिदाया अख़ीरैन सफ़्हा–46)

हिलाले ईद के लिए शरई ज़ाब्ताए शहादत

जब चाँद की रूयत आ़म न हो सके, सिर्फ़ दो चार आदमियों ने देखा हो, तो ये सूरतेहाल अगर ऐसी फ़ज़ा में हो कि मतला बिलकुल साफ़ हो, चाँद देखने में कोई बादल या धुवाँ या गुबार वग़ैरा मानेअ़ न हो तो ऐसी सूरत में सिर्फ़ दो तीन आदमियों की रूयत और शहादत

शरअन क़ाबिले एतेमाद नहीं होगी, जब तक कि मुसलमानों की बड़ी जमाअ़त देखने की शहादत न दे चाँद की रूयत तस्लीम नहीं की जाएगी, जो देखने की शहदत दे रहे हैं उसको उनका मुग़ालता, या झूट क़रार दिया जाएगा। हाँ अगर मतला साफ़ नहीं था, गुबार, धुवाँ, बादल वग़ैरा उफ़ुक़ पर ऐसा था जो चाँद देखने में मानेअ़ हो सकता है ऐसी हालत में रमज़ान के लिए एक सिक़ह की और ईदैन के लिए दो सिक़ह मुसलमानों की शहादत का एतेबार किया जा सकता है। (जवाहिरुलफ़िक़ह ज़िल्द–1 सफ़्हा–399)

चाँद होने की शोहरत और गवाह नदारद

शहर भर में ये ख़बर मशहूर थी कि कल चाँद हुआ, बहुत लोगों ने देखा, लेकिन बहुत ढूंढा, तलाश किया, फिर भी कोई ऐसा आदमी नहीं मिला ज़िसने ख़ुद चाँद देखा हो ऐसी ख़बर का कोई एतेबार नहीं है।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–5, बहवाला रद्देमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–145)

तन्हा चाँद देखने वाले की गवाही कुबूल नहीं की गई तो क्या करें?

किसी ने रमज़ान का चाँद अकेले देखा, सिवाए उसके शहर भर में किसी ने नहीं देखा और ये शरीअ़त का पाबंद नहीं है, उसकी गवाही से शहर वाले रोज़ा न रखें, लेकिन ख़ुद ये रोज़ा रखे। और अगर उस अकेले देखने वाले ने तीस रोज़े पूरे कर लिए, लेकिन अभी ईद का चाँद नहीं दिखाई दिया तो इकतीसवाँ रोज़ा भी रखे और शहर वालों के साथ ईद करे।

(बहवाला बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–5, बहवाला

आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–198)

तन्हा चाँद देखने वाला ईद न मनाए

अगर किसी ने ईद का चाँद तन्हा देखा, इस लिए उसकी ग्वाही का शरीअ़त ने एतेबार नहीं किया, तो उस देखने वाले आदमी को ईद करना दुरुस्त नहीं है। सुब्ह को रोज़ा रखे और अपने चाँद देखने का एतेबार न करे और रोज़ा न तोड़े। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–5, बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–192)

इक्तीसवें दिन इफ्तार कर लिया जाए

अगर दो मोतमद आदमियों की शहादत से रूयते हिलाल साबित हो जाए, ख़्वाह मतला साफ़ हो या नहीं, तो इक्तीसवें दिन इफ़्तार कर लिया जाए और वह दिन शौवाल की पहली तारीख़ समझी जाए। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–11 सफ़्हा–104, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–192)

अगर दिन में चाँद नज़र आ जाए

अगर तीस तारीख़ को दिन के वक़्त चाँद दिखलाई दे तो वह आइंद शब का समझा जाएगा, गुज़श्ता का न समझा जाएगा, और वह दिन आइंदा माह की तारीख़ क़रार न दिया जाएगा। ख़्वाह ये रूयत ज़वाल से पहले हो या ज़वाल के बाद।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–104, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–149)

बग़ैर चाँद देखे रोज़े शुरू किए फिर अट्ठाईस रोज़े के बाद ईद का चाँद नज़र आ गया

अगर किसी शहर के लोगों ने रमज़ान का चाँद न देखा और रोज़े रखने शुरू कर दिए। अट्ठाईसवें रोज़े को

शौवाल का चाँद देखा, अगर उन्होंने शाबान का चाँद देख कर तीस दिन पूरे गिन लिए थे और रमज़ान का चाँद नहीं देखा था तो एक दिन की क़ज़ा करें। और अगर उन्तीसवें रोज़े को चाँद देखा था तो उन पर कुछ क़ज़ा लाज़िम नहीं होगी। और अगर शाबान के चाँद के तीस दिन पूरे किए थे और शाबान का चाँद नहीं देखा था और उसके बाद रमज़ान के रोज़े रखे तो दो दिन की क़ज़ा करेंगे।

(आलमगीरी उर्दू (पाकिस्तानी) जिल्द—2 सफ़्हा—9)

29 रमज़ान को रूयत की ग्वाही

अगर ग्वाहों ने रमज़ान की 29 तारीख़ को ये ग्वाही दी कि हम ने तुम्हारे रोज़ा रखने से एक दिन पहले चाँद देखा था, तो अगर वह उसी शहर के लोग हैं तो इमाम उनकी ग्वाही क़बूल न करे, क्योंकि उन्होंने वाजिब को तर्क किया। और अगर कहीं दूर से आए हैं तो उनकी ग्वाही जाइज़ होगी। इसलिए कि उनके ज़िम्मा तोहमत नहीं है। (फ़तावा आलमगीरी उर्दू (पाकिस्तानी) जिल्द—1 सफ़्हा—10)

रूयत की ख़बर दिन के बारह बजे मिलना

रूयते हिलाल की ख़बर जिस वक़्त पुख़्ता तौर से पहुंच जाए ख़्वाह गुरूबे आफ़ताब से थोड़ी देर पहले पहुंचे, बशर्ते कि शहादत मोतबर हो, महज़ तार वग़ैरा की ख़बर न हो, तो रोज़ा तोड़ कर इफ़्तार कर लेना चाहिए। रोज़ा इफ़्तार न करने की सूरत में गुनाहगार होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द—6 सफ़्हा—493, बहवाला रद्दुलमुहतार किताबुस्सौम जिल्द—1 सफ़्हा—125)

गुरूबे आफ़ताब से पहले जो चाँद नज़र आए वह मोतबर नहीं

सवालः अभी आफ़ताब गुरूब होने में दो चार मिनट की देर थी, उस वक़्त ज़ैद ने कहा ईद का चाँद नज़र आ गया, लिहाज़ा रोज़ा इफ़्तार करना चाहिए, तो बकर ने इनकार किया, ताहम ज़ैद के कहने पर 15–20 आदमियों ने रोज़ा इफ़्तार कर लिया तो उन इफ़्तार करने वालों का रोज़ा हुआ या नहीं?

जवाबः गुरूबे आफ़ताब से पहले रूयते हिलाल का एतेबार नहीं है, वह दिन रमज़ान ही का है, ईद का नहीं, अब जिसने ये सोच कर इफ़्तार किया कि आफ़ताब गुरूब हो गया है इसलिए चाँद नज़र आया तो उन पर रोज़ा की फ़क़त क़ज़ा लाज़िम है, और जो लोग जानते थे कि आफ़ताब गुरूब नहीं हुआ है और रोज़ा खोल लिया उन पर क़ज़ा के साथ कफ़्फ़ारा भी लाज़िम है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–20)

शहादत के बाद इफ़्तार न करना

सवालः अगर मौलवी साहब ने रूयते हिलाल की शरई शहादत आने पर ईद का हुक्म दे दिया और सिर्फ़ एक शख़्स ने रोज़ा इफ़्तार नहीं किया तो क्या हुक्म है?

जवाबः वह शख़्स गुनहगार हुआ तौबा करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–1 सफ़्हा–493, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–125, किताबुस्सौम)

जो शख़्स हाकिम के फ़ैसलए शरई के बाद भी इफ़्तार न करे वह गुनाहगार होगा क्यों कि ये दिन शहादते शरईया से ईद का दिन साबित हो गया और ईद के दिन रोज़ा

रखना हराम है।

(अहसनुलफ़तावा (पाकिस्तानी) जिल्द–4 सफ़्हा–415)

एक शहर वालों ने रूयत की बिना पर 29 रोज़े रखे और दूसरे शहर वालों ने चाँद ही की बिना पर तीस रखे

साहबे हिदाया अपनी किताब "मुख़्तारातुन्नवाज़िल" में फ़रमाते हैं कि– "एक शहर वालों ने रूयते हिलाल के बाद उनतीस रोज़े और दूसरे शहर वालों ने चाँद ही की बिना पर तीस रोज़े रखे, तो अगर उन दोनों शहरों में मतला का इख़्तिलाफ़ न हो तो उनतीस रोज़े रखने वालों को एक दिन की क़ज़ा करनी होगी। और अगर दोनों शहरों का मतला जुदागाना हो तो क़ज़ा की ज़रूरत नहीं। अल्लामा लखनवी ने इस मौज़ू पर मुफ़स्सल बहस करने के बाद जो जचा तुला फ़ैसला किया है वह उन्ही के अलफ़ाज़ में नक़्ल किया जाता है।

अक़्ल व नक़्ल हर दो लिहाज़ से सब से सही मसलक यही है कि ऐसे दो शहर जिन में इतना फ़ासिला हो कि उनके मताले बदल जाएं, जिसका अंदाज़ा एक माह की मसाफ़त से किया जाता है। उसमें एक शहर की रूयत दूसरे शहर के लिए मोतबर नहीं होनी चाहिए। और क़रीबी शहरों में जिनके माबैन एक माह से कम मसाफ़त हो एक शहर की रूयत दूसरे शहर के लिए लाज़िम और ज़रूरी होगी।

राक़िमुलहुरूफ़ के ख़्याल में ये राए बहुत मोतदिल, मुतवाज़िन और क़रीनए अक़्ल है। अलबत्ता इख़्तिलाफ़े मताले की हदें मुअैयन करने में "एक माह की मसाफ़त" की क़ैद के बजाए जदीद माहिरीने फ़लकीयात के हिसाब और

उनकी राए पर एतेमाद किया जाना ज़्यादा मुनासिब होगा।
(जदीद फ़िक़्ही मसाइल जिल्द–1 सफ़हा–92)

मताले के बारे में मज्लिसे तहक़ीक़ाते शरईया का फ़ैसला

मज्लिसे तहक़ीक़ाते शरईया नदवतुलउलमा लखनऊ मुनअक़िदह 3–4 मई 1967 ई0 को मुख़्तलिफ़ मकातिबे फ़िक्र के उलमा और नुमाइंदा शख़्सियतों ने मिल कर इस मस्अला (मताले) की बाबत जो फ़ैसला किया था वह हस्बे ज़ैल है।

1. नफ़्सुलअम्र में पूरी दुनिया का मतला एक नहीं है बल्कि इख़्तिलाफ़े मताले मुसल्लम हैं और ये एक वाक़िआती चीज़ हैं। इसमें फुक़हाए किराम का कोई इख़्तिलाफ़ नहीं है और हदीस से भी इसकी ताईद होती है।

2. अलबत्ता फुक़हा इस बात में मुख़्तलिफ़ हैं कि रोज़ा और इफ़्तार के बाब में ये इख़्तिलाफ़े मताले मोतबर हैं या नहीं?

मुहक़्क़िक़ीने अहनाफ़ और उलमाए उम्मत की तसरीहात और उनके दलाइल की रौशनी में मज्लिस की मुत्तफ़क़ा राए है कि बिलादे बईदा (दूर के शहर) में इस बाब में भी इख़्तिलाफ़े मताले मोतबर है।

3. बिलादे बईदा से मुराद ये है कि उनमें बाहम इस क़दर दूरी वाक़ेअ़ हो कि आदतन उनकी रूयत में एक दिन का फ़र्क़ होता है, एक शहर में एक दिन पहले चाँद नज़र आता है, दूसरे में एक दिन बाद, इन बिलादे बईदा में एक की रूयत दूसरे के लिए लाज़िम कर दी जाए तो महीना किसी जगह अठ्ठाईस दिन का रह जाएगा और किसी जगह तीस दिन का क़रार पाएगा। हज़रत अब्दुल्लाह

इब्न अब्बास की रिवायत से इस क़ौल की ताईद होती है।

4. बिलादे क़रीबा वह शहर हो जिनकी रूयत में आदतन एक दिन का फ़र्क़ नहीं पड़ता, फ़ुक़हा एक माह की मसाफ़त की दूरी को जो तक़रीबन पाँच सौ या छः सौ मील होती है, बिलादे बईदा क़रार देते हैं और इससे कम को बिलादे क़रीबा।

मज्लिस इस सिलसिले में एक ऐसे चार्ट की ज़रूरत समझती है कि जिससे मालूम हो जाए कि मतला कितनी मसाफ़त में बदल जाता है और किन किन मुल्कों का मतला एक है।

5. हिन्दुस्तान, पाकिस्तान के बेशतर हिस्सों और बाज़ क़रीबी मुल्कों मसलन नैपाल वग़ैरा का मतला एक है।

उलमाए हिन्द व पाक का अमल हमेशा इसी पर रहा है और ग़ालिबन तजरबे से भी यही साबित है इन मुल्कों के शहरों में इस क़दर बोअ़दे मसाफ़त नहीं है कि महीने में एक दिन का फ़र्क़ पड़ता हो, इस बुनियाद पर इन दोनों मुल्कों में जहां भी चाँद देखा जाए शरई सुबूत के बाद उसका मानना उन दोनों मुल्कों के तमाम अह्ले शहर पर लाज़िम होगा।

6. मिस्र और हिजाज़ जैसे दूर दराज़ मुल्कों का मतला हिन्द व पाक के मतला से अलाहिदा है, यहां की रूयत उन मुल्कों के लिए और उन मुल्कों की रूयत यहां वालों के लिए हर हालत में लाज़िम और क़ाबिले क़बूल नहीं है। इसलिए कि उनमें और हिन्द व पाक में इतनी दूरी है कि उमूमन एक दिन का फ़र्क़ वाक़ेअ़ हो जाता है और बाज़ औक़ात इससे भी ज़्यादा।

(जदीद फ़िक़्ही मसाइल जिल्द–1 सफ़्हा–93)

चाँद की तारीख़ों की हिकमतें और फ़ाएदे

इस्लामी अहकाम का तअल्लुक़ चाँद की तारीख़ों से रखने में बहुत सी हिकमतें और फ़ाएदे हैं–

1. शरीअ़त के अहकाम में इस बात का ख़्याल रखा गया है कि क़म इल्म व अक़्ल वाला इंसान भी इन अहकाम की बजाआवरी में उलझने न पाए और एक शहरी और देहाती, पढ़ा लिखा और बे पढ़ा दोनों बराबर आसानी और सहूलत के साथ शरीअ़त के अहकाम की पाबंदी कर सकें, चाँद की तारीख़ में न कलैंडर की ज़रूरत है न डाएरी की, आदमी बस्ती में हो या जंगल में ख़ुश्की में हो या समंद्र में हर जगह बड़ी सहूलत से क़मरी महीनों और तारीख़ों का पता चला सकता है।

2. चाँद के महीने हमेशा हर मौसम में घूम घूम कर आते हैं इसलिए हर मौसम में हर किस्म की इबादत करने का मौक़ा मिलता है।

3. रोज़े का तअ़ल्लुक़ चाँद से रखने में ये भी हिक्मत है कि जब आधी दुनिया पर सर्दी का मौसम होता है तो दूसरे आधे हिस्सा पर गर्मी होती है, क्योंकि चाँद का महीना बदल बदल कर आता रहता है। इसलिए अगर चंद साल आधी दुनिया के मुसलमानों ने गर्मी के मौसम में रोज़े रखे थे, तो चंद साल सर्दी के मौसम में रोज़े रखने को मिल जाते हैं। और अगर शम्सी महीने मुक़र्रर कर दिए जाते तो हमेशा एक ही मौसम में रोज़े रखने पड़ते, और ये बात एक आलमगीर मज़हब के उसूल के ख़िलाफ़ होती।

एक गलत फ़हमी का इज़ाला

बाज़ हज़रात 29 का चाँद न होने की तमन्ना करते हैं, ये तमन्ना शिआ़रे इस्लाम के ख़िलाफ़ है, क्योंकि हमारे ऊपर माहे रमज़ानुलमुबारक के रोज़े रखने फ़र्ज़ हैं, अब महीना 29 का हो या 30 का, इसकी कोई तअ़ैयीन नहीं, ख़ुद नबीये पाक (स.अ.व.) ने भी अपने अह्दे मुबारक में बाज़ सालों में उनतीस रोज़े रखे हैं।

❑❑❑

तीसरा बाब

मसाइले नीयत

हर इबादत की सेहत के लिए नीयत का होना शर्त है मिश्कात की पहली हदीस "اِنَّمَا الْاَعْمَالُ بِالنِّيَّاتِ" इस पर शाहिद है, कि रोज़े की सेहत भी नीयत के साथ मशरूत है और रोज़ा ख़्वाह फ़र्ज़ हो या नफ़्ल क़ज़ा हो या नज़्र, नीयत के बग़ैर सही नहीं, बग़ैर नीयत के तमाम दिन कुछ खाए पिये गुज़ार देना रोज़ा नहीं कहलाएगा। हाँ नीयत के अलफ़ाज़ ज़बान से कहना कोई ज़रूरी नहीं है। बल्कि सहरी में उठना और सहरी खाना भी नीयत में शुमार है, अलबत्ता ज़बान से नीयत का इज़हार करना ज़्यादा बेहतर है।

रमज़ान में हर रोज़ नीयत करना ज़रूरी

रमज़ान के हर रोज़े में नीयत करना ज़रूरी है, एक रोज़ नीयत कर लेना तमाम रोज़ों के लिए काफ़ी नहीं।

(इल्मुफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–18)

रात से नीयत करना शर्त नहीं

रमज़ान शरीफ़ के रोज़े की अगर रात से नीयत करे तब भी फ़र्ज़ अदा हो जाता है। और अगर रात को रोज़ा रखने का इरादा न था, सुब्ह हो गई, तब भी यही ख़्याल रहा कि मैं आज रोज़ा न रखूंगा, फिर दिन चढ़े ख़्याल

आ गया कि फ़र्ज़ छोड़ देना बुरी बात है, इसलिए अब रोज़े की नीयत कर ली, तब भी रोज़ा हो गया। लेकिन अगर सुब्ह को कुछ खा पी लिया था, तो अब नीयत नहीं कर सकते। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–3)

नीयत का आख़िरी वक़्त

अगर कुछ खाया पिया न हो तो दिन के ठीक दोपहर से एक घंटा पहले पहले रमज़ान के रोज़े की नीयत कर लेना दुरुस्त है।

सुब्ह सादिक़ से गुरूबे आफ़ाब तक कुल वक़्त के निस्फ़ को निस्फ़ुन्नहारे शरई कहा जाता है, सुब्ह सादिक़ और तुलूए आफ़ताब के दरमियान जितना वक़्त होता है, निस्फ़ुन्नहारे शरई व निस्फ़ुन्नहारे उरफ़ी (वक़्ते ज़वाल) के दरमियान उसका निस्फ़ होता है, मसलन सुब्ह सादिक़ से तुलूए आफ़ताब तक डेढ़ घंटा हो तो निस्फ़ुन्नहारे उरफ़ी से पौन घंटे पहले निस्फ़ुन्नहारे शरई होगा। उस वक़्त की मिक़्दार हर मौसम में और हर मक़ाम में मुख़्तलिफ़ होती है, इसलिए उसकी मिक़्दार घंटों से मऐयन नहीं की जा सकती। ज़ाब्तए मज़कूरा के मुताबिक़ अमल किया जाए।

(अहसनुलफ़तावा (पाकिस्तानी) जिल्द–4 सफ़्हा–437)

निस्फ़ुन्नहार की तअ़यीन का तरीक़ा

निस्फ़ुन्नहार की तअ़यीन का तरीक़ा ये है कि औवल देख लिया जाए कि सुब्ह सादिक़ कितने बजे होती है, और सूरज कितने बजे गुरूब होता है, उनके दरमियान के घंटों को शुमार कर के उनका निस्फ़ ले लिया जाए, उस निस्फ़ के अन्दर अन्दर नीयत कर ली गई तो रोज़ा हो जाएगा। और अगर निस्फ़ वक़्त पूरा या उससे ज़्यादा

गुज़र जाए तो रोज़ा न होगा, एक घंटा की क़ैद एहतियातन की गई है। (हाशिया बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–3)

दिल के ख़्याल का नाम नीयत

रमज़ान शरीफ़ के रोज़े में बस इतनी नीयत कर लेना काफ़ी है कि आज मेरा रोज़ा है, या रात को सोच ले कि कल मेरा रोज़ा है, बस इतनी नीयत से भी रमज़ान का रोज़ा अदा हो जाएगा। अगर नीयत में ख़ास ये बात न आई हो कि रमज़ान का रोज़ा है या फ़र्ज़ का तब भी रोज़ा हो जाएगा। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–3)

रमज़ान के रोज़े का मुतलक़ नीयत से अदा हो जाना

रमज़ान के महीने में अगर किसी ने ये नीयत की कि कल मैं नफ़्ल रोज़ा रखूंगा, रमज़ान का न रखूंगा, बल्कि इस रोज़े की कभी क़ज़ा रखूंगा, तब भी रमज़ान का ही रोज़ा होगा नफ़्ल का नहीं होगा।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–3 बहवाला फ़तावा हिन्दीया जिल्द–1 सफ़्हा–194)

क़ज़ाए रमज़ान की नीयत का हुक्म

अगर गुज़श्ता रमज़ान के रोज़े क़ज़ा हो गए और पूरा साल गुज़र गया अब तक उसकी क़ज़ा नहीं रखी फिर जब रमज़ान का महीना आ गया तो उसकी क़ज़ा की नीयत से रोज़ा रखा, तब भी रमज़ान का ही रोज़ा होगा, क़ज़ा का रोज़ा न होगा, क़ज़ा के रोज़े रमज़ान के बाद रखे। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–3, बहवाला फ़तावा हिन्दीया जिल्द–1 सफ़्हा–194)

नज़्र के रोज़े को रमज़ान में रखना

अगर किसी ने नज़्र मानी थी कि अगर मेरा फ़लाँ

काम हो जाए तो मैं अल्लाह के लिए इतने रोज़े रखूंगा, फिर रमज़ान का महीना आ गया तो उसने उसी नज़्र के रोज़े रखने की नीयत की, रमज़ान के रोज़े की नीयत नहीं की, तब भी रमज़ान ही का रोज़ा होगा। नज़्र का रोज़ा अदा नहीं हुआ। नज़्र का रोज़ा रमज़ान के बाद फिर कभी रखे, सब का ख़ुलासा ये हुआ कि रमज़ान के महीना में जब किसी रोज़े की नीयत करेगा तो रमज़ान ही का रोज़ा होगा और कोई रोज़ा सही न होगा।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3, बहवाला कुदूरी सफ़्हा–45)

क्या नफ़्ल की नीयत से 29 शाबान का रोज़ा चाँद होने की सूरत में रमज़ान से बदल जाएगा?

उन्तीसवीं शाबान को बादल की वजह से अगर रमज़ान का चाँद दिखाई नहीं दिया तो सुब्ह को नफ़्ली रोज़ा भी न रखो, हाँ अगर ऐसा इत्तिफ़ाक़ पड़ता हो कि हमेशा पीर या जुमेरात या और किसी मुक़र्ररा दिन रोज़ा रखा करते थे और कल वही दिन है तो नफ़्ल की नीयत से सुब्ह को रोज़ा रख लेना बेहतर है, फिर अगर कहीं से चाँद की ख़बर आ गई तो उसी नफ़्ल रोज़ा से रमज़ान का फ़र्ज़ अदा हो जाएगा अब उसकी क़ज़ा न रखे।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–3, बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–119)

29 शाबान को चाँद न दिखाई दे तो अगले रोज़ दोपहर तक कुछ न खाओ

बादल वग़ैरा की वजह से 29 शाबान को चाँद नहीं दिखाई दिया तो अगले रोज़ दोपहर से एक घंटे पहले तक कुछ न खाओ न पियो, अगर कहीं से ख़बर आ जाए

तो अब रोज़े की नीयत कर लो। और अगर ख़बर न आए तो खाओ पियो। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–4, बहवाला नूरुलईज़ाह)

यौमे शक के रोज़ा का हुक्म

अगर यौमे शक (तीस शाबान) को कुछ खा पी लिया और फिर मालूम हुआ कि वह दिन रमज़ान का था, तो लाज़िम है उस दिन के बाक़ी हिस्से में रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों से बाज़ रहा जाए। और माहे रमज़ान गुज़रने पर फ़ौरन उसकी क़ज़ा रखी जाए। और अगर यौमे शक में इस नीयत से रोज़ा रखा कि वह रमज़ान का रोज़ा है और फिर ये पता चला कि वह दिन शाबान का था, तो वह रोज़ा सिरे से सही न होगा। (किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–896)

तीस शाबान को अगर शहादत न आई और रोज़ा रख लिया तो जैसी नीयत थी वैसा ही रोज़ा हो जाएगा

उन्तीस शाबान को चाँद नहीं हुआ तो ये ख़्याल न करो कि कल का दिन रमज़ान का नहीं है। और मेरे ज़िम्मे पार साल के रोज़े की क़ज़ा है, इसलिए उसकी क़ज़ा ही रख लूँ। या कोई नज़्र मानी थी उसका रोज़ा रख लूँ, उस दिन क़ज़ा का रोज़ा या कफ़्फ़ारा और नज़्र का रोज़ा रखना भी मकरूह है, कोई रोज़ा न रखना चाहिए। मगर क़ज़ा या नज़्र का रोज़ा रख ही लिया फिर कहीं से चाँद की ख़बर आ गई तो रमज़ान ही का रोज़ा अदा होगा, क़ज़ा और नज़्र का रोज़ा फिर रख लें और अगर ख़बर नहीं आई तो जिस रोज़े की नीयत थी वही अदा हो गया। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–4, बहवाला

शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–30)

क्या एक मरतबा नीयत कर लेना काफ़ी है?

अगर मुसलसल रोज़े रखना वाजिब हो तो सब के लिए एक मरतबा नीयत कर लेना काफ़ी है, जैसे माह रमज़ान के रोज़े या कफ़्फ़ारए सौम या कफ़्फ़ारए ज़िहार के रोज़े, यानी जब तक ये सिलसिला न टूटेगा वही नीयत जारी रहेगी। और अगर कोई मरज या सफ़र पेश आ जाने की वजह से वह तसलसुल टूट गया, तो अब हर रोज़ रात को नीयत करना ज़रूरी है, अलबत्ता अगर सफ़र ख़त्म हो जाए या मरज जाता रहे तो बाक़ी रोज़ों के लिए एक ही बार नीयत काफ़ी होगी।

(किताबुलफ़िक़्ह अलल़मज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–884)

जो रोज़े मुसलसल वाजिब नहीं हैं उनकी नीयत का तरीक़ा

अगर ऐसे रोज़े हों जिनका तवातुर से रखना वाजिब नहीं है जैसे माहे रमज़ान की क़ज़ा, या कफ़्फ़ारए क़सम के रोज़े, तो ऐसे रोज़ों के लिए हर रोज़ रात से नीयत करना ज़रूरी है, उनके लिए पहले ही रोज़ नीयत कर लेना काफ़ी नहीं है।

(किताबुलफ़िक़्ह अलल़मज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–884)

नीयत का क़ाएदा

नफ़्ली रोज़े में और नज़्रे मुअैयन और रमज़ान शरीफ़ के रोज़ों की रात से नीयत करे या सुब्ह को निस्फ़ुन्नहारे शरई तक कर लेना दुरुस्त है और बाक़ी रोज़ों में रात से नीयत कर लेना ज़रूरी है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6

सफ़्हा–346, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–116)

सहरी खाना नीयत में शुमार होगा या नहीं?

माहे रमज़ान में हर रोज़ नीयत करनी चाहिए। सहरी खाना भी नीयत है ये और बात है कि खाते वक़्त रोज़ा रखने का इरादा न हो। (तो सहरी का खाना नीयत में शुमार न होगा) अगर औवले शब में रोज़े की नीयत की फिर तुलूए फ़ज्र से पहले नीयत तोड़ दी, तो ये नीयत का तोड़ देना हर क़िस्म के रोज़ों की नीयत में मोतबर होगा। (किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ़ जिल्द–1 सफ़्हा–881)

नीयत का ज़बान से ज़ाहिर करना ज़रूरी नहीं

नीयत का ज़बान से ज़ाहिर करना ज़रूरी नहीं, सिर्फ़ दिल का इरादा काफ़ी है, हत्ता कि सहरी का खाना ख़ुद नीयत के क़ाइम मक़ाम है, इसलिए कि सहरी रोज़ा रखने की ग़रज़ से खाई जाती है, हाँ अगर किसी की आदत उस वक़्त खाना खाने की हो, या कोई बदबख़्त सहरी खाता हो और रोज़ा न रखता हो, तो उसके लिए सहरी खाना नीयत के क़ाइम मक़ाम नहीं है।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–18)

मरीज़ और मुसाफ़िर की नीयत का हुक्म

रमज़ान के महीने में मरीज़ के रोज़े की नीयत का हुक्म मज़हबे मुख़्तार के मुताबिक़ तंदुरुस्त और सही व मुक़ीम की नीयत के हुक्म के मानिन्द है, यानी अगर कोई मरीज़ आदमी रमज़ान के महीना में किसी दूसरे रोज़े की नीयत करे तो उसकी नीयत का एतेबार न होगा और रमज़ान का रोज़ा ही तमाम हालतों में समझा जाएगा।

अलबत्ता मुसाफ़िर रमज़ान के महीना में किसी दूसरे रोज़े की नीयत करे तो उसकी नीयत का एतेबार होगा और जिस नीयत से रोज़ा रखे, उसी का होगा (चाहे नफ़्ल हो या वाजिब)।

(शामी जिल्द–2 सफ़्हा–86, किताबुस्सौम)

अय्यामे तशरीक़ में रोज़े की नीयत करना दुरुस्त नहीं

अगर ईदैन या अय्यामे तशरीक़ यानी ज़िलहिज्जा की ग्यारह, बारह तेरह तारीख़ में कोई शख़्स रोज़े की नीयत करे तो उस रोज़े का पूरा करना उस पर ज़रूरी न होगा और फ़ासिद होने की सूरत में उसकी क़ज़ा भी लाज़िम न होगी, बल्कि उसका फ़ासिद कर लेना वाजिब है, इसलिए कि उन अय्याम में रोज़ा रखना मकरूहे तहरीमी है।

(इल्मुलफ़िक़्ह सफ़्हा–41)

बग़ैर नीयत के भूका रहने से रोज़ा नहीं होगा

अगर किसी ने पूरे दिन कुछ नहीं खाया पिया, शाम तक भूका प्यासा रहा, लेकिन दिल में रोज़े का इरादा न था, बल्कि भूक ही नहीं लगी, या किसी और वजह से खाने पीने की नौबत नहीं आई, तो उसका रोज़ा नहीं हुआ। अगर दिल में रोज़ा का इरादा कर लेता तो रोज़ा हो जाता। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–3)

नीयत करने के बाद भी सुब्ह सादिक़ तक खा सकते हैं

शरीअत में रोज़े का वक़्त सुब्ह सादिक़ के वक़्त से शुरू होता है इसलिए जब तक सुब्ह सादिक़ न हो खाना पीना वग़ैरा सब कुछ जाइज़ है। बाज़ हज़रात शुरू रात में सहरी खा कर नीयत की दुआ पढ़ कर लेट जाते हैं और ये समझते हैं कि अब नीयत करने के बाद कुछ

खाना पीना न चाहिए, ये ख़्याल ग़लत है, जब तक सुब्ह न हो बराबर खा सकते हैं, चाहे नीयत कर चुके हों या नीयत अभी न की हो। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–3)

दिल में नीयत कर के सोने का हुक्म

नीयत से मुराद दिल का इरादा है, ज़बान से अदाएगी ज़रूरी नहीं, इसलिए अगर कोई रात को दिल में इरादा कर के सोया था, तो फिर मज़ीद नीयत की कोई ज़रूरत नहीं।

(हाशिया फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–444)

किन किन रोज़ों में रात से नीयत करना ज़रूरी है?

रमज़ान के क़ज़ा रोज़ों में और नज़्रे ग़ैर मुअय्यन और कफ़्फ़ारात के रोज़ों में, इसी तरह उस नफ़्ल रोज़ों की क़ज़ा में जिसे शुरू कर के फ़ासिद कर दिया गया हो, गुरूबे आफ़ताब के बाद से सुब्ह सादिक़ के तुलूअ़ होने तक नीयत कर लेना ज़रूरी है। सुब्ह सादिक़ के बाद अगर नीयत की जाएगी तो काफ़ी न होगी।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–19)

नोटः नीयत में तबर्रुकन "इंशाअल्लाह" कह लेना कुछ मुज़िर नहीं है (नीज़) रोज़े की हालत में इफ़्तार की नीयत कर लेने से रोज़े की नीयत बातिल नहीं होती।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–19)

ज़बान से नीयत का इज़्हार बेहतर है

दिल से नीयत करना काफ़ी है, कुछ कहना ज़रूरी नहीं, बल्कि जब दिल में ख़्याल है कि आज मेरा रोज़ा है और दिन भर रोज़े की ममनूआ़त से रुका रहा तो उसका रोज़ा हो गया। और अगर ज़बान से कह दे कि या

अल्लाह कल मैं रोज़ा रखूंगा या अरबी में ये कह दे। "نَوَيْتُ بِصَوْمِ غَدٍ مِنْ شَهْرِ رَمَضَانَ" तो ये भी बेहतर है।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा—3 सफ़्हा—3)

नीयत कर के रोज़ा तोड़ना

सवाल: किसी शख़्स ने शबे रमज़ान में रोज़े की नीयत की, या ग़ैर रमज़ान में रात को या दिन को नफ़्ल रोज़े की नीयत की, अब वह रात को या दिन को उज़्र की वजह से या बिला उज़्र नीयत तोड सकता है या नहीं?

जवाब: नीयत का रात को तोड़ना मुम्किन है इस तरीक़ा से कि अगले दिन खाने पीनी का इरादा करे। लेकिन और दिन में जबकि रोज़ा शुरू हो गया तो अब नीयत तोड़ना लग़्व है। पस रमज़ान के रोजे में अगर रात को नीयत कर के तोड़ दी और दिन को खा पी लिया तो सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम आएगी।

और अगर दिन में नीयत तोड़ कर खा पी लिया तो कफ़्फ़ारा भी लाज़िम आएगा। और अगर ग़ैर रमज़ान में रात को नीयत तोड़ दी तो न क़ज़ा है न कफ़्फ़ारा। और अगर दिन में नीयत ख़त्म कर के खा पी लिया तो सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम आएगी। और जिन रोज़ों में उनका वक़्त मुतअय्यन है उमसें बिला उज़्र नीयत तोड़ना जाइज़ नहीं। और ग़ैर मुतअय्यन में तोड़ना बग़ैर उज्र के भी जाइज़ है। (इमदादुलफ़तावा जिल्द—1 सफ़्हा—173)

जिस शख़्स ने रोज़ा की नीयत न की तो उसके खाने का क्या हुक्म है?

सवाल: जिस शख़्स ने रमज़ान की रात में न नीयत

रोज़ा रखने की की और न अदमे रोज़ा की तो अब दिन में उसके लिए खाना पीना जाइज़ है या नहीं?

जवाब: अगर रोज़े दार ने ज़वाल से पहले तक नीयत न की तो उसका रोज़ा सही नहीं हुआ। लेकिन खाना पीना रमज़ान के एहतेराम की वजह से जाइज़ नहीं और अगर खा लिया तो सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम आएगी।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–173)

चौथा बाब

सहरी के मसाइल व फ़ज़ाइल

अल्लाह तआला के क़ानून का भी अजीब व ग़रीब मआमला है, उसके यहां हर चीज़ के ख़ज़ाने हैं वह हर चीज़ पर क़ादिरे मुतलक़ है, वह अपने मुतअल्लिक़ फ़रमता है– "وَهُوَ يُطْعِمُ وَلَا يُطْعَمُ वह खाता नहीं बल्कि खिलाता है।"

मशहूर है कि रहमते ख़ुदावंदी "बहाना मी जोयद" कि ख़ुदा की रहमत देने के लिए बहाना तलाश करती है, अब सहरी को ही देखिए जब कि सहरी खाना बंदों के अपनी अग़राज़ व मक़ासिद में से है, लेकिन चूंकि रोज़े की निस्बत सिर्फ़ ख़ुदा ही की तरफ़ है, उसने उसमें भी मुसलमानों के लिए अज्र व सवाब रख दिया गया है। सहरी खाना मसनून है, हदीस शरीफ़ में उसकी बड़ी फ़ज़ीलत आई है– "आंहज़रत (स.अ.व.) फ़रमाते हैं कि यहूद व नसारा और हमारे रोज़ों में सिर्फ़ सहरी का फ़र्क़ है।" (यानी वह सहरी नहीं खाते और हम खाते हैं) आप ने फ़रमाया कि अल्लाह और उसके फ़रिश्ते सहरी खाने वालों पर रहमत नाज़िल फ़रमाते हैं– "अगर भूक न हो और खाने की ख़्वाहिश न हो तो इस सुन्नत पर अमल करने के लिए दो एक छुहारे खा ले, या सिर्फ़ पानी का एक घूंट ही पी ले, ताकि सुन्नत पर अमल हो जाए।"

आप (स.अ.व.) का इरशाद है कि– "सहरी खाने में बरकत है।" यानी बदन में चुस्ती और कूवत क़ाइम रहती है।

सहरी में ताख़ीर करना मुस्तहब है, सहरी खाने में ताख़ीर करने का मतलब ये है कि जब तक सुब्ह सादिक़ का यक़ीन न हो उस वक़्त तक खाते पींते रहना चाहिए और जब सुब्ह सादिक़ नमूदार हो जाए तो फिर खाना पीना तर्क कर देना चाहिए। सुब्ह सादिक़ की पहचान ये है कि जब सुब्ह सादिक़ नमूदार होती है तो मश्रिक़ में उफ़ुक़ के किनारों पर रौशनी की धारी नुमायाँ होती है और फिर रौशनी ग़ालिब आ कर तारीकी मिट जाती है बस यही सुब्ह सादिक़ है।

साहबे कश्शाफ़ ने सहरी का तरीक़ा ये लिखा है कि तमाम रात को छः हिस्सों पर तक़्सीम कर के आख़िर हिस्से में सहरी खाओ, मसलन अगर गुरूबे आफ़ताब से सुब्ह सादिक़ तक बारह घंटे हों तो आख़िर के दो घंटे में सहरी खाओ और उनमें भी ताख़ीर बेहतर है। बशर्ते कि इतनी ताख़ीर न हो कि रोज़े में शक होने लगे। लुग़त में सहरी उस खाने को कहते हैं जो सुब्ह के क़रीब खाया जाए। बाज़ हज़रात तरावीह पढ़ कर खा कर सो जाते हैं, या बग़ैर सहरी के रोज़े रखते हैं, अगरचे इस तरह तो उन का रोज़ा हो जाएगा, मगर सहरी के सवाब से महरूम रहेंगे, रोज़ेदार को सहरी का एहतेमाम करना चाहिए कि उसमें अपनी ही राहत व नफ़ा और मुफ़्त का सवाब है मगर इतना ज़रूर है कि इफ़रात व तफ़रीत हर चीज़ें में मुज़िर है कि न इतना कम खाओ कि इबादत में कमज़ोरी महसूस होने लगे और न इतना ज़्यादा खाओ कि दिन

भर खट्टी डिकारें आती रहें, क्योंकि अहादीस में ज़्यादा खाने की मुमानअ़त वारिद है।

सहरी का मसनून वक़्त

रोज़ेदार को रात के आख़िरी हिस्से में सुब्ह सादिक़ से पहले पहले सहरी खाना मसनून है और बाइसे बरकत व सवाब है, निस्फ़ शब के बाद जिस वक़्त भी खाएँ सहरी की सुन्नत अदा हो जाएगी लेकिन बल्किुल आख़िरी शब में खाना अफ़ज़ल है। अगर मुअज़्ज़िन ने सुब्ह की अज़ान वक़्त से पहले दे दी तो सहरी खाने की मुमानअ़त नहीं है जब तक कि सुब्ह सादिक़ न हो जाए (खा सकते हैं) सहरी से फ़ारिग़ हो कर रोज़े की नीयत दिल में करना काफ़ी है, ज़बान से भी ये अलफ़ाज़ कह ले तो अच्छा है। “بصوم غدٍ نويت من شهر رمضان”

(जवाहिरुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–381)

हुज़ूर (स.अ.व.) के ज़माने में सहरी और फ़ज्र के दरमियान वक़्फ़ा की मिक़्दार

ज़ैद बिन साबित (रज़ि.) रिवायत करते हैं, कि हम ने रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के साथ सहरी खाई, फिर आप (स.अ.व.) नमाज़ के लिए खड़े हो गए। हज़रत अनस (रज़ि.) कहते हैं कि मैंने दरयाफ़्त किया कि अज़ान और सहरी में कितना वक़्फ़ा होता था, कहा पचास आयत के पढ़ने के बराबर।

(तर्जुमा बुख़ारी शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–689)

सहरी और इफ़्तार के लिए ढोल बजाना

जिस तरह निकाह और एलाने जंग के लिए दफ़ का बजाना हदीसों से साबित है उसी तरह चाँद नज़र आने

और सहरी और इफ़तार के वक़्त ज़रूरतन बतौरे एलान बजाना जाइज़ है। बशर्ते कि बाजे के तर्ज़ पर न हो।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–40, बहवाला शामी जिल्द–5 सफ़्हा–307)

सहरी व इफ्तार के लिए घंटा, नक़्क़ारा या तोप वग़ैरा का इस्तेमाल

सवालः रमज़ानुलमुबारक में सहरी व इफ़्तार का सही वक़्त बताने के लिए जामा मस्जिद में नक़्क़ारे का इंतिज़ाम किया जाए और उसके ज़रीए से तमाम मुसलमानों को इत्तिला दी जाए तो क्या ये दुरुस्त है या नहीं? बाज़ लोग नाक़ूस का हिन्दुओं की इबादत की मुशाबेह होने और रसूलुल्लाह (स.अ.व.) और अह्दे सहाबा में साबित न होने की वजह से बुरा समझते हैं क्या ये सही है?

जवाबः तबल (ढपरा) बजाने को फ़ुक़हा ने जाइज़ लिखा है, कि इफ़्तार व सुहूर के वक़्त बजाने में भी कुछ हरज नहीं, मगर तबल दाख़िले मस्जिद न रखा जाए और नाक़ूस वग़ैरा से उसको इसलिए मुशाबेह नहीं कह सकते कि वह लोग इस तरीक़ए एलान की ख़ुसूसियत को इबादत भी समझते हैं और यहाँ ऐसा कोई मस्अला नहीं समझा जाता और ख़ैरुलक़ुरून में उसकी मिसाल निकाह के वक़्त दफ़ का बजाना मौजूद है।

इससे भी मक़्सूद एक ताअ़त के मुतहक़्क़ होने का इज़्हार है और उससे भी मक़्सूद एक ताअ़त का वक़्त मुतहक़्क़ होने का एलान है और ग़ौर करने से दफ़ की कराहियत के मुक़ाबले में अ़वाम की ज़रूरत बढ़ी हुई है।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–101)

सहरी व इफ़्तार के वक़्त की इत्तिला के लिए गोला छोड़ना जाइज़ है। नक़्क़ारा बजाना भी जाइज़ है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द—2 सफ़्हा—234)

सहरी की सुन्नत अदा करने के लिए पान खाना

सहरी खानां सुन्नत है, अगर भूक न हो और खाना न खाए तो कम अज़ कम दो तीन छुहारे ही खा ले या कोई और चीज़ थोड़ी बहुत खा ले, अगर कुछ भी न हो तो सादा पानी ही पी ले, अगर किसी ने सहरी न खाई और उठ कर एक आध पान ही खा लिया तो जब भी सहरी का सवाब मिल गया। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा—3 सफ़्हा—14, बहवाला शरहुलबिदाया जिल्द—1 सफ़्हा—205)

सहरी बिल्कुल सुब्ह के वक़्त न खाएँ

सहरी में जहां तक हो सके देर कर के खान बेहतर है, लेकिन इतनी देर ने करे कि सुब्ह होने लगे और रोज़ा में शुब्हा पड़ जाए। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा—3 सफ़्हा—15, बहवाला निसाई शरीफ़ सफ़्हा—205)

सहरी जल्दी खा ली और पान आख़िर में खाया

अगर किसी ने सहरी जल्दी खाई और उसके बाद पान तम्बाकू और चाय वग़ैरा देर तक खाते पीते रहे और जब सुब्ह सादिक़ होने में थोड़ी देर रह गई तब कुल्ली कर ली, जब भी देर कर के खाने का सवाब मिल गया और इसका भी वही हुक्म है जो देर कर के खाने का हुक्म है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा—1 सफ़्हा—14, बहावाल शरहुलबिदाया जिल्द—1 सफ़्हा—205)

अज़ान देर में होने पर उस वक़्त तक सहरी खाते रहना

सवालः ज़ैद कहता है कि नावाक़िफ़ लोग जो औक़ाते

सहरी की ख़बर नहीं रखते जब तक अज़ान न सुनें खा पी सकते हैं, सही मस्अला क्या है?

जवाब: सुब्ह सादिक़ के बाद खाना पीना दुरुस्त नहीं है, ख़्वाह अज़ान हुई हो या न हुई हो, इस बारे में बहुत एहतियात करनी चाहिए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–345, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–110)

अज़ान के वक़्त मुंह का लुक़्मा निगल गया

सवाल: अज़ान होते ही सहरी छोड़ दी, लेकिन जो एक दो लुक़्मा मुंह के अन्दर था उनको निगल कर पानी पी लिया। क्या रोज़ा हो गया, या क़ज़ा लाज़िम है?

जवाब: अगर ये ज़न्ने ग़ालिब हो कि सुब्ह सादिक़ होने के बाद अज़ान शुरू हुई है तो रोज़ा न होगा, और अगर हालते शब्हा हो तो उस वक़्त खाना पीना मकरूह है मगर रोज़ा सही हो जाएगा।

(अहसुनफ़तावा (पाकिस्तानी) जिल्द–4 सफ़्हा–432)

ग़लती से सहरी सुब्ह सादिक़ के बाद खाना

अगर किसी की आँख देर में खुली और ये ख़्याल हुआ कि अभी तो रात बाक़ी है, उसी गुमान पर सहरी खा ली फिर बाद में मालूम हुआ कि सुब्ह हो जाने के बाद सहरी खाई थी तो रोज़ा नहीं हुआ। क़ज़ा रखे और कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं, लेकिन फिर कुछ खाये पिये नहीं, रोज़ादारों की तरह रहे। और इसी तरह अगर सूरज गुरूब होने के गुमान से रोज़ा खोल लिया फिर सूरज निकल आया तो रोज़ा जाता रहा, उसकी क़ज़ा करे कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं, और जब तक सूरज न डूब जाए कुछ खाना पीना दुरुस्त नहीं। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–14,

बहवाला शरहुलबिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–205)

बग़ैर सहरी का रोज़ा

सवालः बग़ैर सहरी खाये रोज़ा दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः सहरी खाना रोज़ा के लिए मुस्तहब है, पस बिला सहरी के भी रोज़ा हो जाता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–496, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–156 बाब मा युफ़्सिदुस्सौम)

अगर रात को सहरी खाने के लिए आँख न खुले सब के सब सो गए, तो बग़ैर सहरी खाए रोज़ा रखो, सहरी छूट जाने से रोज़ा छोड़ देना कम हिम्मती की बात है और बड़ा गुनाह है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–14)

वक़्त ख़त्म होने पर सहरी खाना

अगर इतनी देर हो गई कि सुब्ह सादिक़ हो जाने का शुब्हा पड़ गया, तो अब कुछ खाना मकरूह है। और अगर ऐसे वक़्त कुछ खा पी लिया तो बुरा किया, और गुनाह हुआ। फिर अगर मालूम हो गया कि उस वक़्त सुब्ह हो गई थी तो उसी रोज़ की क़ज़ा रखे। और अगर कुछ मालूम न हो शुब्हा ही शुब्हा रह जाए तो क़ज़ा रखना वाजिब नहीं है, लेकिन एहतियात की बात इसमें है कि उसकी क़ज़ा रख ले। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–14, बहवाला शरहुलबिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–205)

सहरी के बाद बीवी से हमबिस्तरी

सवालः रमज़ानुलमुबारक में सहरी खाने के बाद अपनी बीवी से हमबिस्तर हो सकता है या नहीं? और उसके बाद गुस्ल का वक़्त कब तक है?

जवाबः रमज़ान शरीफ़ में सहरी खाने के बाद अगर

सुब्ह सादिक़ होने में देर हो तो अपनी बीवी से जिमाअ़ (सोहबत) करना दुरुस्त है, ग़रज़ ये है कि सुब्ह सादिक़ से पहले पहले जिमाअ़ से फ़रागत हो जानी चाहिए, और गुस्ल चाहे सुब्ह होने के बाद हो, रोज़ा में कुछ नुक़सान न आएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–496, बहवाला मिश्कात शरीफ़ सफ़्हा–174)

सहरी के बाद कुल्ली करना

सवाल: सहरी खा कर अगर कुल्ली न करे और उसी तरह सो जाए तो रोज़ा में कुछ हरज तो नहीं?

जवाब: अगर दातों में अकटा हुआ खाना चने की मिक़्दार, या उससे ज़्यादा हलक़ में उतर गया तो रोज़ा टूट जाएगा, सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब होगी कफ़्फ़ारा नहीं। और अगर चने की मिक़्दार से कम हो तो मुफ़्सिद नहीं, लिहाज़ा फ़सादे रोज़ा की वजह से कुल्ली कर के सो जाना चाहिए।

(अहसनुलफ़तावा (पाकिस्तानी) जिल्द–4 सफ़्हा–443)

रमज़ान में फ़ज्र की जमाअ़त जल्दी करना

सवाल: रमज़ान शरीफ़ के दिनों में सहरी खाने के बाद अगर एहतिमाल हो कि फ़ज्र के वक़्त आँख न खुलेगी तो औवले वक़्त में नमाज़ पढ़ लेना कैसा है? और उसी वक़्त अज़ान कह कर जमाअ़त कर लेना, इस वजह से कि लोगों की अक्सर जमाअ़त छूट जाती है और बाज़ औक़ात क़ज़ा भी हो जाती है, कैसा है?

जवाब: हामिदन व मुसल्लियन, रमज़ानुलमुबारक में सहरी के बाद औवले वक़्त फ़ज्र की नमाज़ के लिए अगर

नमाज़ी जमा हो जाऐं और रोज़ाना के वक़्ते मामूल तक ताख़ीर होने से जमाअत छूटने या क़ज़ा हो जाने का अंदेशा है तो औवले वक़्त जमाअत कर लेना बेहतर है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–1 सफ़्हा–162)

❑❑❑

पाँचवाँ बाब

जिन चीज़ों से रोज़ा नहीं टूटता

रोज़ा में कुछ बातें ऐसी हैं कि न उनसे रोज़ा टूटता है और न मकरूह होता है। उन बातों को याद रखना चाहिए। बाज़ हज़रात महज़ अपनी अक़्ल व फ़हम से ये समझते हैं कि रोज़ा टूट गया, फिर क़स्दन खा पी लेते हैं। हालांकि इस सूरत में मस्अला ये है कि अगर मस्अला जानते हुए भूल कर खाना खाने के बाद अमदन जिमाअ़ करने की सूरत में कफ़्फ़ारा भी लाज़िम होगा, और अमदन महज़ खाना खाने की सूरत में सिर्फ़ क़ज़ा ही है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–11 सफ़्हा–104)

भूल से खाना और सोहबत करना

अगर रोज़ादार भूल कर कुछ खा पी ले, या भूले से सोहबत हो जाए, तो उसका रोज़ा नहीं गया। अगर भूल कर पेट भर के खा पी ले तब भी रोज़ा नहीं टूटता, नीज़ अगर भूल कर कई मरतबा भी खा पी लिया तब भी रोज़ा नहीं गया। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–14, बहवाला कुदूरी सफ़्हा–45)

तंदुरुस्त और ज़ईफ़ की भूल में फ़र्क़

एक शख़्स को भूल कर खाते हुए देखा तो अगर वह इस क़दर ताक़तवर है कि रोज़े से ज़्यादा तकलीफ़ नहीं

होती तो रोज़ा याद दिलाना वाजिब है। और अगर उस शख़्स में रोज़ा रखने की कूवत व ताक़त न हो, रोज़ा से तकलीफ़ होती हो तो उसको याद न दिलाए खाने दे।

(आलमगीरी जिल्द–1 सफ़हा–202)

रोज़े में सुरमे, तेल और ख़ुशबू का इस्तेमाल

रोज़ा की हालत में दिन में सुरमा लगाना, तेल लगाना, ख़ुशबू सूंघना दुरुस्त है। इससे रोज़ा में कुछ नुक़्सान नहीं आता है। बल्कि अगर सुरमा लगाने के बाद थूक या नाक की ग़लाज़त में सुरमा का असर दिखाई दे तो भी रोज़ा नहीं गया और न मकरूह हुआ।

(बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़हा–10, बहवाला कुदूरी सफ़हा–45)

नापाकी की हालत में रोज़ा रखना

सोने की हालत में एहतेलाम हो गया, फिर बग़ैर गुस्ल किए हुए रोज़ा रख लिया तो उससे रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा। (नापाकी का गुनाह अलग होगा।)

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़हा–31)

रोज़ा की हालत में हलक़ के अन्दर मक्खी, मच्छर, गर्द गुबार वग़ैरा चला जाना

रोज़ा की हालत में हलक़ के अन्दर मक्खी चली गई, या आप ही आप धुवां चला गया या, गर्द व गुबार चला गया तो रोज़ा नहीं गया, अलबत्ता अगर क़स्दन ऐसा किया तो रोज़ा टूट जाएगा। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़हा–11, बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़हा–298)

किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़हा–922 में तफ़सील के साथ ये मस्अला दर्ज है कि

रास्ता का गुबार, या आटे की छाँस, या मक्खी, मच्छर वग़ैरा उनमें से कोई भी मुंह में रोज़ा की हालत में चली जाए और मेअ़दा में पहुंच जाए तो रोज़ा के लिए नुक़्सान देह नहीं है, क्योंकि इन अशिया से बचना मुश्किल और दुश्वार है।

नीज़ यही हुक्म उसमें भी है कि अगर कोई चीज़ पीसने, या दवा कूटने का गुबार, या उसका मज़ा हलक़ में महसूस हो तो रोज़ा नहीं टूटता।

(आलमगीरी (पाकिस्तानी) जिल्द–2 सफ़्हा–17)

रोज़े की हालत में आँसू का मुंह में चला जाना

अगर रोज़ादार के मुंह में आँसू दाख़िल हों, तो अगर थोड़े हों जैसे कि एक दो क़तरे, या मिस्ल उसके तो रोज़ा फ़ासिद न होगा और अगर बहुत हों कि आँसुओं की नमकीनियत मुंह में पाए और बहुत ज़्यादा जमा हो जाएं तो फिर उनको निगल जाए तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। इसी तरह चेहरा का पसीना रोज़ादार के मुंह में दाख़िल हो तो यही हुक्म है। (फ़तावा आलमगीरी उर्दू (पाकिस्तानी) जिल्द–2 सफ़्हा–17)

रोज़े की हालत में फूल सूंघना

ख़ुशबूदार इत्रीयात, गुलाब, नर्गिस वग़ैरा का फूल सूंघने से या गुस्ले जनाबत (नापाकी हालत) में इतनी देर करे कि सूरज निकल जाए, बल्कि पूरे दिन नापाकी की हालत में रहने से भी रोज़ा नहीं टूटता। (किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ़ जिल्द–1 सफ़्हा–919)

रोज़े की हालत में नक्सरी फूट जाना

सवालः रोज़ा की हालत में नक्सीर फूट गई यहां

तक कि उसका असर थूक में भी पाया गया तो क्या रोज़ा हो गया?

जवाबः उसके रोज़ा में कुछ ख़लल नहीं आया। बशर्ते कि उसके पेट में ख़ून न गया हो। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–406)

रोज़ो में कान के अन्दर तेल या पानी जाना

कान में पानी के खुदबखुद चले जाने से या क़स्दन डालने से रोज़ा नहीं टूटता, बख़िलाफ़ तेल के, उसके डालने से रोज़ा फ़ासिद हो जाता है। बशर्ते कि तेल पेट में दाख़िल हो जाए। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–32)

नाक में पानी चला जाना

सवालः रोज़ा की हालत में रोज़ा याद होते हुए वुज़ू करते वक़्त ग़लती से या जान बूझ कर दिमाग़ तक पानी पहुंच गया, या दिमाग़ तक तो नहीं पहुंचा मगर इतनी दूर तक कि उससे तकलीफ़ हुई तो शरअ़न क्या हुक्म है?

जवाबः नाक की राह से पानी पहुंचाने से रोज़ा नहीं टूटता, अगर नाक से हलक़ में पानी चला आया, तब रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। दिमाग़ तक पहुंचने की शक्ल में तरद्दुद है तहक़ीक़ कर लें। (इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–172 व जिल्द–2 सफ़्हा–129)

आँख में दवा डालना

बदन के मसामों से जो तेल अन्दर (जिस्म में) दाख़िल हो जाता है उससे रोज़ा नहीं टूटता, इसी तरह जो शख़्स पानी से नहाया और उसको जिस्म के अन्दर सर्दी महसूस हुई तो उससे भी रोज़ा नहीं टूटता। नीज़ आँखों में दवा टपकाई तो रोज़ा नहीं टूटता अगरचे उसका मज़ा

हलक़ में महसूस हुआ। (फ़तावा आलमगीरी (पाकिस्तानी) उर्दू जिल्द–2 सफ़्हा–18)

कुल्ली करने के बाद मुंह में पानी के असरात रह जाना

कुल्ली करने के बाद पानी की तरी जो मुंह में बाक़ी रह जाती है, उसको निगल जाने से रोज़ा नहीं टूटता, मगर उसमें ये शर्त है कि कुल्ली करने के बाद एक दो मरतबा थूक मुंह से निकाल दिया जाए। इसलिए कि कुल्ली के बाद कुछ पानी बाक़ी रह जाता है, हां दो एक मरतबा थूक देने के बाद फिर पानी नहीं रह जाता अलबत्ता हल्की सी तरी रह जाती है, इसमें कुछ हरज नहीं।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–32)

नाक को हलक़ की जानिब चढ़ाना

नाक को रोज़े की हालत में इतनी ज़ोर से सुड़क लिया कि हलक़ में चली गई, तो इससे रोज़ा नहीं टूटा, इसी तरह मुंह की राल सुड़क कर निगल जाने से भी रोज़ा नहीं टूटता। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–12, बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–278)

रोज़े में थूक या राल निगल जाना

रोज़े की हालत में मुंह में थूक या राल जो जमा हो जाए उसको निगल ले, या दाँतों की झिर्री में खाने की कोई चीज़ रह गई है उसको निगल ले तो इससे भी रोज़ा को नुक़्सान नहीं पहुंचता और क़स्दन ऐसा किया तो भी रोज़ा दुरुस्त होगा। हां अगर उस चीज़ की मिक़्दार इतनी हो जिसको उमूमन ज़्यादा कहा जाता है तो उसके निगलने से ख़्वाह बेइरादा ही ऐसा हुआ हो रोज़ा बातिल हो जाएगा।

(किताबुलफ़िक्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़हा–920)

बातें करते वक़्त होंट थूक में तर हो जाना

अगर किसी के होंट बातें करते वक़्त या किसी वक़्त थूक में तर हो जाऐं, फिर उसको निगल जाए तो ज़रूरत की वजह से रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा।

इसी तरह अगर मुंह से राल थोड़ी तक बही और उसका तार मुंह के अन्दर के लुआब से मिला हुआ था, फिर वह उसको मुंह के अन्दर ले जा कर निगल गया तो रोज़ा नहीं टूटेगा, इसलिए कि उसका बाहर निकलना पूरा नहीं हुआ था। और अगर उसका तार टूट गया था तो फिर उसका हुक्म मुख़्तलिफ़ है। यानी मुंह के लुआब से तार टूट जाने के बाद उस राल को मुंह के अन्दर लिया तो रोज़ा टूट जाएगा। (फ़तावा आलमगीरी उर्दू (पाकिस्तानी) जिल्द–2 सफ़हा–17)

दाँतों में ख़िलाल करने से मुंह में रेशा चला जाना

दाँतों में गोश्त का रेशा अटका हुआ था, या छाली का टुकड़ा वग़ैरा, या कोई और चीज़ थी, उसको ख़िलाल करने से खा लिया, लेकिन उसको मुंह से बाहर नहीं निकाला था, आप ही आप हलक़ में चला गया तो देखो अगर चने की मिक़्दार से कम है, तो रोज़ा नहीं गया, अगर चने के बराबर, या उससे ज़्यादा है, तो रोज़ा जाता रहा। अलबत्ता अगर मुंह से बाहर निकाल लिया था फिर उसके बाद निगल लिया तो हर हाल में रोज़ा टूट गया चाहे चने के बराबर हो या उससे भी कम हो, दोनों का हुक्म एक ही है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़हा–11,

बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–208)

रमज़ान में सोने वाले का उठ कर दाँत में ख़ून देखना

सवालः रमाज़ान में दोपहर को एक शख़्स सोता था, जब उठा तो उसके दाँत में ख़ून था, ये यक़ीन नहीं कि सोते वक़्त ख़ून मुंह में गया या नहीं, अब रोज़ा का क्या हुक्म है?

जवाबः इस सूरत में रोज़ा नहीं जाता। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–413, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–134)

ख़ून में मिला हुआ थूक निगल जाना

मुंह से ख़ून निकलता है उसको थूक के साथ निगल जाए तो रोज़ा टूट गया। अलबत्ता अगर ख़ून थूक से कम हो और ख़ून का मज़ा हलक़ में मालूम न हो तो रोज़ा नहीं टूटता। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–13)

पान की सुर्ख़ी निगलना

सवालः सहरी के बाद पान खाया, दिन निकलने पर पान की सुर्ख़ी थूक में मौजूद है, ऐसे थूक के निगलने से रोज़ा टूट जाएगा या नहीं?

अगर कुल्ली, ग़रारा किया हो तो फिर क्या हुक्म है? बाज़ मरतबा कुल्ली करने के बाद हल्की सी सुर्ख़ी थूक में रह जाती है जिसका दूर करना मुश्किल व दुश्वार है शरई क्या हुक्म है?

जवाबः बाहर से रंग का असर अगर थूक में हो जाए तो रोज़ा टूट जाएगा। लेकिन पान जो सुब्ह सादिक़ से पहले खा लिया और उसके अजज़ा मुंह में न रहे और कुल्ली वग़ैरा कर के मुंह को ख़ूब साफ़ कर लिया फिर

अगर सुब्ह को थूक में सुर्ख़ी का असर बाक़ी रहा और उसको निगल लिया तो उसमें मुफ़्सिदे सौम का हुक्म न होगा। थूक अगर सुर्ख़ी माएल है तो रोज़ा नहीं टूटेगा। लेकिन एहतियात ज़रूरी है, और जहां तक हो सके कुछ असर न छोड़ना चाहिए, ख़ूब मुंह को साफ़ कर लेना चाहिए, और अगर किसी को शक व शुब्हा हो तो उस रोज़ा की क़ज़ा कर ले। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–415, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–141, 142)

सहरी के वक़्त मुंह में पान लेकर सो जाना

सवालः रोज़े की नीयत से पान खा कर लेट गए, जब सुब्ह को जागे तो किसी के मुंह में पूरा पान था और किसी के मुंह में चने के बराबर और किसी के मुंह में कुछ भी नहीं था तो इस सूरत में किस किस का रोज़ा हुआ, शरई हुक्म क्या है?

जवाबः अगर सोते वक़्त मुंह में पान लेकर सोया और सुब्ह तक मुंह में रहा, तो रोज़ा जाता रहेगा, जिसके मुंह में पान न पाया गया हो तो ज़ाहिर है कि वह उसको निगल गया हो, और यही कहा जाएगा कि सुब्ह के बाद निगला है, और अगर पान सालिम भी पाया गया तब भी ग़ालिब है कि उसका अर्क़ हलक़ में गया होगा। दलील उसकी ये है कि हुकमा व अत्तिब्बा असलुस्सूस वग़ैरा मुंह में डाल कर सोने को बताते हैं, अगर अर्क़ न पहुंचता तो उससे क्या नफ़ा। जब पहुंचना साबित हो गया तो सोने की हालत में खाए पिए तो क़ज़ा वाजिब है और अगर सोने से पहले पान थूक दिया और ग़रग़रा वग़ैरा नहीं किया तो अगर मुंह में चने के बराबर या चने से ज़्यादा

था तो क़ज़ा वाजिब है और उससे कम है तो रोज़ा फ़ासिद नहीं। (इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–172)

मुंह में रेत चला जाना

सवालः मुंह में रेत पहुंची और थूक दिया और बाद में थूक निगल गया। फिर दाँतों में रेत मालूम हुई कि रेत अन्दर ही रह गई है तो उससे रोज़ा टूटा या नहीं?

जवाबः इस सूरत में रोज़ा नहीं टूआ।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–409, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–6 सफ़्हा–134)

मसनूई दाँत का हुक्म

सवालः जो शख़्स मुंह में हर वक़्त मसनूई दाँत लगाए रहता है, न उनमें बू है, और न मज़ा है, रोज़े की हालत में ये दाँत मंह में रहते हैं क्या इससे रोज़ा मकरूह होता है?

जवाबः मकरूह न होगा। (इमदादुलफ़तावा जदीद तरतीब जिल्द–2 सफ़्हा–142)

पाएरिया की पीप मुंह में चली जाना

सवालः मरज़ पाएरिया की वजह से मसोढ़ों में पीप आती है, उसको थूक के साथ निगल जाने से रोज़ा टूटेगा या नहीं। मालूम ये करना है कि जो चीज़ मुंह में ही पैदा हो रही है उसके अजज़ा क़स्दन या बिला क़स्द थूक के साथ हलक़ में चले जाऐं तो क्या हुक्म है। जो चीज़ ख़ारिजे मुंह में रखी जाए, जैसे सोते में पान मुंह में रह गया और सुब्ह को आँख खुली तो क्या दोनों में फ़र्क़ है या नहीं?

जवाबः पाएरिया की पीप को पान की पीक पर क़्यास

करना और मुफ़्सिदे सौम क़रार देना सही नहीं है। पान ख़ारिज से मुंह में रखा जाता है, उसकी पीक थूक पर गालिब होती है। बख़िलाफ़ पाएरिया की पीप के कि पाएरिया एक मुस्तक़िल मरज़ है, पीप मुंह में पैदा होती है। इससे एहतिराज़ मुमकिन नहीं। पीप की मिक़्दार भी कम और थूक से मग़लूब होती है लिहाज़ा मुफ़्सिदे सौम नहीं होना चाहिए। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–109, बहवाला आलमगीरी जिल्द–2 सफ़्हा–131)

डिकार के बाद मुंह में पानी आ जाना

जिस शख़्स ने सहरी में इस क़दर खाया हो कि तुलूए आफ़ताब के बाद डिकारें आती हैं और उनके साथ पानी आता है इससे रोज़ा में कुछ हरज नहीं आता है।

(फ़तावा रशीदिया कामिल जिल्द– सफ़्हा–371)

ख़ून रोकने के लिए मंजन का इस्तेमाल

सवाल: जब कि मसोढ़ों से ख़ून और मवाद निकलता हो तो किसी ऐसे मंजन का जो ख़ून को रोके और दाफ़ेए मवाद हो इस्तेमाल जाइज़ है या नहीं?

जवाब: जाइज़ है, मगर मंजन मल कर फ़ौरन मुंह धो ले और कुल्ली करे, ताकि उसका असर पेट में न जाए और मंजन ऐसा हो कि आदतन पेट में न पहुंचता हो, मगर बचना अच्छा है, इसलिए कि कराहते तंज़ीही तो बहरहाल है। एहतियात के साथ मंजन मलें और दाँतों को साफ़ करें कि हलक़ के अन्दर कुछ न जाए तो, मकरूह नहीं है। यानी मकरूहे तहरीमी नहीं है, ख़िलाफ़े औला ज़रूर है जिसका मतलब कराहते तंज़ीही है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–404, बहवाला

रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–153)

मिस्वाक और कोएले से दाँत साफ़ करना

कोएला चबा कर दाँत माँजना और मंजन से दाँत माँजना मकरूह है। और अगर इसमें से कुछ हलक़ में उतर जाएगा तो रोज़ा जाता रहेगा। और मिस्वाक से दाँत साफ़ करना दुरुस्त है, ख़्वाह सूखी मिस्वाक हो या ताज़ा उसी वक़्त की तोड़ी हुई, अगर नीम की मिस्वाक है और उसका कड़वापन मुंह में मालूम होता है जब भी मकरूह नहीं। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–13, बहवाला मराक़ियुलफ़लाह सफ़्हा–210)

मिस्वाक का रेशा पेट में चला जाना

सवालः मिस्वाक करते वक़्त उसका रेशा पेट में चला गया और कोशिश के बावजूद बाहर न निकला। क्या इससे रोज़ा फ़ासिद हो गया?

जवाबः दाँतों में अटका हुआ खाने का ज़र्रा अगर चने के दाने से कम मिक्दार में हलक़ में चला जाए तो उससे रोज़ा नहीं टूटता। उसकी वजह यही है कि उससे बचना मुश्किल है। इससे साबित हुआ कि मिस्वाक के रेशा से भी रोज़ा नहीं टूटेगा। (अहसनुलफ़तावा (पाकिस्तानी) जिल्द–4 सफ़्हा–435)

तम्बाकू का पत्ता जला कर दाँत साफ़ करना

सवालः बाज़ औरतें तम्बाकू का पत्ता जला कर उसकी राख और मिस्सी से रमज़ान शरीफ़ में दाँत साफ़ करती हैं ये कैसा है?

जवाबः अगर दाँतों को मल कर धो लिया जाए कि पेट में उसका असर न जाए तो रोज़ा में कुछ ख़लल नहीं

आता। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–406)

टूथ पेस्ट या टूथ पावडर का इस्तेमाल

रोज़े की हालत में फुक़हाए अहनाफ़ ने मिस्वाक की इजाज़त दी है, चाहे वह ख़ुश्क लकड़ी की हो जिसमें एक गुना ज़ाएक़ा मौजूद होता है, लेकिन टूथ पेस्ट या टूथ पावडर का हाल इससे मुख़्तलिफ़ है, इसमें बहुत महसूस ज़ाएक़ा होता है। मिस्वाक का न उस पर इतलाक़ होता है और न मिस्वाक की सुन्नत अदा करने के लिए उसकी ज़रूरत है इसलिए किसी ज़रूरते शदीदा के बग़ैर उसका इस्तेमाल कराहत से ख़ाली न होगा, हां उज़्र की बिना पर किया जा सकता है।

(जदीद फ़ेक़्ही मसाइल जिल्द–1 सफ़्हा–102)

रोज़े में क़ैय करना

सवालः क़ैय करने से रोज़ा टूट जाता है या नहीं?

जवाबः अगर क़ैय मुंह भर कर आई और एक चने की बराबर या उससे ज़ाएद जान बूझ कर अमदन वापस लौटा ली तो रोज़ा टूट गया। क़ज़ा फ़र्ज़ है, कफ़्फ़ारा नहीं, और अगर जान बूझ कर मुंह भर के क़ैय की तो उस सूरत में बहरहाल रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। अगरचे वापस न लौटाए। अलबत्ता मुंह भर कर क़ैय न हो तो रोज़ा नहीं टूटता।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–120)

क़स्दन क़ैय में से कुछ मुंह में चली जाना

अगर कोई शख़्स क़स्दन क़ैय करे तो अगर मुंह भर कर न होगी तो रोज़ा फ़ासिद न होगा, जो क़ैय क़स्दन की जाए और मुंह भर कर न हो वह अगर बेइख़्तियार

हलक़ के नीचे उतर जाए तो रोज़ा फ़ासिद न होगा।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–32)

अपने आप क़ैय हो जाना

आप ही आप क़ैय हो गई तो रोज़ा नहीं गया, चाहे थोड़ी सी क़ैय हुई या ज़्यादा, अलबत्ता अगर अपने इख़्तियार से क़ैय की और मुंह भर कर क़ैय हो गई, तो रोज़ा जाता रहा, और अगर इससे थोड़ी हो तो खुद करने से भी नहीं गया। नीज़ थोड़ी सी क़ैय आई फिर ख़ुद बख़ुद हलक़ में लौट गई तब भी रोज़ा नहीं टूटा। अलबत्ता अगर क़स्दन लौटा ली तो रोज़ा टूट गया।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–12, बहवाला फ़तावा हिन्दीया जिल्द–1 सफ़्हा–202)

क़ैय होने के बाद क़स्दन खाना

अगर किसी को क़ैय हुई और वह ये समझा कि मेरा रोज़ा टूट गया, इस गुमान पर फिर क़स्दन खा लिया और रोज़ा तोड़ दिया तो भी क़ज़ा वाजिब है। कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–13, बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–204)

रोज़ा की हालत में सर में तेल जज़्ब करना और मुश्तरक हिस्सा में ख़ुश्क चीज़ दाख़िल करना

अगर कोई शख़्स सर में तेल डाले, या सुरमा लगाए या मर्द अपने मुश्तरक हिस्से के सूराख़ में कोई ख़ुश्क चीज़ दाख़िल करे, और उसका सिरा बाहर रहे या तर चीज़ दाख़िल करे और वह मौज़ए हुक़्ना तक न पहुंचे तो चूंकि ये चीज़ें जौफ़ (अन्दरूनी) हिस्सा तक नहीं पहुंचती इसलिए रोज़ा फ़ासिद न होगा न कफ़्फ़ारा वाजिब होगा।

और न क़ज़ा। और अगर ख़ुश्क चीज़ मसलन रूई या कपड़ा वग़ैरा मर्द ने अपनी दुबुर (इजाबत के सूराख़) में दाख़िल की और सारी अन्दर ग़ाइब हो गई या तर चीज़ दाख़िल की और वह मौज़ए हुक़ना तक पहुंच गई तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा और सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब होगी। इसी तरह अगर कोई मर्द अपने ज़कर के सूराख़ में कोई चीज़ मसलन तेल या पानी डाले ख़्वाह पिचकारी के ज़रीए से या वैसे ही या सलाई वग़ैरा दाख़िल करे अगरचे ये चीज़ें मसाना तक पहुंच जाऐं, तो रोज़ा फ़ासिद नहीं होता।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–11 सफ़्हा–106)

रोज़े की हालत में बीवी से बोस व किनार

सवाल: क्या रोज़े की हालत में बीवी से बोस व किनार जाइज़ है?

जवाब: ये उमूर जाइज़ हैं, मगर जवान आदमी ऐसा फ़ेल रोज़े की हालत में न करे इसमें ख़ौफ़ है कि वह जिमाअ़ की तरफ़ राग़िब कर देगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–412, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–199)

रोज़े में मियाँ बीवी दोनों की शर्मगाहों का मिल जाना

सवाल: ज़ैद ने रोज़े की हालत में दिन में बीवी से प्यार किया, या बग़लगीर हुआ, या एक ने दूसरे की शर्मगाह को मिलाया जिससे शह्वत पैदा हो गई, फिर दोनों अलाहिदा हो गए तो क्या रोज़ा हो गया?

जवाब: इस सूरत में रोज़ा हो गया, मगर जवान आदमी को ऐसा करना अच्छा नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–407)

रोज़े में मज़ी का निकलना

सवाल: रोज़े में बीवी के साथ प्यार वग़ैरा करने की वजह से जोश से मज़ी आ जाए तो क्या हुक्म है?

जवाब: प्यार वग़ैरा की वजह से जो पानी निकलता है उसको मज़ी कहते हैं। इससे रोज़ा में कोई नुक़्सान नहीं आता, अलबत्ता मनी के निकलने से रोज़ा टूट जाएगा। अगर रोज़ा को ख़तरा हो तो बोस व किनार जाइज़ नहीं है, मकरूहे तहरीमी है।

(हसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–141, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–123)

रोज़ा में महज़ देखने से इंज़ाल हो जाना

महज़ देखने से या ख़्याल करने से इंज़ाल हो जाए (मनी का इख़राज) और ये ग़ैर इरादी तौर पर हो, तो रोज़ा नहीं टूटता, जैसा कि एहतिलाम से नहीं टूटता, यानी अगर किसी शख़्स को महज़ शह्वत अंगेज़ चीज के देखने या सोचने से इंज़ाल हो जाए तो इससे रोज़ा नहीं टूटता। (किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलरअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–920)

सोने की हालत में मनी के ख़ारिज होने से जिसको एहतिलाम कहते हैं अगरचे बग़ैर गुस्ल किए हुए रोज़ा रखे तो रोज़ा फ़ासिद न होगा। इसी तरह अगर किसी औरत के ख़ास हिस्सा को देखने से या सिर्फ़ किसी बात का दिल में ख़्याल करने से मनी ख़ारिज हो जाए, जब भी रोज़ा फ़ासिद न होगा।

(बहश्ती ज़ेवर हिस्सा–11 सफ़्हा–106, बहवाला कुदूरी

सफ़्हा–45 व फ़तावा हिन्दीया जिल्द–1 सफ़्हा–203)

सुब्ह सादिक़ होते ही बीवी से अलग हो गया

किसी शख़्स ने बेसबब इसके कि उसको रोज़ा का ख़्याल नहीं रहा, या अभी कुछ रात बाक़ी थी इसलिए जिमाअ़ (सोहबत) शुरू कर दिया, या कुछ खाने पीने लगा और उसके बाद जैसे ही उसको रोज़ा का ख़्याल आ गया या ज्योंहि सुब्ह सादिक़ हुई फ़ौरन बीवी से अलग हो गया, या लुक़्मा को मुंह से फेंक दिया, अगरचे अलाहिदा हो जाने के बाद मनी भी ख़ारिज हो जाए, जब भी रोज़ा फ़ासिद न होगा और ये इंज़ाल एहतेलाम के हुक्म में होगा। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–11 सफ़्हा–106, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–150)

रमज़ान में जनाबत का गुस्ल सुब्ह को करना

सवालः रमज़ान में गुस्ले जनाबत सुब्ह को करने से रोज़ा में तो कुछ नुक़सान नहीं आता?

जवाबः इससे रोज़ा में कुछ ख़लल और ख़राबी लाज़िम नहीं आती। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–414, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–138, बाब मा युफ़्सिदुस्सौम व मा ला युफ़्सिदुहू)

रोज़ा में रूमाल भिगो कर सर पर डालना

सवालः एक शख़्स रोज़ा में क़स्दन रूमाल भिगो कर इसलिए सर पर डालता है ताकि रोज़ा में तख़फ़ीफ़ हो ये फ़ेल कैसा है, क्या ये मकरूह है?

जवाबः अबूदाऊद की रिवायत और रद्दुलमुहतार की इबारत से मालूम होता है कि सही मुफ़्ता बेह क़ौल यही है। ऐसा करना मकरूह नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम

जिल्द–6 सफ़्हा–405, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–156, बाब मा युफ़्सिदुस्सौम व मा ला युफ़्सिदूहू)

रोज़े में तर कपड़ा पहनना या बार बार गुस्ल करना

सवालः रोज़े में तर कपड़ा पहनना और तीन चार मरतबा गुस्ल करना जाइज़ है या नहीं, इससे रोज़े में कुछ फ़र्क़ आता है या नहीं?

जवाबः इससे रोज़ा में कुछ फ़र्क़ नहीं आता। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–407, बहवाला आलमगीरी मिस्री जिल्द–1 सफ़्हा–186)

गर्मी की वजह से रोज़े में कुल्ली करना

रोज़े में गर्मी की वजह से कुल्ली करना, या नाक में पानी डालना, या मुंह पर पानी डालना, नहाना, कपड़ा पानी से तर कर कर के बदन पर डालना, इससे रोज़ा फ़ासिद नहीं होता। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–33)

रोज़ा में ख़ून निकलवाना

सवालः रोज़ा की हालत में बज़रीए इंजेक्शन ख़ून निकलवाना मुफ़्सिदे सौम है या नहीं?

जवाबः इससे रोज़ा नहीं टूटता। अलबत्ता अगर इसे ज़ोअफ़ व कमज़ोरी का ख़तरा हो, कि रोज़ा की ताक़त न रहेगी तो मकरूह है। (अहसनुलफ़तावा (पाकिस्तानी) जिल्द–4 सफ़्हा–425)

❑❑❑

छटा बाब

जिन चीज़ों से रोज़ा फ़ासिद हो जाता और सिर्फ़ क़ज़ा रखना पड़ती है

क़ज़ा किस को कहते हैं?

रोज़े में खाना पीना और जिमाअ़ का तर्क करना फ़र्ज़ है। पस जो कोई फ़ेल इस फ़र्ज़ के ख़िलाफ़ किया जाएगा तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। यानी रोज़ा जाता रहेगा। फ़र्क़ सिर्फ़ इतना है कि अगर कोई ऐसी चीज़ पेट में पहुंचाई जाए जिसके नाफ़ेअ़ होने का ख़्याल है ख़्वाह ग़िज़ा हो या दवा, तो ऐसी हालत में रोज़े की क़ज़ा रखना पड़ेगी और इस जुर्म का कफ़्फ़ारा देना होगा। और अगर कोई चीज़ क़स्दन न पहुंचाई जाए बल्कि ख़ुद पहुंच जाए या उसके नाफ़ेअ़ न होने का ख़्याल हो तो सिर्फ़ रोज़े की क़ज़ा रखना पड़ेगी।

इसी तरह अगर कोई ऐसा फ़ेल किया जाए जिसकी लज़्ज़त जिमाअ़ की लज़्ज़त के बराबर है तो क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब होंगे, वरना सिर्फ़ क़ज़ा।

हासिल यह है कि रोज़ा को फ़ासिद करने वाली चीज़ें दो क़िस्म की हैं, एक वह जिनसे सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम होती है दूसरे वह जिन पर क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब होते हैं।

मुन्दरजा बाला इबारत का मफ़हूम आसान लफ़्ज़ों में यूँ भी ब्यान किया जा सकता है कि जिन बातों से रोज़ा टूट जाता है उनमें से कुछ तो ऐसी हैं जिनसे रोज़ा नहीं जाता है, मगर रोज़ा के बदले सिर्फ़ एक ही रोज़ा रखना पड़ेगा। इसको शरअ़ में "क़ज़ा" कहते हैं। और कुछ काम ऐसे हैं जिनसे रोज़ा टूट जाता है, उसके बाद एक रोज़ा क़ज़ा का और दो महीने के मुसलसल रोज़े मज़ीद रखने पड़ेंगे। इसको "कफ़्फ़ारा" कहते हैं। जिसका ब्यान आइंदा बाब में आ रहा है। यहाँ पर क़ज़ा के मसाइल ब्यान किए जा रहे हैं।

किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ़ में क़ज़ा का ये उसूल लिखा है—

जो चीज़ें पेट में इस तरह गई हों जिस तरह उसका पेट में जाना शरअ़न तस्लीम किया गया हो, मसलन किसी शैय का नाक से, मुंह से, कान से, आगे पीछे की राह से, या ज़ख़्म है जो दिमाग़ तक पहुंचा हुआ हो (दाख़िल करना) इसी में हुक़्क़ा नोशी और तम्बाकू और नसवार वग़ैरा का इस्तेमाल भी शामिल है। इन तमाम से रोज़ा बातिल हो जाता है और क़ज़ा वाजिब होती है, कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं होता।

(किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ़ जिल्द—1 सफ़्हा—922)

क़ज़ा रोज़ा रखने का तरीक़ा

क़ज़ा रोज़ों का मुसलसल रखना ज़रूरी नहीं है। ख़्वाह रमज़ान के रोज़ों की क़ज़ा हो या किसी और क़िस्म के रोज़ों की, क़ज़ा के रोज़ों का उज़्र ज़ाएल होते

ही रखना ज़रूरी नहीं, इख़्तियार है जब चाहे रखे। नमाज़ की तरह इसमें तरतीब भी फ़र्ज़ नहीं। आदा के रोज़े बे क़ज़ा रोज़ों के रखे हुए रख सकता है।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–39)

क़ज़ा रखने का मुनासिब तरीक़ा

किसी उज़्र से रोज़ा क़ज़ा हो गया हो, तो जब उज़्र जाता रहे तो रोज़ा जल्दी अदा कर लेना चाहिए। ज़िन्दगी और ताक़त का भरोसा नहीं, क़ज़ा रोज़ों में इख़्तियार है कि लगातार रखे या एक एक दो दो कर के रखे।

(जवाहिरुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–381)

चंद साल के क़ज़ा रोज़ों में साल का मुक़र्रर करना ज़रूरी है

रोज़े की क़ज़ा में दिन तारीख़ मुक़र्रर कर के क़ज़ा की नीयत करना कि फ़लाँ दिन तारीख़ के रोज़े रखता हूँ ये ज़रूरी नहीं है, बल्कि जितने रोज़े क़ज़ा हों उतने ही रोज़े रख लेना चाहिए। अलबत्ता अगर दो रमज़ान के कुछ रोज़े क़ज़ा हो गए और दोनों साल के रोज़ों की क़ज़ा करनी है तो साल का मुक़र्रर करना ज़रूरी है। यानी इस तरह से नीयत करे कि फ़लाँ साल के रोज़ों की क़ज़ा रखता हूँ।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–6, बहवाला कुदूरी सफ़्हा–47)

क़ज़ा रखने नहीं पाए थे कि दूसरा रमज़ान आ गया

अभी गुज़श्ता रमज़ान के क़ज़ा नहीं रखे थे कि दूसरा रमज़ान आ गया तो ख़ैर अब रमज़ान के अदा रोज़े रखे, ईद के बाद क़ज़ा रखे, लेकिन इतनी देर करना बुरी बात है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–6, बहवाला कुदूरी

सफ़्हा–47)

रमज़ान में बेहोश हो जाना

रमज़ान के महीना में अगर कोई दिन में बेहोश रहा तो बेहोशी होने के दिन के अलावा जितने दिन बेहोश रहा उतने दिनों की क़ज़ा रखे, जिस दिन बेहोश रहा उस एक दिन की क़ज़ा वाजिब नहीं है, क्योंकि उस दिन का रोज़ा नीयत की वजह से दुरुस्त हो गया। हाँ अगर उस दिन रोज़ा ही नहीं रखा था या उस दिन हलक़ में कोई दवाई डाली गई और हलक़ से उतर गई तो उस दिन की क़ज़ा वाजिब है।

और अगर कोई रात को बेहोश हुआ तब भी जिस रात को बेहोश हुआ उस एक दिन की क़ज़ा वाजिब नहीं है बाक़ी और जितने दिन बेहोश रहे सबकी क़ज़ा वाजिब है। हाँ अगर उस रात को सुब्ह का रोज़ा रखने की नीयत न थी या सुब्ह को कोई दवाई हलक़ में डाली गई तो उस दिन का रोज़ा भी क़ज़ा रखे। (बहिश्ती ज़ेवर सफ़्हा–3, 6 बहवाला क़ुदूरी सफ़्हा–47)

पूरे रमज़ान बेहोश रहना

अगर कोई पूरे रमज़ान बेहोश रहे, जब भी क़ज़ा रखना चाहिए, ये न समझे कि सब रोज़े मआफ़ हो गए, अलबत्ता अगर जुनून हो गया और पूरे रमज़ान दीवानगी रही तो उस रमज़ान के किसी भी रोज़े की क़ज़ा वाजिब नहीं। और अगर रमज़ान शरीफ़ के महीने में किसी दिन जुनून जता रहा और अक़्ल ठिकाने हो गई, तो अब से रोज़े रखने शुरू करे और जितने रोज़े जुनून में गए हैं, उनकी भी क़ज़ा रखनी पड़ेगी। और अगर उसको अपने नीयत

करने या न करने का हाल मालूम हो तो फिर अपने इल्म के मुवाफ़िक़ अमल करे, अगर नीयत करने का इल्म हो तो उस दिन का रोज़ा क़ज़ा न करे, और अगर नीयत न करने का इल्म हो तो उस दिन का भी रोज़ा क़ज़ा करे।
(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–38)

जुनून की हालत में रोज़ा

जुनून की हालत में रोज़ा रखना मआफ़ है। यानी क़ज़ा फ़र्ज़ नहीं है, सब मआफ़ है। अगर ऐसा जुनून हो कि रात को किसी वक़्त न होता हो तो उस ज़माना के रोज़ों की क़ज़ा भी लाज़िम न होगी और अगर किसी वक़्त इफ़ाक़ा हो जाता है, ख़्वाह रात को या दिन को तो फिर उसकी क़ज़ा करनी पड़ेगी।

जुनून के सबब से जो रोज़े क़ज़ा हो गए हों उनमें न क़ज़ा की ज़रूरत है न फ़िदया की। हाँ अगर किसी वक़्त इफ़ाक़ा हो जाता है तो फिर उसी दिन की क़ज़ा ज़रूरी है। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–38, 39)

रोज़ा में धुवें का सूंघना

अगर कोई शख़्स क़स्दन खुशबू की कोई चीज़ जला कर उसका धुवां अपनी तरफ़ लेगा और उसको सूंघे गा तो रोज़ा याद होने के बावजूद धूवें को दाख़िल करना ख़्वाह किसी भी सूरत से हो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। धुवां अंबर का हो, या अगरबत्ती जला कर उसका हो या इनके अलावा किसी भी चीज़ का हो, क्योंकि रोज़ादार के लिए उस धुवें से बचना मुम्किन था। और अगर किसी रोज़ादार के मुंह या हलक़ में बिला क़स्द व बिला इख़्तियार धुवां चला जाए तो उससे रोज़ा फ़ासिद नहीं होता क्योंकि

उससे बचना क़तअ़न नामुम्किन है। इसलिए कि अगर मुंह भी बंद कर ले तब भी नाक के ज़रीए से धुवां चला जाएगा। और रोज़े की हालत में मुर्दा को धूनी वग़ैरा देने का मस्अला इसमें शामिल नहीं है। यानी इससे रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा, क्योंकि वहां पर धूनी देना है। धूनी का लेना नहीं है। और धूनी का देना अलग है। इस मस्अला से अक्सर हज़रात ग़ाफ़िल रहते हैं, इस बारे में एहतियात बहुत ज़रूरी है।

नोटः ये बात भी समझ लेनी ज़रूरी है, कि इस मस्अला को मुश्क, गुलाब और दीगर ख़ुशबू के सूंघने पर क़्यास नहीं करना चाहिए, क्योंकि महज़ ख़ुशबू और उस धुवें के जो पकाने के इस्तेमाल में क़िया जाता है इसमें और उस धुवें में जो क़स्दन हलक़ में दाख़िल किया जाए। बहुत बड़ा फ़र्क़ है।

धुवें के बारे में मौलाना थानवी (रह.) का फ़तवा

अगर रोज़ेदार को ऐसे फ़ेल से बचना और एहतेराज़ करना बग़ैर नुक़्सान व हरज के मुम्किन हो जो उसके हलक़ में गुबार या धुवें के दाख़िल होने का बाइस हो, बावजूद इसके उस फ़ेल को करे तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। (इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–138)

लोबान सुलगाई, फिर उसको अपने पास रख कर सूंघा तो रोज़ा जाता रहा। सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है, अलबत्ता इत्र, केवड़ा, गुलाब का फूल वग़ैरा और ख़ुशबू सूंघना जिसमें धुवां न हो दुरुस्त है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–11)

रोज़ा में दवा सूंघना

सवालः "अटलूस" एक दवा है, जो नौसादर और

चूना मिला कर बनती है, इसे शीशी में भर कर नाक से लगा कर सूँघा जाता है उसकी तेज़ी दिमाग़ तक पहुंचती है उसके सूंघने से रोज़ा टूट जाता है या नहीं?

जवाबः इस सूरत में रोज़ा टूट गया, क़ज़ा लाज़िम है। जैसा कि दुर्रेमुख़्तार में है कि रोज़ा के याद होते हुए हलक़ में धुवां जाए, अंबर या ऊद का ही क्यों न हो, तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। क़ज़ा वाजिब होगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–418, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–134 बाब मा युफ़्सिदुस्सौम)

रोज़ा में बेइख़्तियार मुंह में पानी चला जाना

कुल्ली करते वक़्त हलक़ में पानी चला गया और रोज़ा याद था तो रोज़ा जाता रहा क़ज़ा वाजिब है। कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–11, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–150)

जमाही लेते वक़्त मुंह में पानी या बर्फ़ चला जाना

अगर किसी शख़्स को जमाही आई और उसने अपना सर उठाया, या उसके हलक़ में पानी का क़तरा किसी परनाला वग़ैरा से टपक गया, तो उसका रोज़ा फ़ासिद हो गया, सिर्फ़ क़ज़ा रखे और इसी तरह से अगर बारिश का पानी या बर्फ़ किसी के मुंह में दाख़िल हो गया, तो उसका रोज़ा फ़ासिद हो गया, सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब होगी।

नीज़ अगर किसी ने रोज़ादार की तरफ़ कुछ फेंका और वह उसके हलक़ में जा पड़े, तो जब भी यही हुक्म है। और इसी तरह नहाते हुए उसके मुंह में पानी चला जाए, जब भी यही हुक्म है। और अगर कोई रोज़ादार सोते हुए पानी पी ले तो उसका भी यही हुक्म है, यानी

इन सब सूरतों में सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब होगी, कफ़्फ़ारा नहीं। (फ़तावा आलमगीरी उर्दू (पाकिस्तानी) जिल्द–2 सफ़्हा–7)

अमदन खाँसने से कोई चीज़ हलक़ के ऊपरी हिस्सा तक आ जाना

अमदन खाँसने और खिंकारने से कोई चीज़ मेअ़दा से हलक़ के ऊपरी हिस्सा तक आ जाए, तो रोज़ टूट जाएगा। बलग़म को अन्दर से बाहर निकाल कर थूक देना इस हुक्म में दाख़िल नहीं, क्योंकि ऐसा करने की बार बार ज़रूरत पड़ती है। हाँ अगर वह मुंह में आ कर रुक जाए और उसको निगल लिया जाए तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। (किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिअरबआ़ जिल्द–1 सफ़्हा–923)

रोज़े में ख़ून का हलक़ के अन्दर चला जाना

सवालः नक्सीर का ख़ून हलक़ में पहुंच कर पेट में चला गया, तो उससे रोज़ा टूटा या नहीं?

जवाबः उससे रोज़ा टूट गया। सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं। (अहसनुलफ़तावा (पाकिस्तानी) जिल्द–2 सफ़्हा–429)

रोज़ा में मिट्टी खाना

अगर किसी ने ऐसी मिट्टी खाई जिससे सर धोते हैं तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा, सिर्फ़ क़ज़ा रखे, और अगर उस मिट्टी के खाने की उस शख़्स को आदत है तो क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब होंगे।

(आलमगीरी उर्दू (पाकिस्तानी) जिल्द–2 सफ़्हा–16)

रोज़े में कंकर या लोहे का टुकड़ा खाना

किसी ने कंकरी या लोहे का टुकड़ा वग़ैरा कोई ऐसी

चीज़ खाई जिसको नहीं खाया करते, और न कोई उसको बतौर दवा खाता है, तो उसका रोज़ा जाता रहा। लेकिन उस पर कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं, सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है। और अगर ऐसी चीज़ खाई या पी, जिसको लोग खाया करते हैं। या कोई ऐसी चीज़ है कि यूँ तो नहीं खाते लेकिन बतौर दवा के ज़रूरत के वक़्त खाते हैं, तो भी रोज़ा जाता रहा, क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब हैं।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़हा–12)

रोज़े में रंगीन धागा मुंह में लेकर बटना

रोज़े की हालत में रंगीन धागा मुंह में लेकर बटा, थूक में उसका रंग आ गया, तो उस थूक को अगर वह निगल गया तो रोज़ा टूट गया, सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम है।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़हा–131)

रोज़ा में दाँत दाढ़ निकलवाना या दवा लगाना

सवालः रोज़ा में दाँत या दाढ़ निकलवाना और मुंह में दवा लगाना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः शदीद ज़रूरत के तहत जाइज़ है और बिला ज़रूरत मकरूह है, अगर ख़ून या दवा पेट के अन्दर चली जाए और थूक पर ग़ालिब या उसके बराबर हो, या उसका मज़ा महसूस हो, तो रोज़ा टूट जाएगा। सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है। (अहसनुल फ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़हा–426, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़हा–107)

क्या दाँत का ख़ून मुफ़्सिदे सौम है?

सवालः रोज़े की हालत में दाँत से ख़ून निकल कर हलक़ में चला गया, तो क्या रोज़ा की क़ज़ा वाजिब है या कफ़्फ़ारा भी?

जवाबः ख़ून कम मिक़्दार में हो, थूक का ग़लबा हो, तो रोज़ा फ़ासिद न होगा। हाँ अगर ख़ून का मज़ा हलक़ में महसूस हो तो रोज़ा टूट जाएगा। इसी तरह ख़ून थूक से ज़्यादा या बराबर हो तब भी रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। क़ज़ा वाजिब है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–108, बहवाला आमलगीरी जिल्द–2 सफ़्हा–131)

दाँत में फंसी हुई चीज़ का हुक्म

दाँत के दरमियान फंसी हुई चीज़ जिसको थूका या निगला जा सकता है उसका खा लेना भी इसी हुक्म में दाख़िल है, यानी इससे रोज़ा जाता रहेगा अगरचे उसकी मिक़्दार चने से कम हो।

(किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–933)

नाक, कान और आँख के मसाइल

सवालः (1) रोज़े में कान और आँख वग़ैरा के सूराख़ में कोई शैय मसलन तेल या अर्क़ या पानी वग़ैरा या कोई ख़ुश्क सुफ़ूफ़ वग़ैरा दवा के तौर पर डालना और सर में तक़वियते दिमाग़ के लिए तेल, अर्क़ या पानी वग़ैरा डालना कैसा है?

(2) पानी के अन्दर रीह ख़ारिज करना, ग़ोता लगाना और ग़रग़रा करना कैसा है।?

(3) सर पर कहीं लेप लगाना, पेट पर या और कहीं गहरा ज़ख़्म हो तो उस पर मरहम, अर्क़ या तेल वग़ैरा दवा के तौर पर लगाना जाइज़ है या नहीं? और अगर जाइज़ नहीं है तो रोज़ादार मस्अला जानते हुए, या न जानते हुए इन उमूर में किसी का मुरतकिब हो जाए तो

किस सूरत में क़ज़ा और किस सूरत में कफ़्फ़ारा होगा?

जवाबः (1) नाक, कान में तर दवा डालने से रोज़ा टूट जाएगा और अगर ख़ुश्क चीज़ का अन्दर तक पहुंचना यक़ीनी है तो रोज़ा फ़ासिद होगा वरना नहीं।

(2) आँख में दवा डालना और सर में तेल वग़ैरा लगाने से रोज़ा नहीं टूटता। इसी तरह पानी मज़कूरा मक़ामात में पहुंच जाए तो रोज़ा फ़ासिद नहीं होता।

(3) पानी में रीह ख़ारिज करने और ग़ोता लगाने से भी कुछ नहीं होता, और अगर पानी अन्दर तक पहुंच जाए तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। जिस तरह से इस्तिंजा करने में मुबालग़ा करने से अगर हुक़ना में पानी पहुंच जाए तो रोज़ा फ़ासिद हो जाता है। सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब होती है। और ग़रग़रा करने में अगर पानी हलक़ से उतर गया तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। और अगर हलक़ से नीचे पानी न उतरे तो कोई हरज नहीं है।

(3) सर वग़ैरा पर लेप करना जाइज़ है। और अगर ज़ख़्म सर या पेट में बहुत गहरा अन्दर तक पहुंचा हुआ हो तो उसमें तर दवा डालने से रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा और बाक़ी ज़ख़्मों पर दवा डालना मुफ़्सिद नहीं है, और ख़ुश्क दवा में तफ़सील मज़कूर है। और सूरते मज़कूरा में से जिनमें रोज़ा फ़ासिद नहीं हुआ, उनमें न क़ज़ा है न कफ़्फ़ारा। और जिसमें फ़ासिद हो गया उनमें क़ज़ा है कफ़्फ़ारा नहीं। अगर अमदन हो ख़्वाह मस्अला जानता हो या न जानता हो। और अगर भूले से हो तो रोज़ा बाक़ी रहता है। क्योंकि जब रोज़ा में भूल कर खाने पीने से रोज़ा फ़ासिद नहीं होता, तो इन सूरतों में भूल की वजह

से बदरजए औला फ़ासिद न होगा।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–171)

कुल्ली करने और नाक में पानी डालने में मुबालगा करने (यानी देर तक करने) से अगर पानी मेअ़दा तक चला जाए तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा, सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब होगी। (किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ़ जिल्द–1 सफ़्हा–922)

रोज़े में कान के अन्दर तेल डालना

किसी ने रोज़े में कान में तेल डाला, या नास लिया (सूंघनी सूंघी) या जुलाब में अमल लिया और पीने की दवा नहीं पी (यानी इजाबत की दवा खाई नहीं बल्कि दवा दुबुर के रास्ते से अन्दर ले ली) तब भी रोज़ा जाता रहा, लेकिन कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–13, बहवाला जौहरा नैयरा जिल्द–1 सफ़्हा–145)

कान में तेल डालने से रोज़ा टूटने की वजह

सवालः रोज़ादार कान में तेल क्यों नहीं डाल सकता? जब कि पानी जाने से रोज़ा नहीं टूटता?

जवाबः हिदाया में वज्हे फ़र्क़ ये ब्यान की है कि कान में पानी का पहुंचना या पहुंचना बदन की इस्लाह के लिए नहीं है। बख़िलाफ़ तेल के और ये भी वजह फ़र्क़ की हो सकती है कि पानी से बचना दुश्वार है और इसमें ज़रूरत है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–418)

रोज़ा में कान सलाई वग़ैरा से खुजाना

किसी तिनके वग़ैरा को लेकर कान के अन्दरूनी हिस्से में दाख़िल करने से रोज़ा टूट जाता है। क्योंकि कान का

अन्दरूनी हिस्सा शरअन पेट के हुक्म में दाख़िल है।

(किताबुलफ़िक्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–922)

नोट: ये हुक्म अन्दरूनी हिस्से का है, लेकिन अक्सर बाहर के हिस्सा में ही खुजाया जाता है जिसके बारे में मज़ाहिरे हक़ जदीद में मस्अला दर्ज है–

"तिनके से कान खुजलाया और तिनके पर कान का मैल ज़ाहिर हुआ और फिर उस तिनके को कान में डाला और इसी तरह कई मरतबा किया तब भी रोज़ा फ़ासिद नहीं हुआ।" मज़ाहिरे हक़ जदीद जिल्द–2 सफ़्हा–17।

मुंह, कान, नाक, मक़अ़द, फ़रज, शिकम (पेट) और खोपड़ी के अन्दरूनी ज़ख़्म की राह से रोज़े को तोड़ने वाली चीज़ें, जौफ़े मेअ़दा या दिमाग़ तक पहुंच जाऐं तो रोज़ा फ़ासिद हो जाता है। ख़ुलासा ये है कि कान में डाली हुई दवा और तेल दिमाग़ में बराहे रास्त या बिलवास्ता मेअ़दा में पहुंचने से रोज़ा फ़ासिद हो जाता है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–17, बहवाला मराक़ियुलफ़लाह सफ़्हा–133)

रोज़े में सुब्ह के वक़्त रात समझ कर जिमाअ़ करना

सवाल: एक शख़्स सर्दी के रमज़ान में रात को सहरी की नीयत से लेट गया, आँख खुली तो रात के ख़्याल से बीवी से जिमाअ़ कर लिया, बाहर आ कर देखा तो सुब्ह हो गई थी। पस उन दोनों ने इस ख़्याल से कि रोज़ा नहीं हुआ पानी पी लिया, इस सूरत में कफ़्फ़ारा है या सिर्फ़ क़ज़ा, और अगर पानी न पीते तो उन पर कफ्फ़ारा होता या क़ज़ा?

जवाबः जब रात के गुमान से जिमाअ़ किया और बाद में सुब्ह का होना मालूम हुआ तो ये रोज़ा सही नहीं हुआ लेकिन तमाम दिन खाना पीना न चाहिए और कफ़्फ़ारा लाज़िम न आएगा, और अगर दिन में पानी पी लिया तो रमज़ान की ताज़ीम का तारिक हुआ। कफ़्फ़ारा लाज़िम नहीं है। क़ज़ा हर सूरत में है ख़्वाह पानी पिया हो या न पिया हो।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–171)

रोज़े में मुर्दा औरत से जिमाअ़ करना

किसी ने मुर्दा औरत से या ऐसी कमसिन नाबालिग़ बच्ची से जिसके साथ उमूमन जिमाअ़ की रग़बत नहीं होती, या किसी जानवर से जिमाअ़ किया, या किसी से बग़लगीर हुआ और बोसा लिया, या जलक़ का मुरतकिब हुआ और इन सब सूरतों में मनी ख़ारिज हो गई तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। कफ़्फ़ारा वाजिब न होगा, सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–11 सफ़्हा–104, बहवाला शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–262)

रोज़े में प्यार करने की वजह से इंज़ाल हो जाना

सवालः एक शख़्स ने माहे रमज़ान में दिन में अपनी बीवी को प्यार किया, जिसकी वजह से इंज़ाल हो गया (मनी ख़ारिज हो गई) इस सूरत में शरई क्या हुक्म है?

जवाबः इस सूरत में सिर्फ़ उस रोज़े की क़ज़ा वाजिब है, कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं होता, मगर इसी के साथ रमज़ान का एहतेराम ज़रूरी है, उसके बाद दिन में कुछ खाये पिये नहीं। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–417,

बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–142)

रोज़े में बीवी से बग़लगीर होने पर इंज़ाल हो जाना

सवालः एक शख़्स माहे रमज़ान में रोज़े की हालत में अपनी बीवी से बग़लगीर हुआ, कुछ देर तक उसी हालत में रहने के बाद इंज़ाल हो गया। उस रोज़े का कफ़्फ़ारा वाजिब है या सिर्फ़ क़ज़ा?

जवाबः इस सूरत में महज़ उस रोज़े की क़ज़ा लाज़िम है कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं।

बीवी के पास सिर्फ़ बैठने से इंज़ाल हो जाना

सवालः एक शख़्स रमज़ानुलमुबारक में दिन के वक़्त अपनी बीवी के पास बैठा और कमज़ोरी की वजह से उसको इंज़ाल हो गया तो उस पर क़ज़ा है या कफ़्फ़ारा भी आएगा?

जवाबः अगर कोई शख़्स रमज़ानुलमुबारक में दिन के वक़्त अपनी बीवी के पास बैठे और कमज़ोरी की वजह से उसको इंज़ाल हो जाए तो इस सूरत में उस रोज़े की क़ज़ा लाज़िम है, कफ़्फ़ारा नहीं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–424, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–142)

मुबाशरते फ़ाहिशा का हुक्म

मुबाशरते फ़ाहिशा यानी शर्मगाहों का आपस में मिलाना (बग़ैर दुख़ूल के) अगर इस सूरत में इंज़ाल हो जाए तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा, क़ज़ा वाजिब होगी, कफ़्फ़ारा नहीं होगा। इसी तरह बोसा लेने और छूने से इंज़ाल हो जाए तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा और सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब होगी। (किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1

सफ़हा–923)

क्या हाथ से मनी निकालना मुफ़्सिदे सौम है

सवालः अगर कोई शख़्स रोज़े की हालत में हाथ से मनी ज़ाएल करे तो रोज़ा हो जाता है या नहीं?

जवाबः हाथ से मनी निकालने से रोज़ा टूट जाता है और क़ज़ा लाज़िम होती है, फिर ये भी वाज़ेह रहे कि ये फ़ेल बहुत बुरा है इस पर लानत भेजी गई है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–417, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–142)

पाख़ाने के रास्ते कांच निकलना

सवालः अगर किसी की कांच निकल आए (पाख़ाने के मक़ाम से निकल आती है) और उसको तर कर के चढ़ाए तो उससे रोज़ा होगा या नहीं?

जवाबः रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा, कांच को तर कर के चढ़ाने से रोज़ा टूट जाता है, इसलिए कि ये मक़ामे हुक़्ना तक पहुंच जाती है। (अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़हा–429–430, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़हा–108)

इस्तिंजा करने में मुबालग़ा करना

अगर किसी ने उंगली को पानी या तेल में तर कर के अपनी मक़अ़द में डाला, या इस्तिंजा करने में पानी अन्दरूनी हिस्से में पहुंच गया तो रोज़ा उस वक़्त फ़ासिद होगा जब मक़अ़द (पाख़ाने के मक़ाम) में डाली जाने वाली चीज़ हुक़्ना तक पहुंच जाए। यानी जहाँ पर पिचकारी वग़ैरा के ज़रीए दवा पहुंचाई जाती है, और ये उस वक़्त नहीं हो सकता जब तक इरादा और कोशिश के साथ न

किया जाए। अगर ऐसा हो गया तो रोज़ा टूट गया, सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम हागी।

और यही हुक्म उस सूरत में है जब कि मक़अद में कोई कपड़े की धज्जी या लकड़ी डाली, यानी हुक़्ना की तरह और उसका सिरा कुछ भी बाहर न रहे तो रोज़ा टूट जाएगा। और अगर उसका कुछ हिस्सा बाहर रहा सारी अन्दर नहीं गई, तो रोज़ा फ़ासिद न होगा, इसी तरह अगर किसी औरत ने अपनी उंगली तेल या पानी से तर कर के या हुक़्ना की लकड़ी शर्मगाह के अन्दर पूरी दाख़िल कर दी, तो सब सूरतों में सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब होगी कफ़्फ़ारा वाजिब न होगा।

(किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–918)

रोज़ा में हुक़्क़ा पीना

सवालः रोज़े में हुक़्क़ा पीने से क़ज़ा लाज़िम आती है या कफ़्फ़ारा भी?

जवाबः हुक्के से रोज़ा टूट जाता है, सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम आती है, और बाज़ सूरतों में कफ़्फ़ारा भी लाज़िम होता है। मसलन उसने नफ़ाबख़्श समझ कर पिया था, तो कफ़्फ़ारा और क़ज़ा दोनों लाज़िम होंगे, वरना सिर्फ़ क़ज़ा, और यही हुक्म बीड़ी सिगरेट वग़ैरा का है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–419, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–133)

बग़ैर सहरी के रोज़े को प्यास की वजह से तोड़ दिया

सवालः तरावीह के बाद रोज़े की नीयत कर के सो गए थे, सहरी के वक़्त आँख न खुली, सुब्ह को ज़बान

ख़ुश्क थी, प्यास की वजह से मालूम हुआ कि आज रोज़ा बग़ैर सहरी के पूरा नहीं हो सकता, एक रोज़ा हम ने छोड़ दिया, शरई हुक्म क्या है?

जवाबः दुर्रेमुख़्तार की इबारत से मालूम होता है कि ज़ैद को नीज़ उसके घर वालों को अगर ज़न्ने ग़ालिब था कि रोज़ा पूरा न कर सकेंगे और मरज़ या हलाकत का ख़ौफ़ था, तो इस सूरत में उन पर सिर्फ़ उसी रोज़े की क़ज़ा लाज़िम है। कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं। और ये सब कुयूद उस वक़्त हैं कि रोज़े की नीयत कर ली हो, और अगर रोज़ा की उस दिन नीयत न की हो तो भी क़ज़ा वाजिब है, कफ़्फ़ारा तो जब ही होगा जब बग़ैर ख़ौफ़ के अमदन रोज़ा की नीयत कर के तोड़ दे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–427, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–159)

भूक, प्यास की वजह से रोज़ा तोड़ देना

जिस शख़्स को भूक का इस क़दर ग़लबा हो कि अगर कुछ न खाया तो जान जाती रहेगी, या अक़्ल में फ़ुतूर आ जाएगा, तो उसको भी रोज़ा न रखना जाइज़ है, अगर नीयत कर लेने के बाद ऐसी हालत पैदा हो जाए तब भी उसको इख़्तियार है कि रोज़ा तोड़ेगा तो सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम होगी, कफ़्फ़ारा नहीं होगा, और यही हुक्म प्यास की शिद्दत में है कि रोज़ा न रखना या रखे हुए को तोड़ देना जाइज़ है। बशर्ते कि प्यास की शिद्दत इस दर्जा की हो जिस दर्जा की भूक में शर्त लगाई गई है।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–41)

मुलाज़िम का काम की शिद्दत से रोज़ा तोड़ देना

सवालः ज़ैद फ़ौज में मुलाज़िम है, रोज़े की हालत में अफ़सर ने धूप में काम करने का हुक्म दिया, जिससे उसकी सेहत ख़राब होने का अंदेशा था, यहाँ पर दवा नहीं मिलती, दवा के लिए दूर जाना पड़ता है, इसलिए रोज़ा तोड़ दिया, ज़ैद मस्अला से नावाक़िफ़ था, इसलिए उसने रोज़ा तोड़ दिया तो अब शरई हुक्म क्या है?

जवाबः अगर शिद्दते प्यास वग़ैरा से हलाकत या मरज़ का अंदेशा था तो कफ़्फ़ारा नहीं है, सिर्फ़ क़ज़ा है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–422, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–158)

आतिश ज़दगी की वजह से रोज़ा तोड़ देना

सवालः गाँव में रमज़ानुलमुबारक में सख़्त आग लगी। बाज़ मर्द और औरत ने रोज़े तोड़ दिए, तो उनके लिए क्या हुक्म है?

जवाबः अगर उस आतिश ज़दगी में शिद्दते भूक व प्यास या ख़ौफ़े जान की वजह से रोज़ा तोड़ा, तो उन पर सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम होगी, कफ़्फ़ारा वाजिब न होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–445)

ग़ुरूबे आफ़ताब समझ कर इफ़्तार कर लिया, बाद में सूरज नज़र आ गया

सवालः रमज़ान शरीफ़ में बहुत घटा थी, और ये समझ कर कि इफ़्तार का वक़्त हो गया, तो सूरज ग़ुरूब हो गया, इफ़्तार कर लिया, इफ़्तार करने के बाद सूरज निकल गया तो अब क्या हुक्म है?

जवाबः उस रोज़े की क़ज़ा लाज़िम है, कफ़्फ़ारा वाजिब

नहीं, और कुछ गुनाह भी नहीं हुआ, मगर रोज़ा की क़ज़ा लाज़िम है, ज़रूर करनी चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–436, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–207)

सुब्ह सादिक़ के वक़्त दूध पी लेना

सवालः अगर कोई शख़्स सुब्ह सादिक़ के वक़्त दूध पी कर रोज़ा रख ले, तो उस पर रोज़े की क़ज़ा है या कफ़्फ़ारा?

जवाबः अगर रमज़ान शरीफ़ का रोज़ा है, और सुब्ह सादिक़ हो जाना उसको मालूम है, फिर दूध पिया है। तो क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों लाज़िम है, और अगर उसको सुब्ह सादिक़ का होना मालूम न था और उसने ये समझ कर सहरी खाई कि अभी सुब्ह नहीं हुई तो सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम है कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–439, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–147–149, बाब मायुफ़्सिदुस्सौम)

नफ़्ल रोज़े का नीयत के बाद वाजिब हो जाना

जो नफ़्ल रोज़ा क़स्दन शुरू किया गया हो, शुरू करने के बाद उसका तमाम करना ज़रूरी है। फ़ासिद होने की सूरत में उसकी क़ज़ा ज़रूरी है, ख़्वाह क़स्दन फ़ासिद कर ले या बिला क़स्द फ़ासिद हो जाए।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–41)

भूले से खाने की दो सूरतें

एक शख़्स को रोज़े का ख़्याल न रहा, जिसकी वजह से उसने कुछ खा पी लिया, या जिमाअ़ कर लिया, बाद में रोज़े का ख़्याल आया और समझा कि मेरा रोज़ा जाता

रहा। इस ख़्याल से फिर क़स्दन कुछ खा पी लिया, तो उसका रोज़ा उस सूरत में फ़ासिद हो जाएगा। कफ़्फ़ारा लाज़िम न होगा, सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब होगी, और अगर वह मस्अला जानता है, फिर भूल कर ऐसा करने के बाद अमदन रोज़ा तोड़े, तो अब बाद में जिमाअ़ करने की सूरत में कफ़्फ़ारा भी लाज़िम होगा और महज़ खाने की सूरत में उस वक़्त भी सिर्फ़ क़ज़ा है।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–11 सफ़्हा–104, बहवाला शरहुत्तनवीर सफ़्हा–150)

क़ैय और एहतिलाम होने के बाद अमदन खाना

किसी को बेइख़्तियार क़ैय हो गई, या एहतिलाम हो गया, या सिर्फ़ औरत वग़ैरा को देखने से इंज़ाल हो गया और मस्अला न मालूम होने के सबब वह ये समझा कि मेरा रोज़ा जाता रहा, फिर उसने अमदन खा पी लिया तो रोज़ा फ़ासिद हो गया, सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम होगी, कफ़्फ़ारा नहीं, और अगर मस्अला मालूम हो कि इससे नहीं टूटता फिर अमदन इफ़्तार किया तो अब जिमाअ़ करने की सूरत में कफ़्फ़ारा भी लाज़िम होगा, और सिर्फ़ खाने की सूरत में क़ज़ा लाज़िम होगी।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–11 सफ़्हा–104, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–140)

क़ज़ा के चंद मसाइल

(1) कोई मुसाफ़िर बाद निस्फ़ुन्नहार मुक़ीम हो जाए। (2) किसी औरत का हैज़ या निफ़ास बाद निस्फ़ुन्नहार बंद हो जाए। (3) बाद निस्फ़ुन्नहार किसी मजनून या बेहोश को इफ़ाक़ा हो जाए। (4) कोई मरीज़ बाद

निस्फ़ुन्नहार अच्छा हो जाए। (5) किसी ने बहालते इकराह रोज़ा फ़ासिद कर दिया हो, और बाद निस्फ़ुन्नहार उसकी मजबूरी जाती रहे। (6) कोई नाबालिग़ बाद निस्फ़ुन्नहार बालिग़ हो जाए। (7) कोई काफ़िर बाद निस्फ़ुन्नहार इस्लाम लाए, तो इन सब लोगों को बाक़ी दिन में रोज़ेदारों की तरह खाने पीने से इज्तिनाब करना मुस्तहब है, और उस दिन की क़ज़ा उन पर वाजिब होगी, अलावा नाबालिग़ और काफ़िर के।

(इल्मुलफ़िक़्ह हिस्सा–2 सफ़्हा–41)

रोज़ा टूटने के बाद का हुक्म

रमज़ान शरीफ़ में अगर किसी का रोज़ा टूट गया, तो रोज़ा टूटने के बाद भी दिन में कुछ खाना पीना दुरुस्त नहीं, सारे दिन रोज़ेदारों की तरह रहना वाजिब है।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–13, बहवाला हिदाया जिल्द–2 सफ़्हा–30)

❑❑❑

सातवाँ बाब

जिन चीज़ों से क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब होते हैं

मिश्कात शरीफ़ की एक हदीस में आंहज़रत (स.अ.व.) का इरशाद गिरामी है। जिसने बग़ैर किसी मजबूरी या बीमारी के रमज़ान का रोज़ा छोड़ दिया, वह अगर ज़िन्दगी भर रोज़े रखे तब भी उसका बदल नहीं हो सकता।

आप (स.अ.व.) के इस फ़रमान का मतलब ये नहीं है कि अब रोज़े की क़ज़ा नहीं हो सकती। बल्कि मक़्सद ये है कि जो इनआ़म व इकराम और सवाब रमज़ान में रोज़ा रखने से मिलता है वह बाद में हरगिज़ नहीं मिलता है। अपने वक़्त पर काम करने में कुछ बात ही और है।

क़ज़ा के मसाइल (जिनमें रोज़ा फ़ासिद होने की बिना पर एक रोज़े के बदले सिर्फ़ एक ही रोज़ा रखना पड़ता है।) गुज़श्ता बाब में आ चुके हैं, अब यहां उन सूरतों का तज़्किरा है जिनमें रोज़ा के फ़ासिद होने पर क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों लाज़िम होते हैं।

किसी ने रोज़ा रख कर बग़ैर किसी मजबूरी के जान बूझ कर तोड़ दिया, तो उसने सख़्त ग़लती की, और हुक़ूक़ुल्लाह की ख़िलाफ़ वरज़ी की। अब उसको अल्लाह तआ़ला से मआफ़ी मांगनी चाहिए, और मआफ़ी की सूरत ये है कि एक रोज़े के बदले एक रोज़ा रखे, और एक गुलाम आज़ाद करे, और अगर ये मुम्किन न हो तो दो

माह के मुतवातिर रोज़े रखे, और अगर ये भी ताक़त न होने की वजह से मुम्किन न हो तो फिर आख़िरी सूरत ये है कि साठ मिस्कीनों को दोनों वक़्त पेट भर कर खाना खिला दे, या साठ आदमियों को एक एक फ़ितरा की क़ीमत दे, ये बात भी याद रखनी चाहिए कि कफ़्फ़ारा सिर्फ़ उसी वक़्त आता है जब रमज़ान का रोज़ा रमज़ान ही के महीने में जान बूझ कर तोड़ दिया जाए, और अगर रमज़ान के महीने के अलावा और दिनों का रोज़ा हो, या रमज़ान की क़ज़ा का रोज़ा ही क्यों न हो, उसको तोड़ दिया जाए, तो सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब होगी, कफ़्फ़ारा नहीं होगा।

हासिल ये है कि जब किसी शुब्हा से रोज़ा फ़ासिद किया जाएगा तो कफ़्फ़ारा वाजिब न होगा, इसलिए कफ़्फ़ारा एक क़िस्म की सज़ा है, और सज़ा का मुस्तहिक़ वही शख़्स होता है जो दीदा व दानिस्ता ख़िलाफ़ वरज़ी करे।

<u>सिर्फ़ दो बातों से क़ज़ा और कफ़्फ़ारा वाजिब होता है</u>

अहनाफ़ (रह.) के नज़दीक दो बातें हैं जिनसे क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब होते हैं। औवल ये कि बग़ैर किसी उज़्रे शरई के कोई ग़िज़ा या ग़िज़ा जैसी कोई चीज़ इस्तेमाल की जाए, यानी खाई जाए या पी जाए। और वह ऐसी हो कि उसकी जानिब तबीअत राग़िब हो और पेट की तलब पूरी की जाए। दोम ये कि उससे ख़्वाहिशे नफ़्सानी पूरी की जाए।

फिर इन दोनों सूरतों में क़ज़ा मअ़ कफ़्फ़ारा वाजिब होने के लिए दो शर्तें हैं: पहली शर्त ये है कि रमज़ान का रोज़ा तोड़ा गया हो अगर रमज़ान के अलावा और कोई

रोज़ा हो मसलन क़ज़ाए रमज़ान का या नज़्र का रोज़ा या कफ़्फ़ारे का रोज़ा या नफ़्ली रोज़ा तो उसम कफ़्फ़ारा वाजिब न होगा। बाज़ सूरतों में क़ज़ा लाज़िम आएगी।

दूसरी शर्त ये है कि रोज़ा क़स्दन तोड़ा गया हो, अगर भूले से या ग़लती से या किसी उज़्र स मसलन मरज़ लाहिक़ हो जाने से, या सफ़र पेश आ जाने की वजह से रोज़ा तोड़ा, तो सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब होगी।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–906–913)

कफ़्फ़ारे के लिए रोज़े की तमाम शराइत का पाया जाना ज़रूरी है

वह शख़्स जिसमें रोज़ा की तमाम शराइत पाई जाती हों। रमज़ान के उस अदा रोज़े में जिसकी नीयत सुब्ह सादिक़ से पहले कर चुका हो। अमदन मुंह के ज़रीए पेट में कोई ऐसी चीज़ पहुंचा दे जो इंसान की ग़िज़ा या दवा में इस्तेमाल होती हो। यानी उसके इस्तेमाल से किसी क़िस्म का नफ़ा या लज़्ज़त मक़्सूद हो, और उसके इस्तेमाल से सलीमुत्तबअ़ इंसान की तबीअ़त नफ़रत न करती हो। गो वह बहुत ही कम मिक़्दार में हो, हत्ता कि एक तिल के बराबर, या जिमाअ़ करे या कराए (लवातत भी उसी हुक्म में है) जिमाअ़ के वक़्त उज़्वे मख़्सूस सुपारी का दाख़िल हो जाना काफ़ी है, मनी का निकलना शर्त नहीं है।

इन सब सूरतों में क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब होंगे, मगर ये बात शर्त है कि जिमाअ़ (सोहबत) ऐसी औरत से किया जाए जो क़ाबिले जिमाअ़ हो, बहुत कम उम्र लड़की न हो, जिसमें जिमाअ़ की बिल्कुल क़ाबिलीयत न पाई जाए। (दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–151)

नीयत पर ही कफ़्फ़ारा है

किसी ने रमज़ान शरीफ़ में रोज़ा की नीयत ही नहीं की इसलिए खा पी रहा है, उस पर कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं, कफ़्फ़ारा जब ही है कि नीयत कर के रोज़ा तोड़ दे। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–12, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–204)

सोहबत करने से कफ़्फ़ारा वाजिब होना

सोहबत करने से रोज़ा टूट जाता है, उसकी क़ज़ा भी रखे और कफ़्फ़ारा भी, जब मर्द के उज़्वे मख़सूस की सुपारी अन्दर चली गई, तो रोज़ा टूट गया। क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब होंगे, ख़्वाह मनी निकले या न निकले, नीज़ अगर मर्द ने पाख़ाने की जगह अपना उज़्व कर दिया और उसकी सुपारी अन्दर चली गई, तब भी औरत और मर्द दोनों का रोज़ा जाता रहा। क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब हैं। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–70, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–151)

जिस शख़्स ने दोनों रास्तों में से किसी भी रास्ता में जान बूझ कर मुजामअ़त की, तो उस पर क़ज़ा व कफ़्फ़ारा दोनों लाज़िम होंगे और उन दोनों मक़ामों की मुजामअ़त में इंज़ाल का होना (मनी का निकलना) शर्त नहीं है। (फ़तावा हिन्दीया जिल्द–2 सफ़्हा–20 किताबुस्सौम)

रोज़े में इग़लाम बाज़ी

सवाल: अगर किसी ने रोज़े की हालत में इग़लाम बाज़ी की और उज़्वे मख़्सूस की सुपारी अन्दर चली गई लेकिन इंज़ाल न हुआ तो रमज़ान शरीफ़ के रोज़े का कफ़्फ़ारा वाजिब होगा या नहीं?

जवाबः लवातत करने में जबकि हशफ़ा ग़ाइब हो गया, अगरचे मनी न निकले यानी इंज़ाल भी न हो तो क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों लाज़िम हैं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–438)

एक ग़लत मस्अला की इसलाह

सवालः मर्द अपना आलए तनासुल औरत की शर्मगाह में दाख़िल करे और फिर बाहर निकाल कर देखे कि अगर वह ख़ुश्क है तो रोज़ा नहीं टूटा। ये मस्अला एक मौलवी साहब ने ब्यान किया है। क्या ये सही है?

जवाबः मर्द के मख़्सूस हिस्से की सुपारी औरत की शर्मगाह में दाख़िल हो गई, तो मर्द और औरत दोनों का रोज़ा टूट गया दोनों पर क़ज़ा और कफ़्फ़ारा लाज़िम होगा।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–447)

जिमाअ में आक़िल होना शर्त नहीं

जिमाअ में औरत और मर्द दोनों का आक़िल होना शर्त नहीं, यहां तक कि अगर एंक मजनून हो दूसरा आक़िल तो आक़िल पर कफ़्फ़ारा लाज़िम है, मसलन मर्द आक़िल हो और औरत मजनून तो मर्द पर, या बिलअक्स हो तो औरत पर कफ़्फ़ारा लाज़िम होगा।

अगर औरत जिमाअ कराए तो कफ़्फ़ारा वाजिब होने के लिए मर्द का बालिग़ होना शर्त नहीं है। हत्ता कि अगर कोई औरत किसी नाबालिग़ बच्चे या मजनून से जिमाअ कराए तो भी औरत को क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों का हुक्म है। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–28)

अगर औरत जिमाअ कराने में राज़ी है तो उसका भी यही हुक्म है। और अगर ज़बरदस्ती मजबूर थी तो सिर्फ़

क़ज़ा वाजिब होगी, कफ़्फ़ारा वाजिब न होगा। और अगर इब्तिदा में ज़बरदस्ती थी फिर रज़ा मंद हो गई तो भी यही हुक्म है। यानी क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब होंगे। (फ़तावा हिन्दीया जिल्द–2 सफ़्हा–20 किताबुस्सौम)

दिन में सोहबत करना कैसा है और रात में कब तक इजाज़त है

सवालः (1) रमज़ान में मर्द अपनी बीवी के पास सोहबत के लिए आए तो किस क़दर गुनाह है और कफ़्फ़ारा क्या है? (2) और रात के वक़्त कब से कब तक सोहबत कर सकता है? (3) और किस वक़्त गुस्ल करना चाहिए?

जवाबः (1) दिन में बीवी से सोहबत करना गुनाहे कबीरा है और इस सूरत में कफ़्फ़ारा मअ़ क़ज़ा के वाजिब है और कफ़्फ़ारा ये है कि एक गुलाम आज़ाद करे, और अगर ये न हो सके तो साठ रोज़े मुतवातिर रखे और अगर ये भी न हो सके तो साठ मिस्कीनों को दोनों वक़्त खाना खिलाए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–442, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–147)

(2) सोहबत रात में गुरूबे आफ़ताब के बाद से सुब्ह सादिक़ से पहले पहले तक करना दुरुस्त है। (क़ुरआन मजीद सूरए बक़रा पारा–2 रुकूअ़–7)

(3) गुस्ले जनाबत (नापाकी का गुस्ल) सुब्ह के बाद भी कर सकता है। (रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–138)

तीसवें रमज़ान को चाँद देख कर इफ़्तार कर लेना

सवालः तीसवें रमज़ान को ज़ुहर के बाद चाँद देखे तो रोज़ा तोड़ना जाइज़ है या नहीं? और अगर कोइ शख़्स रोज़ा तोड़े तो उस पर क़ज़ा है या कफ़्फ़ारा? और

अगर ज़वाल से पहले चाँद देखे तो क्या हुक्म है?

जवाब: वह चाँद तो अगली रात का है लिहाज़ा रोज़ा तोड़ना दुरुस्त नहीं? क़ज़ा और कफ़्फ़ारा उस पर वाजिब है। बादे ज़वाल तो बइत्तिफ़ाके राए अइम्मए सलासा क़ज़ा और कफ़्फ़ारा वाजिब है और ज़वाल से पहले चाँद देखने में इमाम आज़म और इमाम मुहम्मद (रह.) क़ज़ा व कफ़्फ़ारा वाजिब फ़रमाते हैं और उसी पर फ़तवा है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–434, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 किताबुस्सौम)

छुप कर मुसलमान होने वाले का रोज़ा तोड़ देना

सवाल: एक हिन्दू बातिन में इस्लाम ले आया, चुनाँचे रमज़ान के रोज़े भी रेखे, राज़ खुलने की वजह से रोज़ा तोड़ दिया, फिर खुल्लम खुल्ला मुस्लिम हो गया उस पर कफ़्फ़ारा लाज़िम आएगा या नहीं।

जवाब: जबकि वह शख़्स मुसमलान हो गया, अल्लाह और उसके रसूल (स.अ.व.) पर ईमान ले आया और तमाम अहकामे इस्लाम को क़बूल कर लिया, तो वह इन्दल्लाह मुसलमान हो गया, अगरचे लोगों पर उसका इस्लाम ज़ाहिर न हुआ हो, पस अगर रमज़ान शरीफ़ का रोज़ा रख कर उसने तोड़ डाला, तो कफ़्फ़ारा उस पर लाज़िम आएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–425, बहवाला आलमगीरी मिस्री जिल्द–1 सफ़्हा–152, किताबुस्सौम)

महबूब का थूक निगलने पर कफ़्फ़ारा

महबूब का थूक निगल गया, तो रोज़ा फ़ासिद हो गया क़ज़ा लाज़िम है, कफ़्फ़ारा लाज़िम न होगा। अगर अपना थूक हाथ में लगा कर फिर निगल जाए तो रोज़ा फ़ासिद

हो जाएगा, कफ़्फ़ारा लाज़िम न होगा। सिर्फ़ क़ज़ा आएगी। लेकिन अगर महबूब का थूक है तो कफ़्फ़ारा भी लाज़िम होगा। (आलमगीरी उर्दू जिल्द–2 सफ़्हा–16, किताबुस्सौम)

बुज़ुर्ग का थूक तबर्रुकन चाटने पर हुक्मे शरई

अगर कोई शख़्स रोज़े में किसी बुज़ुर्ग का थूक तबर्रुकन चाट ले, तो रोज़ा टूट जाएगा और क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों लाज़िम होंगे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–433, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–148 बाब मायुफ़्सिदुस्सौम व मा ला युफ़्सिदुस्सौम)

कच्चे चावल या कच्चा गोश्त खा लेना

सवालः एक शख़्स ने रोज़े की हालत में जान बूझ कर कच्चा गोश्त या कच्चा चावल खा लिया तो उस पर क़ज़ा वाजिब है या कफ़्फ़ारा?

जवाबः जान बूझ कर कच्चा गोश्त या चावल खाने से क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों लाज़िम होंगे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–442, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–148)

रोज़े में अमदन हुक़्क़ा पीना

जो लोग हुक़्क़ा पीने के आदी हों, वह रोज़े की हालत में अमदन हुक़्क़ा पियें तो उन पर क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब होंगे। इसी तरह अगर कोई ऐसा शख़्स जो अगरचे हुक़्क़े का आदी नहीं है, लेकिन किसी फ़ाएदे के लिए रोज़े में अमदन हुक़्क़ा पिये तो उस पर भी क़ज़ा व कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब होंगे। बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–11 सफ़्हा–105, बहवाला शरहुत्तनवी जिल्द–1 सफ़्हा–149)

❑❑❑

आठवाँ बाब

कफ़्फ़ारे के मसाइल

कफ़्फ़ारा किस को कहते हैं?

कफ़्फ़ारे के रोज़े कई क़िस्म के होते हैं, यहां हम सिर्फ़ रमज़ान के कफ़्फ़ारा को ब्यान करते हैं। एक रोज़े के कफ़्फ़ारा में एक गुलाम आज़ाद करना चाहिए, अगर ये मुम्किन न हो (ख़्वाह इस्तिताअत न होने की वजह से या उस मक़ाम पर गुलाम न मिलने की बिना पर) तो साठ रोज़े रखना वाजिब है, अगर किसी वजह से साठ रोज़े भी न रख सके तो साठ मुहताजों को खाना खिलाना वाजिब है, और उन साठ रोज़ों का मुसलसल रखना वाजिब है, दरमियान में नाग़ा न हाने पाए। और अगर किसी वजह से नाग़ा हो जाए तो फिर नए सिरे से रोज़े रखने होंगे। पिछले रोज़ों का एतेबार न होगा। हाँ अगर किसी औरत को हैज़ आ जाए और इस वजह से दरमियान में रोज़े नाग़ा हो जाऐं तो उसे ये नाग़ा मआफ़ होगा और हैज़ के बाद सिर्फ़ इतने रोज़े रखने ज़रूरी होंगे। जितने बाक़ी रह गए हैं।

बेहतर ये है कि पहले क़ज़ा के रोज़े रखे जाऐं, उसके बाद मुसलसल कफ़्फ़ारा के रोज़े रेखे जाऐं। अगर कोई पहले कफ़्फ़ारा के रोज़े रख ले और उसके बाद क़ज़ा के

रोज़े रखे तब भी जाइज़ है।

जिमाअ़ के अलावा अगर किसी वजह से कफ़्फ़ारा वाजिब हुआ हो, और अभी एक कफ़्फ़ारा अदा न करने पाया हो कि उस पर दूसरा वाजिब हो जाए, तो उन दोनों के लिए एक ही कफ़्फ़ारा वाजिब है। अगरचे दोनों कफ़्फ़ारे दो रमज़ान के हों। हाँ जिमाअ़ के सबब जितने रोज़े फ़ासिद हुए हों हर एक का कफ़्फ़ारा अलाहिदा रखना होगा। अगरचे पहला कफ़्फ़ारा न अदा किया हो। अगर कोई कफ़्फ़ारे के तीनों तरीक़ों पर क़ादिर हो यानी गुलाम भी आज़ाद कर सकता हो, साठ रोज़े भी रख सकता हो, साठ मुहताजों को खाना भी खिला सकता हो तो उसमें से जो तरीक़ा उस पर शाक़ गुज़रता हो उसे उसका हुक्म देना चाहिए। इसलिए कि कफ़्फ़ारे से मक़्सूद ज़ज्र व तौबीख़ और तंबीह है, इसलिए ज़ाहिर है कि आसान सूरत इख़्तियार करने में उसे कोई तंबीह न होगी।

साहबे बहरुर्राइक़ लिखते हैं कि अगर बादशाह पर कफ़्फ़ारा वाजिब हो तो उसको गुलाम के आज़ाद करने या साठ मुहताजों को खाना खिलाने का हुक्म न देना चाहिए, क्योंकि ये चीज़ें उसके नज़दीक कुछ दुश्वार नहीं, और उनसे इसे कुछ तंबीह न होगी। बल्कि साठ रोज़े रखने का हुक्म देना चाहिए कि उस पर गिराँ गुज़रे और आइंदा फिर रमज़ान के रोज़े को इस तरह फ़ासिद न करें।

(इल्मुलफ़िक़ा जिल्द–3 सफ़्हा–40)

एक शर्त ये भी है कि साठ मुहताजों को दो वक़्त पेट भर खिलाना वाजिब है, इस तरह चाहे तो उन्हें एक ही दिन दो वक़्त यानी सुब्ह व शाम खिला दे, चाहे दो दिन

सुब्ह के वक़्त, या दो दिन शाम के वक़्त, या इशा व सहर के वक़्त खिला दे, मगर शर्त ये है कि जिन मुहताजों को खाना खिलाया जाए दूसरे वक़्त भी उन्हीं मुहताजों को खाना खिलाना होगा। चुनांचे अगर किसी ने एक वक़्त साठ मुहताजों को खाना खिला दिया और फिर दूसरे वक़्त उनके अलावा दूसरे साठ मुहताजों को खिलाया, तो ये काफ़ी ने होगा, बल्कि कफ़्फ़ारा उसी वक़्त अदा होगा कि उन दोनों जमाअतों में से किसी एक जमाअत को फिर दो बारह एक वक़्त और खाना खिलाए। हां अगर कोई शख़्स एक ही मुहताज को मुसलसल साठ रोज़ तक खाना लिखाए या मुसलसल साठ रोज़ तक हर रोज़ नए मुहताज को खिलाए तो कोई मुज़ाएक़ा नहीं। इसी तरह कफ़्फ़ारा अदा हो जाएगा। अगर कोई शख़्स एक ही रोज़ साठ या उनसे कुछ कम मुहताजों के खाने के बक़द्र किसी एक मुहताज को सदक़ा दे दे तो इससे उन सब का हिस्सा अदा न होगा, बल्कि एक ही मुहताज का अदा होगा। जिन मुहताजों को खाना खिलाया जाए उनका भूका होना भी ज़रूरी है, अगर पेट भरों को खिलाया तो इससे कफ़्फ़ारा अदा न होगा, बल्कि भूकों को दोबारा खिलाना ज़रूरी होगा। (मज़ाहिरे हक़ जदीद जिल्द–2 क़िस्त–5 सफ़्हा–12)

नोट: ये तमाम शराइत व क़ुयूद इसलिए हैं कि लोग रमज़ान के रोज़े का एहतिराम करें और उसे बिला वजह तोड़ने की हिम्मत न करें। (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी, मुरत्तिब)

कफ़्फ़ारे की कुल क़ीमत एक फ़क़ीर को दे देना

रोज़ा के कफ़्फ़ारे में एक मुहताज को एक दिन में

ज़्यादा से ज़्यादा एक ही दिन का फ़िदया अदा होगा, और यही हुक्म क़सम के कफ़्फ़ारा का है, इसमें दस मिस्कीनों को खाना खिलाना, या एक मिस्कीन को दस रोज़ तक खाना खिलाना ज़रूरी है। अब अगर एक फ़क़ीर को ज़्यादा मिक़्दार में दे दिया तो वह एक ही दिन का होगा। ज़्यादा शुमार न होगा। अलबत्ता शैख़ फ़ानी का (जिसको रोज़ा रखने की ताक़त न हो) रमज़ान के पूरे रोज़ों का फ़िदया एक ही मुहताज को देना चाहिए, या एक एक मुहताज को कई कई रोज़ों का फ़िदया दे तो ये जाइज़ है। इस तरह उसका फ़िदया अदा हो जाएगा। लेकिन कफ़्फ़ारा का हुक्म मुख़्तलिफ़ है, रोज़े के कफ़्फ़ारा में साठ मिस्कीनों को खाना, अनाज या नक़द देना, या एक मिस्कीन को साठ दिन देना ज़रूरी है। एक मिस्कीन को एक दिन से ज़्यादा देने में एक दिन का ही अदा होगा। ग़रज़ कफ़्फ़ारा में तअद्दुदे फ़ुक़रा का या तअद्दुदे अैयाम का होना ज़रूरी है और फ़िदया में इसकी ज़रूरत नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–451, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–163 जिल्द–3 किताबुस्सौम फ़स्ल फ़िलअवारिज़)

साठ दिन का अनाज हिसाब कर के एक फ़क़ीर को एक ही दिन दे दिया तो दुरुस्त नहीं, इस तरह एक ही फ़क़ीर को एक दिन अगर साठ दफ़ा कर के दे दिया तब भी एक ही दिन का अदा हुआ। एक कम साठ (59) मिस्कीनों को फिर देना चाहिए। इसी तरह क़ीमत देने का भी हुक्म है, यानी एक दिन में एक मिस्कीन को एक रोज़े के बदले में दी जाए, ज़्यादा देना दुरुस्त नहीं। नीज़

अगर किसी फ़क़ीर को सदक़ए फ़ित्र की मिक़्दार से कम दिया तो कफ़्फ़ारा सही नहीं हुआ।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–16, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–250)

क़स्दन रोज़ा तोड़ने से क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों लाज़िम

सवालः फुक़हा की किताबों में जो ये लिखा है कि रमज़ान शरीफ़ में बिला उज़्रे शरई रोज़ा तोड़ने से क़ज़ा और कफ़्फ़ारा वाजिब है तो अब ये मालूम करना है कि क़ज़ा और कफ़्फ़ारा के मजमूई तौर पर रोज़े रखे या कफ़्फ़ारा व क़ज़ा एक साथ साठ रोज़े रखने से दोनों अदा हो जाऐंगे?

जवाबः रमज़ान शरीफ़ का रोज़ा क़स्दन तोड़ने से कफ़्फ़ारा और क़ज़ा दोनों लाज़िम होते हैं, यानी एक रोज़ा क़ज़ा का और साठ रोज़े कफ़्फ़ारा के वाजिब हैं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–429, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–149, बाब मायुफ़्सिदुस्सौम)

कफ़्फ़ारे के ६० रोज़े

सवालः कफ़्फ़ारे के रोज़े क्या दो माह हैं जो अट्ठावन या साठ या उन्सठ दिन भी हो सकते हैं? तो क्या साठ दिन पूरे करने ज़रूरी हैं?

जवाबः अगर क़मरी महीने की पहली तारीख़ से रोज़े शुरू किये तो चाँद के हिसाब से दो माह पूरे कर ले, दोनों का एतेबार है। और अगर पहली तारीख़ से शुरू नहीं किए तो साठ पूरे करे।

(अहसनुलफ़तावा (पाकिस्तानी) जिल्द–4 सफ्हा–450, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–631)

अगर चाँद देख कर रमज़ान के कफ्फ़ारे रोज़े रखे जाऐं तो साठ रोज़े पूरे करना ज़रूरी नहीं, बल्कि पूरे दो महीने के रोज़े रखना काफ़ी है, ख़्वाह साठ से कम हों।

(किफ़ायतुल मुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–228)

अगर ये रोज़े क़मरी तारीख़ महीने की पहली तारीख़ से शुरू किए गए तो पूरे दो क़मरी महीनों के रोज़े रखना चाहिए। और अगर ये रोज़े क़मरी महीने के दरमियान से शुरू किए गए तो उस महीने को पूरा कर के अगले पूरे माह के रोज़े रखना और फिर तीसरे माह में इतने दिन के रोज़ा रखना चाहिए कि पहले महीने के दिन मिला कर पूरे 30 दिन हो जाऐं।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–941)

कफ्फ़ारे में तसलसुल ज़रूरी

ज़रूरी है कि दो माह के रोज़े मुसलसल हों, अगर एक दिन का भी रोज़ा रह गया ख़्वाह उसका कोई शरई उज़्र हो, मसलन सफ़र दरपेश आ जाए तो जो रोज़े रखे गए वह नफ़्ल हो जाऐंगे और फिर अज़ सरे नौ रोज़े रखने होंगे। क्योंकि रोज़ों का तसलसुल ज़रूरी था और वह पूरा नहीं हुआ। और अगर कोई शख़्स शदीद तकलीफ़ वग़ैरा के बाइस रोज़ा न रख सके तो साठ मिस्कीनों को (दोनों वक़्त पेट भर कर) खाना खिलाए (वाज़ेह रहे कि) कफ़्फ़ारा जो फ़र्ज़ है उसमें साठ रोज़ ऐसे मुहताजों को खिलाना वाजिब है जो कफ़्फ़ारा देने वाले के अपने ख़ानदान के लोग न हों, और ख़ानदान से मुराद ये है कि जिस का नफ़्क़ा उस पर वाजिब है। मसलन उसके बाप दादा वग़ैरा या बेटे, पोते और बीवी वग़ैरा न हों।

(किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–941)

खाना खिलाने में तसलसुल की ज़रूरत नहीं

अगर साठ तक खाना नहीं खिलाया बल्कि बीच में कुछ दिन नागा हो गया तो कुछ हरज नहीं, ये भी दुरुस्त है। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ्हा–18, बहवाला मराक़ियुलफ़लाह सफ़्हा–206)

खाना खिलाने में तसलसुल की ज़रूरत नहीं, मुतफ़र्रिक़ ऐयाम में खिलाने से भी कफ़्फ़ारा अदा हो जाता है।

(अहसनुल फ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–441)

हैज़ की वजह से कफ़्फ़ारा का तसलसुल ज़रूरी नहीं

रमज़ान शरीफ़ के रोज़ा तोड़ने का कफ़्फ़ारा ये है कि दो महीने के रोज़े बराबर लगातार रखे। थोड़े कर के रोज़े रखना दुरुस्त नहीं, अगर किसी ने बीच में एक दो रोज़े नहीं रखे तो अब फिर नए सिरे से रोज़े रखे, हां अगर औरत के हैज़ की वजह से कुछ रोज़े छूट जाएं तो वह मआफ़ हैं, उनके छूट जाने से कफ़्फ़ारा में कुछ नुक़्सान नहीं आया, लेकिन पाक होने के फ़ौरन बाद फिर से रोज़े रखने शुरू कर दे और साठ रोज़े पूरे कर ले।

(बहिश्ती ज़ेवर सफ़्हा–15, बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–150)

अहसनुल फ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–442 में है– "माहवारी की वजह से कफ़्फ़ारे के रोज़ा में फ़स्ल मुज़िर नहीं, माहवारी ख़त्म होते ही फ़ौरन रोज़े शुरू कर दे, इसी तरह साठ रोज़े पूरे कर ले, अगर माहवारी ख़त्म होने के बाद एक दिन का भी नागा किया तो नए सिरे से

साठ रोज़े रखने पड़ेंगे।"

निफ़ास की वजह से कफ़्फ़ारा सही न होगा

निफ़ास (बच्चा की वलादत के बाद आने वाले ख़ून) की वजह से बीच में रोज़े छूट गए और वह लगातार रोज़े नहीं रख सकी तो उसका कफ़्फ़ारा सही न होगा उसे सब रोज़े फिर से रखने पडेंगे। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–15, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–151)

नोटः इसकी वजह ये है कि हैज़ तो हर माह औरत को होता है और कफ़्फ़ारा में साठ रोज़े हैं इसलिए उसे परेशानी और मुश्किल हो जाएगी। उसके लिए कभी भी कफ़्फ़ारे के साठ रोज़े मुसलसल रखना मुम्किन नहीं। बरख़िलाफ़ निफ़ास के क्योंकि निफ़ास का ख़ून जिसमें नमाज़ मआफ़ है और रोज़ा की क़ज़ा है। बच्चा की पैदाइश पर ही आता है, और ये कम से कम साल भर में एक मरतबा ही पेश आता है। इसलिए दोनों में फ़र्क़ ज़ाहिर है। (मुरत्तिब– मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

बीमारी या रमज़ान का, कफ़्फ़ारे के दरमियान आ जाना

अगर दुख, बीमारी, की वजह से बीच में कफ़्फ़ारा के कुछ रोज़े छूट गए तब भी तंदुरुस्त होने के बाद फिर से रोज़े रखने पड़ेंगे। इस तरह अगर बीच में रमज़ान शरीफ़ आ जाए तब भी कफ़्फ़ारा सही अदा न होगा। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–15, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–150)

रोज़े की ताक़त न हो तो

अगर किसी को रोज़ा रखने की ताक़त न हो तो साठ मिस्कीनों को सुब्ह व शाम पेट भर कर खाना खिला

दे, जितना उनके पेट में समाए, यानी भूके न रहें। शिकम सैर हो कर खाएँ। (बहिश्ती ज़ेवर सफ़्हा–15, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–250)

कफ़्फ़ारे में ज़ामिन बनाना

अगर किसी ने दूसरे से ये कह दिया कि तुम मेरी तरफ़ से कफ़्फ़ारा अदा कर दो, और साठ मिस्कीनों को खाना खिला दो, और उसने उसकी तरफ़ से खाना खिला दिया, या अनाज दे दिया, तब भी कफ़्फ़ारा अदा हो जाएगा। और बग़ैर उसके कहे किसी ने उसकी तरफ़ से दे दिया तो कफ्फ़ारा सही नहीं हुआ। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–16, बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–83)

कफ़्फ़ारए सौम में तदाख़ुल की तफ़सील

सवालः मुतअ़द्दिद रोज़ों के कफ़्फ़ारें में तदाख़ुल होगा या नहीं, यानी एक ही कफ़्फ़ारा होगा, या नहीं तफ़सील क्या है?

जवाबः इसमें तीन क़ौल हैं।

(1) मुतलक़न तदाख़ुल है, ख़्वाह एक रमज़ान के रोज़े हों या मुख़्तलिफ़ रमज़ानों के, ख़्वाह जिमाअ़ से फ़ासिद किए हों, या ग़ैर जिमाअ़ से।

(2) दो रमज़ान के कफ़्फ़ारों में तदाख़ुल नहीं, ख़्वाह जिमाअ़ से हो, या ग़ैर जिमाअ़ से।

(3) दो रमज़ान के कफ़्फ़ारे जिमाअ़ के सबब से हों तो तदाख़ुल नहीं। बक़िया सब सूरतों में तदाख़ुल है। तीसरा क़ौल राजेह है। (अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–424, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–120)

अगर जिमाअ़ के अलावा किसी और सबब से कफ़्फ़ारा

वाजिब हुआ हो और एक कफ़्फ़ारा अदा न करने पाया हो, दूसरा वाजिब हो जाए, तो उन दोनों के लिए एक ही कफ़्फ़ारा काफ़ी है। अगरचे दोनों कफ़्फ़ारे दो रमज़ान के हों, हां जिमाअ़ के सबब से जितने रोज़े फ़ासिद हुए हों तो अगर वह एक ही रमज़ान के रोज़े हैं तो एक ही कफ़्फ़ारा काफ़ी है, और अगर दो रमज़ान के हैं तो हर एक रमज़ान का कफ़्फ़ारा अलग देना होगा। अगरचे पहला कफ़्फ़ारा न अदा किया हो। हासिल ये है कि जिमाअ़ के अलावा में तो मुतलक़न तदाख़ुल हो सकता है और जिमाअ़ में एक रमज़ान के कफ़्फ़ारों में तदाख़ुल हो सकता है। दो रमज़ान के कफ़्फ़ारों में नहीं, क्योंकि जिमाअ़ से मुतलक़न तदाख़ुल न होना ख़िलाफ़े ज़ाहिरे रिवायत है, यानी एक रमज़ान के कफ़्फ़ारों में तदाख़ुल हो सकता है, जबकि अभी तक कोई कफ़्फ़ारा अदा न किया हो, दो रमज़ान के कफ़्फ़ारों में तदाख़ुल नहीं हो सकता है। इसमें जिमाअ़ और ग़ैर जिमाअ़ सब मुसावी हैं, मगर हम ने ग़ैर जिमाअ़ में क़ौले सही और मोतमद अलैहि को लिया है।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–11 सफ़्हा–106)

हनफ़ीया के नज़दीक कफ़्फ़ारा वाजिब करने वाले अमल का मुतअद्दद बार इरतिकाब करने से उतनी ही बार कफ़्फ़ारा देना वाजिब नहीं है। ख़्वाह ये इरतिकाब एक ही दिन में कई बार हो, या मुतअद्दद अैयाम में, लेकिन अगर कफ़्फ़ारा वाजिब करने वाले अमल का इरतिकाब किया और कफ़्फ़ारा देने के बाद फिर इरतिकाब किया तो अगर ये दोबारा इरतिकाब एक ही दिन में हुआ तो एक ही कफ़्फ़ारा वाजिब है और अगर उसका इआदा मुख़्तलिफ़ दिनों में किया

गया तो पहली दफ़ा के बाद जिसका कफ़्फ़ारा दिया ज चुका है, फिर उसका कफ़्फ़ारा देना होगा। इसमें इतनी तफ़सील मज़ीद ज़रूरी है कि अगर कफ़्फ़ारा का मूजिब मुबाशरत (हमबिस्तरी) था तो दूसरी बार देना होगा, वरना नहीं।

(किताबुलाफ़िक्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–944)

कफ़्फ़ारे में ताख़ीर

सवालः जिसके ज़िम्मा रोज़े का कफ़्फ़ारा हो और वह तालिबे इल्म हो या हिफ़्ज़े कलामुल्लाह में लगा हुआ हो। तो अगर वह रोज़ा रखता है इल्म हासिल करने में नुक़्सान होता है, अगर नहीं रखता है तो मुवाख़ज़ा सख़्त है इसलिए अगर वह पढ़ने के बाद कफ़्फ़ारे के रोज़े रखे तो ये दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः कफ़्फ़ारे के रोज़ों में ताख़ीर न करना चाहिए अगरचे हिफ़्ज़े कुरआन और तहसीले इल्म में हरज लाज़िम आए। (फ़तावा रशीदिया कामिल सफ़्हा–373)

कफ़्फ़ारे में दो माह का खाना मुक़र्रर कर देना

सवालः रोज़े के कफ़्फ़ारे में खाना दो माह का मुक़र्रर कर देना। यानी साठ वक़्त का, तो जाइज़ है या नहीं?

जवाबः रोज़े के कफ़्फ़ारे में साठ दिन एक तालिबे इल्म को दोनों वक़्त बिठा कर पेट भर कर खाना खिलाना दुरुस्त है और इससे कफ़्फ़ारा अदा हो जाता है। मगर बिठा कर खिलाना चाहिए। क्योंकि देने में हर रोज़ पूरी मिक़्दार पौन दो सेर एक फ़ितरा की बक़द्र या उसकी क़ीमत देने की ज़रूरत है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4

सफ़्हा–448)

ये रिआयत इसलिए रखी गई है, कि आम तौर पर जब किसी का खाना मुक़र्रर किया जाता है, तो सिर्फ़ चार रोटियाँ होती हैं, हालाँकि बाज़ अफ़राद की ख़ुराक ज़्यादा होती है। (मुरत्तिब)

छोट बच्चों को खिलाने से कफ़्फ़ारा अदा नहीं होगा

अगर उन मिस्कीनों में बाज़े बिल्कुल छोटे बच्चे हों तो जाइज़ नहीं। उन बच्चों के बदले और मिस्कीनों को फिर खिलाए। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–16, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–503)

आठ, दस बरस के बच्चों को जो क़रीबुलबुलूग़ न हों खाना खिला देने से कफ़्फ़ारा अदा नहीं होता। अलबत्ता अगर उनको कफ़्फ़ारे की मिक़्दार का मालिक बना दिया जाए। मसलन निस्फ़ साअ़ गंदुम या उसकी क़ीमत हर एक बच्चा की मिल्क कर दी जाए तो दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–452, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–802 बाबुलकफ़्फ़ारा)

कफ़्फ़ारे में हर मिस्कीन को दो वक़्त खाना खिलाना

सवाल: रोज़े के कफ़्फ़ारा में अगर एक सौ बीस मसाकीन को एक ही वक़्त खाना खिला दिया जाए और इसी तरह क़सम के कफ़्फ़ारा में बीस मसाकीन को एक ही वक़्त खाना खिला दिया जाए तो कफ़्फ़ारा अदा होगा या नहीं?

जवाब: एक वक़्त खिला देने से कफ़्फ़ारा अदा नहीं हुआ, रोज़े के कफ़्फ़ारे में उन मसाकीन में से साठ को और क़सम के कफ़्फ़ारा में से दस को दूसरे वक़्त भी

खिलाना वाजिब है, ख़्वाह उसी दिन खिलाए या किसी दूसरे दिन खिलाए। (अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–440, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–635)

एक मिस्कीन को एक दिन में ज़्यादा देगा तो एक दिन का ही अदा होगा। अलहासिल कफ़्फ़ारे में फ़ुक़रा की तादाद का या दिनों की तादाद का होना ज़रूरी है और फ़िदया में फ़ुक़रा की तादाद या दिनों की तादाद की ज़रूरत नहीं।

(फ़तावा दारुलउलूम क़दीम जिल्द–3 सफ़्हा–73)

कफ़्फ़ारे में अनाज या क़ीमत देना

अगर खाना न खिलाए बल्कि साठ मिस्कीनों को कच्चा अनाज दे दे तब भी जाइज़ है, हर एक मिस्कीन को इतना दे कि जितना सदक़ए फ़ित्र दिया जाता है, अगर उतने अनाज की क़ीमत दे तो भी जाइज़ है।

(बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–16, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–25)

एक मिस्कीन को खिलाना

अगर एक मिस्कीन को साठ दिन तक सुब्ह व शाम खाना खिला दिया, या साठ दिन तक कच्चा अनाज या क़ीमत देते रहे, तब भी कफ़्फ़ारा सही हो गया। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–16, बहवाला क़ुदूरी सफ़्हा–157)

कफ़्फ़ारे की रक़म से मदरसा का टाट ख़रीदना या मस्जिद की तामीर करना

सवाल: रोज़ा का कफ़्फ़ारा साठ मिस्कीनों को खाना खिलाना है। अगर उस खाने की क़ीमत से मदरसा में टाट ख़रीद कर तलबा के लिए इंतिज़ाम कर दें या

मस्जिद में सर्फ़ कर दें तो क्या ये जाइज़ है?

जवाब: अगर साठ रोज़ों की ताक़त न हो तो फिर एक रोज़े के एवज़ साठ मिस्कीनों को दोनों वक़्त खाना खिलाना, या हर एक मिस्कीन को पौने दो किलो गेहूं या उसकी क़ीमत देना, ज़रूरी है, मदरसा का टाट ख़रीदना या उससे मदरसे की मरम्मत और तामीर दुरुस्त नहीं।

(फ़तावा दारुलउलूम सफ़्हा–449, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–149, बाब मायुफ़्सिदुस्सौम)

कफ़्फ़ारा की रक़म से मस्जिद और मदरसा में देना दुरुस्त नहीं है। इससे कफ़्फ़ारा अदा न होगा, अलबत्ता मदरसा में अगर तलबा के खिलाने में लगा दें तो दुरुस्त है, बशर्ते कि साठ तलबा को दोनों वक़्त खिला दिया या बक़द्रे फ़ितरा हर एक को पौने दो सेर गंदुम या उसकी क़ीमत दे दें। (फ़तावा दारुलउलूम सफ़्हा–454, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुस्सर्फ़ जिल्द–2 सफ़्हा–79)

कफ़्फ़ारे के रोज़े के बजाए नक़द रक़म देना

सवाल: ज़ैद के ज़िम्मे रमज़ान का एक कफ़्फ़ारा है और वह दो माह के रोज़े नहीं रख सकता, अगर वह अदना दर्जा की ख़ूराक की क़ीमत दो माह की मदरसा के अन्दर जमा करा दे तालिबे इल्म के लिए, तो कफ़्फ़ारा अदा होग या नहीं?

या अगर ज़ैद किसी ग़रीब को तीन पाव आटा दो माह तक दे दे और लकड़ी व तरकारी के लिए कुछ पैसे दे दे तो क्या कफ़्फ़ारा अदा हो जाएगा?

जवाब: रोज़ा में तकलीफ़ होने की वजह से ये दुरुस्त नहीं है कि रोज़ा को छोड़ कर मिस्कीन को खाना खिलाने

की तरफ़ रजूअ करे, क्योंकि कुरआन मजीद में "فَمَنْ لَّمْ يَسْتَطِعْ" की कैद है, जिसका हासिल ये है कि उसमें ताक़त ही रोज़े की न हो, यानी बवज्हे मरज़े ला इलाज के या बवज्हे शैख़ फ़ानी (बिल्कुल कुदरत न रहे) होने के उस वक़्त खाना खिलाना दुरुस्त है। फिर जब दो माह के रोज़े से आजिज़ हो बेवज्ह बुढ़ापे, या मरज़े शदीद लाइलाज के, तो साठ मिस्कीनों को खाना खिलाना ज़रूरी है। उसकी दो सूरतों हैं, या हर एक मिस्कीन को आधा साअ़ गंदुम, यानी पौने दो किलो या उसकी क़ीमत हर एक मिस्कीन को दे दे, या साठ मिस्कीन को दोनों वक़्त पेट भर कर खाना खिलाए।

पस तीन पाव आटा रोज़ाना किसी ग़रीब को दो माह तक देने से कफ़्फ़ारा अदा न होगा। बल्कि पौने दो किलो आटा या उसकी क़ीमत देने से अदा होगा, इसी तरह किसी तालिबे इल्म को मुजमलन रूपया भेज देने से कफ़्फ़ारा अदा न होगा, बल्कि ये लिखा जाए कि साठ आदमियों को एक दिन में दो वक़्त या एक आदमी को दो माह तक दोनों वक़्त पेट भर कर कफ़्फ़ारा की नीयत से खिलाया जाए और उसमें जो कुछ सर्फ़ हो वह मुझ से ले लिया जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–456, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब फ़िलकफ़्फ़ारा जिल्द–2 सफ़्हा–150 व जिल्द–2 सफ़्हा–801)

कफ़्फ़ारे में मोहतमिमे मदरसा की वकालत

सवालः मदरसा का मोहतमिम कफ़्फ़ारा का खाना खिलाने का वकील हो कर तलबा के खाने में रूपया को

सर्फ़ कर सकता है, जो कफ़्फ़ारा अदा करने की नीयत से रखे हैं? या मोहतमिम कपड़ा ख़रीद कर दे सकता है?

जवाबः इस तरह कर सकता है कि कफ़्फ़ारे के पूरे रूपये का कपड़ा ख़रीद कर मुहताज तलबा की मिल्क में दे, ये दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–452, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–802)

रोज़े के कफ़्फ़ारा की तौबा से मआफ़ी

सवालः ज़ैद ने जिसको कफ़्फ़ारा का इल्म न था अपनी औरत से रोज़ा की हालत में सोहबत की, तो उन पर कफ़्फ़ारा वाजिब हुआ है, वह उसको किसी तरह अदा नहीं कर सकता है, इस सूरत में उसकी तौबा क़बूल होगी या नहीं?

जवाबः अदाए क़ज़ा व कफ़्फ़ारा इस सूरत में ज़रूरी है, तौबा भी जब ही क़बूल होगी। अगर दो महीने के रोज़ों की पै–दर–पै मुसलसल ताक़त न हो तो साठ मिस्कीनों को खाना खिला दें।

"فَمَنْ لَّمْ يَسْتَطِيْعْ فَاِطْعَامُ سِتِّيْنَ مِسْكِيْنًا" (المجادلة)

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–450, बहवाला कुरआन मजीद सूरए मुजादला रुकूअ़–1, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब मायुफ़्सिदुस्सौम जिल्द–2 सफ़्हा–149)

❑❑❑

नवाँ बाब

औरतों के मसाइल

हैज़ की तारीफ़ और उसके मसाइल

मस्अला (1) हर महीना जो आगे की राह से (औरतों को) मामूली ख़ून आता है उसको हैज़ कहते हैं। मस्आल (2) कम से कम हैज़ की मुद्दत तीन दिन तीन रात है और ज़्यादा से ज़्यादा दस दिन दस रात है। किसी को तीन दिन तीन रात से कम ख़ून आया है तो वह हैज़ नहीं है बल्कि इस्तिहाज़ा है जो किसी बीमारी वग़ैरा की वजह से ऐसा हो गया है। और अगर दस दिन रात से ज़्यादा ख़ून आया है तो जितने दिन दस से ज़्यादा आया है वह भी इस्तिहाज़ा है। मस्अला (3) अगर तीन दिन तो हो गए, लेकिन तीन रातें नहीं हुईं, जैसे जुमा की सुब्ह से ख़ून आया और इतवार को शाम के वक़्त बादे मग़रिब बंद हो गया तब भी ये हैज़ नहीं बल्कि इस्तिहाज़ा है। अगर तीन दिन रात से ज़रा भी कम हो तो वह हैज़ नहीं, बल्कि इस्तिहाज़ा है। मस्अला (4) हैज़ की मुद्दत के अन्दर सुर्ख़, ज़र्द, सब्ज़, ख़ाकी, मटियाला, सियाह, जो रंग आए वह सब हैज़ है। जब तक गद्दी (जो कपड़ा रखती हैं) बिल्कुल सपेद न दिखलाई दे, और जब बिल्कुल सपेद रहे जैसी कि रखी गई थी, तो अब हैज़ से पाक हो गई। मस्अला

(5) नौ बरस से पहले, और पचपन साल के बाद, किसी को हैज़ नहीं आता। इसलिए अगर नौ बरस से छोटी लड़की को ख़ून आएगा तो वह हैज़ नहीं है। बल्कि इस्तिहाज़ा है। यानी नौ साल से पहले तो बिल्कुल हैज़ नहीं आता है। इसलिए जो ख़ून नौ साल से पहले आएगा वह किसी सूरत में हैज़ नहीं हो सकता। और पचपन साल के बाद आम तौर पर जो आदत है वह यही है कि हैज़ नहीं आता, लेकिन आना मुम्किन है इसलिए कि अगर पचपन बरस बाद ख़ून आ जाए तो उन ख़ास औरतों में जिन का ज़िक्र किया गया है उसको हैज़ कहा जाएगा। अलबत्ता अगर उस औरत को इस उम्र से पहले भी ज़र्द या सब्ज़ या ख़ाकी रंग आता हो तो पचपन बरस बाद भी ये रंग हैज़ समझे जाऐंगे। और अगर आदत के ख़िलाफ़ ऐसा हुआ तो हैज़ नहीं बल्कि इस्तिहाज़ा है। मस्अला (6) किसी को हमेशा तीन दिन या चार दिन ख़ून आता है। फिर किसी महीने में ज़्यादा आ गया लेकिन दस दिन से ज़्यादा नहीं आया वह सब हैज़ है। और अगर दस दिन से भी ज़्यादा बढ़ गया तो जितने दिन पहले से औरत के हैं उतना तो हैज़ है बाक़ी सब इस्तिहाज़ा है। उसकी मिसाल ये है कि किसी को हमेशा तीन दिन हैज़ आने की आदत है लेकिन किसी महीना में नौ दिन या दस दिन रात, तो ये सब हैज़ है। और अगर दस दिन रात से एक लहज़ा भी ज़्यादा ख़ून आए तो वह ही तीन दिन हैज़ के हैं और बाक़ी दिनों का सब इस्तिहाज़ा है। इन दिनों की नमाजें क़ज़ा पढ़ना वाजिब हैं। मस्अला (7) एक औरत है जिसकी कोई आदत मुक़र्रर नहीं है, कभी चार

दिन ख़ून आता है और कभी सात दिन इसी तरह बदलता रहता है, कभी दस दिन भी आ जाता है। तो ये सब हैज़ है, ऐसी औरत को अगर कभी दस दिन रात से ज़्यादा ख़ून आए तो देखो इससे पहले महीना में कितने दिन हैज़ आया था, बस उतने ही दिन हैज़ के, और बाक़ी सब इस्तिहाज़ा है। मस्अला (8) किसी को हमेशा चार दिन आता है और फिर एक महीना में पाँच दिन ख़ून आया और उसके बाद दूसरे महीना में पन्द्रह दिन ख़ून आया तो उस पन्द्रह दिन में से पाँच दिन हैज़ के हैं और दस दिन इस्तिहाज़ा और पहली आदत का एतेबार नहीं करेंगे और ये समझेंगे कि आदत बदल गई और पाँच दिन की आदत होगी। मस्अला (9) किसी को दस दिन से ज़्यादा ख़ून आया और उसको अपनी पहली आदत बल्किुल याद नहीं कि पहले महीने में कितने दिन ख़ून आया था, तो उसके मस्अले बहुत बरीक हैं, जिनका समझना बहुत मुश्किल है और ऐसा इत्तिफ़ाक़ भी कम पड़ता है। इसलिए हम उसका हुक्म ब्यान नहीं करते, अगर कभी ज़रूरत पड़े तो किसी आलिम से पूछना चाहिए और किसी ऐसे वैसे मामूली मौलवी से न पूछा जाए। मस्अला (10) किसी लड़की ने पहले पहल ख़ून देखा तो अगर दस दिन या उससे कम आए सब हैज़ है और जो दस दिन से ज़्यादा आए तो पूरे दस दिन हैज़ है और जितना ज़्यादा हो वह सब इस्तिहाज़ा है। मस्अला (11) किसी ने पहले पहल ख़ून देखा और वह किसी तरह बंद नहीं हुआ, कई महीने तक बराबर आता रहा, तो जिस दिन ख़ून आया है उस दिन से लेकर दस दिन रात हैज़ है। इसके बाद बीस दिन

इस्तिहाज़ा है इसी तरह बराबर दस दिन हैज़ और बीस दिन इस्तिहाज़ा समझा जाएगा। मस्अला (12) दो हैज़ के दरमियान में पाक रहने की मुद्दत कम से कम पन्द्रह दिन हैं और ज़्यादा की कोई हद नहीं। सो अगर किसी वजह से किसी को हैज़ आना बंद हो जाए तो जितने महीने तक ख़ून न आएगा पाक रहेगी। मस्अला (13) अगर किसी को तीन दिन रात ख़ून आया, फिर पन्द्रह दिन पाक रही, फिर तीन दिन रात ख़ून आया तो तीन दिन पहले के और तीन दिन ये जो पन्द्रह दिन के बाद हैं हैज़ के हैं, और बीच में पन्द्रह दिन पाकी का ज़माना है। मस्अला (14) अगर एक दिन या दो दिन ख़ून आया फिर पन्द्रह दिन पाक रही, फिर एक या दो दिन ख़ून आया, तो बीच में पन्द्रह दिन तो पाकी का ज़माना ही है। इधर उधर एक या दो दिन जो ख़ून आया है वह भी हैज़ नहीं है, बल्कि इस्तिहाज़ा है। मस्अला (15) अगर एक दिन या कई दिन ख़ून आया, फिर पन्द्रह दिन से कम पाक रही, इसका कुछ एतेबार नहीं है, बल्कि यूँ समझेंगे कि गोया औवल से आख़िर तक बराबर ख़ून जारी रहा, पस जितने दिन हैज़ आने की आदत हो, उतने दिन तो हैज़ के ही हैं, बाक़ी सब इस्तिहाज़ा है। मिसाल उसकी ये है कि किसी को हर महीने की पहली और दूसरी और तीसरी तारीख़ को हैज़ आने का मामूल है फिर किसी महीना में ऐसा हुआ कि पहली तारीख़ को ख़ून आया फिर चौदह दिन पाक रही, फिर एक दिन ख़ून आया तो ऐसा समझेंगे कि सोला दिन बराबर ख़ून आया, पस इसमें से तीन दिन औवल के तो हैज़ के हैं और तेरह दिन इस्तिहाज़ा है।

और अगर चौथी या पाँचवीं, छठी तारीख़ हैज़ की आदत थी तो ये ही तारीख़ें हैज़ की हैं। और तीन दिन औवल के और दस दिन बाद के इस्तिहाज़ा के हैं। और अगर इसकी कुछ आदत न हो बल्कि पहले पहल ख़ून आया हो तो दस दिन हैज़ है और छः दिन इस्तिहाज़ा है। मस्अला (16) हमल के ज़माने में जो ख़ून आए वह भी हैज़ नहीं, बल्कि इस्तिहाज़ा है, चाहे जितने दिन आए। मस्अला (17) बच्चा पैदा होने के वक़्त बच्चा निकलने से पहले जो ख़ून आएं वह भी इस्हिाज़ा है, बल्कि जब तक बच्चा आधे से ज़्यादा न निकल आए तब तक जो ख़ून आएगा उसको इस्तिहाज़ा ही कहेंगे।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–2 सफ़्हा–61)

हाएज़ा का हुक्म

हैज़ के ज़माने में नमाज़ पढ़ना और रोज़ा रखना दुरुस्त नहीं। इतना फ़र्क़ है कि नमाज़ तो बिल्कुल मआफ़ हो जाती है, पाक हो जाने के बाद भी उसकी क़ज़ा वाजिब नहीं होती, लेकिन रोज़ा मआफ़ नहीं होता। पाक होने के बाद क़ज़ा रखनी पड़ेगी। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–2 सफ़्हा–59, बहवाला बहरुर्राइक सफ़्हा–194)

निफ़ास वाली औरत

निफ़ास में भी नमाज़ बिल्कुल मआफ़ है और रोज़ा मआफ़ नहीं है, बल्कि उसकी क़ज़ा रखनी चाहिए और रोज़ा नमाज़ वग़ैरा के वही मसाइल हैं जो हैज़ के अहकामात हैं। बच्चा की पैदाइश के बाद जो ख़ून आता है उसको निफ़ास कहते हैं। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–2 सफ़्हा–62, बहवाला बहरुर्राइक सफ़्हा–194)

इस्तिहाज़ा का हुक्म

इस्तिहाज़ा का हुक्म ऐसा है जैसे किसी के नक्सीर फूटे और बंद न हो, ऐसी औरत नमाज़ भी पढ़े और रोज़ा भी रखे, क़ज़ा न करना चाहिए। इस्तिहाज़ा के अहकाम बिल्कुल माज़ूर के अहकाम की तरह हैं। जो बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–1 सफ़्हा–54 में तफ़सील के साथ ब्यान हो चुके हैं। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–2 सफ़्हा–61, बहवाला शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–113)

रोज़ा रखने के बाद दिन में हैज़ आ जाना

अगर फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ने में हैज़ आ गया, तो वह नमाज़ मआफ़ होगी। पाक होने के बाद उसकी क़ज़ा न पढ़े, और अगर नफ़्ल या सुन्नत में हैज़ आ गया तो उसकी क़ज़ा पढ़नी होगी। और अगर आधे रोज़े के बाद हैज़ आया तो वह रोज़ा टूट गया, जब पाक हो तो क़ज़ा रखे। और अगर नफ़्ल रोज़ा में हैज़ आ जाए तो उसकी क़ज़ा रखे। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–2 सफ़्हा–59, बहवाला जौहरतुन्नैयरा जिल्द–1 सफ़्हा–32)

कफ़्फ़ारे के रोज़े के दरमियान हैज़ आ जाना

माहवारी की वजह से कफ़्फ़ारा के रोज़ों में नागा मुज़िर नहीं, माहवारी ख़त्म होते ही फ़ौरन रोज़ा शुरू कर दे, इसी तरह साठ रोज़े पै–दर–पै पूरे करे, अगर माहवारी ख़त्म होने के बाद एक दिन का भी नागा किया तो नए सिरे से साठ रोज़े रखने होंगे।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–442)

दिन में पाक हो जाने का हुक्म

अगर रमज़ान शरीफ़ में दिन में पाक हुई तो अब

पाक होने के बाद कुछ खाना पीना दुरुस्त नहीं है। शाम तक रोज़ादारों की तरह रहना वाजिब है, लेकिन ये दिन रोज़ा में शुमार न होगा, बल्कि उसकी क़ज़ा रखनी पड़ेगी।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–2 सफ़हा–61, बहवाला शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़हा–316)

रात में पाक हो जाने का हुक्म

और अगर रात को पाक हुई और पूरे दस दिन रात हैज़ आया है, तो अगर ज़रा सी रात बाक़ी हो जिसमें एक दफ़ा अल्लाहुअकबर भी न कह सके, तब भी सुब्ह का रोज़ा वाजिब है। और अगर दस दिन से कम हैज़ आया है तो अगर इतनी रात बाक़ी हो कि जल्दी से गुस्ल तो कर लेगी लेकिन गुस्ल के बाद एक दफ़ा भी अल्लाहुअकबर न कह पाएगी तो भी सुब्ह का रोज़ा वाजिब है। अगर इतनी रात तो थी, लेकिन गुस्ल नहीं किया, तो रोज़ा न तोड़े, बल्कि रोज़ा की नीयत कर ले और सुब्ह को नहा ले, और अगर इससे भी कम रात हो, यानी गुस्ल भी न कर सके तो सुब्ह का रोज़ा जाइज़ नहीं है, लेकिन दिन को कुछ खाना पीना भी दुरुस्त नहीं, बल्कि सारे दिन रोज़ादारों की तरह रहे फिर उसकी क़ज़ा रखे।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–2 सफ़हा–61, बहवाला शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़हा–129)

अगर रात को पाक हुई, तो अब सुब्ह को रोज़ा न छोड़े, अगर रात को न नहाई हो तब भी रोज़ा रख ले सुब्ह को नहा ले, अगर सुब्ह होने के बाद पाक हुई तो अब पाक होने के बाद रोज़ा की नीयत करना दुरुस्त

नहीं, लेकिन कुछ खाना पीना भी दुरुस्त नहीं है अब दिन भर रोज़ादारों की तरह रहना चाहिए।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–70, बहवाला जौहरा नैयरा जिल्द–1 सफ़्हा–148)

नोटः गुस्ल करना उसी वक़्त ज़रूरी नहीं है, बल्कि मुराद ये है कि इतना वक़्त होना चाहिए कि जिसमें गुस्ल कर सके, फिर अगर गुस्ल बाद में कर ले यानी सुब्ह के बाद और रोज़ा रख ले तब भी सही है रोज़ा में कोई हरज नहीं आएगा। और रमज़ान के रोज़ा में जिस वक़्त भी औरत को हैज़ आ जाएगा चाहे दिन का थोड़ा सा हिस्सा बाक़ी हो, वह रोज़ा टूट गया, बाद में उसकी क़ज़ा कर ले, फ़र्ज़ हो या नफ़्ल। (मुरत्तिब रफ़अ़त क़ासमी)

पाक होते ही क़ज़ा रखना वाजिब

रोज़ा के लिए औरतों को हैज़ व निफ़ास के ख़ून से पाक होना शर्त है चुनाँचे हैज़ व निफ़ास वाली औरत पर न रोज़ा वाजिब है, और न रोज़ा रखना दुरुस्त है। दोनों क़िस्म की औरतों में से कोई अगर फ़ज्र से एक लहज़ा भर पहले पाक होगी तो (उसी वक़्त) रात ही से रोज़ा की नीयत कर लेना वाजिब है। हैज़ व निफ़ास वालियों पर ज्योंहि ये रोज़े से बाज़ रखने वाली हालत दूर हो जाए तो माहे रमज़ान के रोज़ों की जो रह गए हैं, क़ज़ा वाजिब है। (किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–883)

औरत को एहतिलाम हो जाना

औरत दिन में सो गई, और ऐसा ख़्वाब देखा जिससे नहाने की ज़रूरत हो गई, तो रोज़ा नहीं टूटता।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा—3 सफ़्हा—61, जौहरा नैयरा जिल्द—1 सफ़्हा—142)

गुस्ले जनाबत न करने पर रोज़े का हुक्म

रात को नहाने की ज़रूरत हुई, मगर गुस्ल नहीं किया, दिन को नहाई, तब भी रोज़ा हो गया। अगर दिन भर यानी तमाम दिन गुस्ल न करे, तब भी रोज़ा नहीं जाता, अलबत्ता उसका गुनाह अलग होगा। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा—3 सफ़्हा—70, बहवाला नूरुलईज़ाह सफ़्हा—141)

रोज़ा में मर्द के साथ लेटना

मर्द और औरत का साथ लेटना, हाथ लगाना, प्यार करना, ये सब दुरुस्त है, लेकिन अगर जवानी का इतना ज़ोश हो कि इन बातों से सोहबत करने का डर हो, तो ऐसा न करना चाहिए। मकरूह है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा—3 सफ़्हा—70, बहवाला नूरुलईज़ाह सफ़्हा—147)

औरत के होंट चूसना

औरत का बोसा (प्यार) लेना, और उससे बग़लगीर होना, मकरूह है, जबकि इंज़ाल का ख़ौफ़ हो, या अपने नफ़्स के बेइख़्तियार हो जाने का, और ऐसी हालत में जिमाअ़ करने का अंदेशा हो। और अगर ये ख़ौफ़ और अंदेशा न हो तो फिर मकरूह नहीं। नीज़ किसी औरत वग़ैरा के होंट मुंह में लेना और मुबाशरते फ़ाहिशा यानी ख़ास बदन, शर्मगाह का आपस में मिलाना, बिदून दुख़ूल के हर हाल में मकरूह है, ख़्वाह मनी निकलने का या जिमाअ़ (सोहबत) करने का ख़ौफ़ हो या न हो।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा—11 सफ़्हा—106, बहवाला आलमगीरी जिल्द—1 सफ़्हा—198)

हमबिस्तरी

अगर मर्द से हमबिस्तरी हुई तब भी रोज़ा जाता रहा उसकी क़ज़ा भी रखे और कफ़्फ़ारा भी दे। जब मर्द के पेशाब के मक़ाम की सुपारी अन्दर चली गई तो रोज़ा टूट गया, क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब होंगे, चाहे मनी निकले या न निकले। नीज़ अगर मर्द ने पाख़ाना की जगह अपना उज़्व (ज़कर) कर दिया और सुपारी अन्दर चली गई, तब भी औरत मर्द दोनों का रोज़ा जाता रहा। क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब हैं। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–70, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–151)

ज़बरदस्ती सोहबत करना

कोई औरत ग़ाफ़िल सो रही थी, या बेहोश पड़ी थी, उससे किसी ने सोहबत कर ली, तो रोज़ा जाता रहा। फ़क़त क़ज़ा वाजिब है। कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं है, और मर्द पर कफ़्फ़ारा भी वाजिब है। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–70, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–143)

किसी रोज़ादार औरत से ज़बरदस्ती या सोने की हालत में या बहालते जुनून जिमाअ़ किया तो औरत का रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा और औरत पर सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम आएगी, और मर्द रोज़ादार हो तो उस पर क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों लाज़िम हैं।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–11 सफ़्हा–105)

नाबालिग़ या मजनून से सोहबत कराना

अगर कोई औरत किसी नाबालिग़ या मजनून से जिमाअ़ कराए तब भी रोज़ा जाता रहा। उसको क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों लाज़िम हैं।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–11 सफ़्हा–105, बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–203)

औरतों का आपस में लुत्फ़ अंदोज़ होना

अगर दो औरतें आपस में साहिक़ा करें, यानी आपस में मशगूल और लुत्फ़ अंदोज़ हों और दोनों को इंज़ाल हो जाए और मनी निकल जाए तो दोनों का रोज़ा टूट जाएगा। और अगर इंज़ाल न हो तो नहीं टूटेगा। और इंज़ाल की सूरत में कफ़्फ़ारा लाज़िम न आएगा।

(फ़तावा हिन्दिया जिल्द–2 सफ़्हा–20)

रिहम में रबड़ का छल्ला दाख़िल करना

सवालः औरत को कजीए रिहम की शिकायत है, उसके इलाज के लिए शर्मगाह में दो माह तक एक रबड़ का छल्ला चढ़ा रहता है जो कि रिहम के अन्दरूनी हिस्सा में दाख़िल किया जाता है। क्या इससे रोज़ा टूट जाएगा?

जवाबः ख़ुद रोज़ा की हालत में ये छल्ला चढ़ाना मुफ़्सिदे सौम है, लेकिन अगर बग़ैर रोज़ा की हालत में चढ़ाया हुआ, रोज़ा की हालत में दाख़िले बदन बाक़ी रहे तो उससे रोज़ा में कोई ख़लल नहीं आता है।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–144)

रोज़े की हालत में शर्मगाह के अन्दर दवा रखना

सवालः इफ़्तार के बाद कोई औरत बीमारी की वजह से दवा की थैली बाँध कर रात के वक़्त ही अपनी शर्मगाह में रखे और इफ़्तार के बाद वह थैली निकाले, या रोज़ा की हालत में दिन में थैली रखे, शरई हुक्म क्या है?

जवाबः रोज़े शुरू होने से दाख़िले फ़रज में रखी हुई दवा से रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा। हाँ रोज़ा की हालत में

दवा रखने से रोज़ा टूट जाएगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–38)

रोजे की हालत में शर्मगाह में टयूब लगाना

सवालः रोज़ा की हालत में दिन में औरत को अपनी शर्मगाह में टयूब यानी दवा लगाना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः इससे रोज़ा नहीं टूटता, अलबत्ता फ़रजे दाख़िल दवा पहुंचने से रोज़ा टूट जाएगा। ऊपर के मुस्ततील सूराख़ के आख़िर में गोल सूराख़ से फ़रजे दाख़िल शुरू होता है। (अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–438)

औरतों की शर्मगाह के अन्दरूनी हिस्सा में कोई चीज़ रखी जाए तो रोज़ा फ़ासिद हो जाता है, इसलिए कि औरतों के अन्दर ये फ़ितरी मनफ़ज़ मौजूद है जो पेट तक पहुंचता है, अगर मर्द के उज़्वे तनासुल में कोई चीज़ डाली जाए तो रोज़ा हमारे नज़दीक नहीं टूटेगा। इसलिए कि मेअ़दा और उसकी नाली के दरमियान बराहे रास्त मनफ़ज़ नहीं है, बल्कि मसाना का वास्ता है, जहां से क़तरा क़तरा पेशाब नीचे आ कर जमा हो जाता है। आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–104 में है कि मर्द के पेशाब की राह में क़तरा डाले तो इमाम अबूहनीफ़ा (रह0) और इमाम मुहम्मद (रह0) के यहाँ रोज़ा नहीं टूटेगा। अलबत्ता औरत की शर्मगाह में क़तरा टपकाने की सूरत में बिला इख़्तिलाफ़ रोज़ा टूट जाएगा और ये ही सही है।

(जदीद फ़िक़्ही मसाइल जिल्द–1 सफ़्हा–97, बहवाला फ़तावा हिन्दीया जिल्द–1 सफ़्हा–104)

क्या हमल दिखलाने से रोज़ा टूट जाएगा

हज़रत मोहतरम मुफ़्ती साहब

ज़ीद मजदुकुम

अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह

मुन्दरजा सूरत में क्या हुक्म है।

शुरू अैयामे हमल में हामिला की शर्मगाह में डॉक्टरनी, या दाया, बाज़ मरतबा दस्ताना बारीक झिल्ली नुमा पहन कर, और बाज़ मरतबा बग़ैर दस्ताना के उंगली डाल कर मुआएना करती है। इस सूरत में रोज़ा का क्या हुक्म है।

वस्सलाम

सऊदुर्रमान, शम्स मंज़िल

मुहल्ला बड़े भाईयान, देवबंद

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

22/12/86 ई0

अलजवाब 729

हुवल मुवाफ़्फ़िक़ वल मुईन: अगर उस डॉक्टरनी या दाया के दस्ताना पर पानी वग़ैरा का असर नहीं है, तो इस तरह हाथ डालने से रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा, और अगर उस पर तरी होगी तो रोज़ा फ़ासिद होगा।

"اَدْخَلَ اِصْبَعَهُ اليابسة فيه اى دبره اوفرجها الخ لم يفطر

(درمختار) ولو مُبْتَلَّةً فسد (ردالمحتار)

अलजवाबु सहीहुन	वल्लाहु आलमु
कफ़ीलुर्रहमान नशात	मुहम्मद ज़फ़ीरुद्दीन
नाइब मुफ़्ती दारुलउलूम, देवबंद	मुफ़्ती दारुलउलूम, देवबंद

22 रबीउस्सानी 1407 हिजरी

शर्मगाह में उंगली दाख़िल करना

रोज़ा में पेशाब की जगह दवा रखना, या तेल वग़ैरा की कोई चीज़ डालना, दुरुस्त नहीं, अगर किसी ने रोज़ा

के दौरान दवा रख ली तो रोज़ा जाता रहा, क़ज़ा वाजिब है, कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं।

और अगर किसी ज़रूरत से दाई ने पेशाब की जगह उंगली डाली, या ख़ुद उसने अपनी उंगली डाली, फिर सारी उंगली या थोड़ी सीं उंगली निकालने के बाद फिर कर दी, तो रोज़ा जाता रहा, लेकिन कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं। और अगर निकलाने के बाद फिर नहीं की तो रोज़ा नहीं गया, हाँ अगर पहले से ही पानी वग़ैरा या किसी चीज़ में उंगली भीगी हुई हो तो औवल ही दफ़ा करने से रोज़ा जाता रहेगा।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–70, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–149)

उंगली दाख़िल करने से रोज़ा पर असर

सवालः औरत की शर्मगाह में अगर मर्द ने अपनी उंगली फेरी तो क्या रोज़ा टूट जाएगा?

जवाबः बीवी की शर्मगाह में उंगली दाख़िल करने से मर्द का रोज़ा नहीं टूटेगा, और औरत के रोज़े में ये तफ़सील है कि अगर उंगली गीली दाख़िल की या ख़ुश्क उंगली दाख़िल करने के बाद पूरी या ज़रा सी खींच कर फिर आगे की, तो औरत का रोज़ा टूट गया, सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है, औरत पर कफ़्फ़ारा नहीं।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–447)

उंगली डालने को मुफ़्सिदे सौम समझ कर जिमाअ करना

सवालः बीवी की शर्मगाह में दवा डालने के लिए उंगली अन्दर दाख़िल की और शहवत ग़ालिब आई तो ख़्याल हुआ कि रोज़ा टूट गया, उसके बाद सोहबत कर

ली, अब उस का क्या हुक्म है?

जवाब: रोज़ा की क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब है। (अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–444, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–118)

हामिला का हुक्म

हामिला औरत को रोज़ा न रखना जाइज़ है। बशर्ते कि अपनी या अपने बच्चे की मुज़र्रत का गुमाने ग़ालिब हो, ख़्वाह वह गुमान उसका वाक़ेअ़ के मुताबिक़ निकले या नहीं, अगर किसी औरत को रोज़ा की नीयत करने के बाद अपने हामिला होने का इल्म हुआ, तब भी उसको रोज़ा का फ़ासिद कर देना जाइज़ है। सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम आएगी। (आलमगीरी उर्दू पाकिस्तानी जिल्द–2 सफ़्हा–33, किताबुस्सौम)

हामिला औरत को ऐसी बात पेश आ गई जिससे अपनी जान या बच्चा की जान का डर है, तो रोज़ा तोड़ डालना दुरुस्त है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–17)

दर्देज़ेह से रोज़ा तोड़ देना

सवाल: अगर किसी हामिला औरत को हमल की वजह से काफ़ी तकलीफ़ है और वह रोज़ा रख कर तोड़ देती है, महज़ तकलीफ़ की वजह से, और सूरज गुरूब के वक़्त बच्चा की वलादत हो जाती है। शरई हुक्म क्या है?

जवाब: अगर रोज़ा न तोड़ने से औरत या बच्चा को कोई नुक़सान पहुंचने का ज़न्ने ग़ालिब हो तो रोज़ा तोड़ देना जाइज़ है, सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है, कफ़्फ़ारा नहीं, बग़ैर ऐसे ख़तरा के रोज़ा तोड़ना गुनाह है और कफ़्फ़ारा वाजिब है, अलबत्ता अगर उसी दिन गुरूबे आफ़ताब से पहले

बच्चा पैदा हो गया तो कफ़्फ़ारा साक़ित हो जाएगा।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–442)

ज़च्चा और कमज़ोर औरत का हुक्म

सवाल: ज़च्चा (विलादत के बाद) या कमज़ोर औरत जो रोज़ा न रख सके फ़िदया दे तो जाइज़ है या नहीं?

जवाब: इस सूरत में फ़िदया देना काफ़ी नहीं है, अगर फ़िदया दे दिया और फिर सेहत हो गई और क़ुदरत आ गई तो उस रोज़ा की क़ज़ा करना लाज़िम है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–478, बहवाला हिदाया जिल्द–2 सफ़्हा–204)

दूध पिलाने वाली की रिआयत

दूध पिलना, जिस औरत के मुतअ़ल्लिक़ किसी बच्चे का दूध पिलाना हो ख़्वाह बच्चा उसी का हो या किसी दूसरे का, बा उजरत पिलाती हो, या मुफ़्त, बशर्ते कि बच्चा की मुज़र्रत का गुमाने ग़ालिब हो, जैसा कि अक्सर मुशाहदा किया गया है कि रोज़ा की हालत में दूध ख़ुश्क हो जाता है, बच्चा भूक की वजह से तड़पता है और कुछ हरारत भी दूध में आ जाती है, वह भी बच्चा को नुक़्सान करती है। हाँ अगर मुफ़्त दूध पिलाती हो और कोई दूसरी दूध पिलाने वाली मिल जाए और वह बच्चा भी उससे पीने से राज़ी हो जाए तो ऐसी हालत में उसको रोज़ा न रखना जाइज़ नहीं। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–36 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–464)

दूध पिलाने की नौकरी की फिर रमज़ान आ गया

दूध पिलाने वाली ने दूध पिलाने की नौकरी की फिर रमज़ान आ गया, और रोज़ा से बच्चा की जान का डर है

तो अन्ना (दूध पिलाने वाली को) भी रोज़ा न रखना दुरुस्त है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–19, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–159)

क्या दूध पिलाने से औरत का रोज़ा टूट जाएगा?

सवालः दूध पिलाने से औरत का रोज़ा या उसका वुज़ू टूट जाएगा?

जवाबः रोज़ा और वुज़ू बातिल नहीं, रोज़ा तो इसलिए नहीं टूटता कि दूध बाहर निकल रहा है और रोज़ा नाम है मुफ़्तिरात के रोकने का।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–408, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–110, किताबुस्सौम)

हाएज़ा का रमज़ान में खाना पीना

सवालः अगर रमज़ान में औरत अैयामे हैज़ की वजह से रोज़ा न रखे तो उसको दिन में खाना पीना दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः अगर हैज़ की वजह से रोज़ा नहीं रखा, या रोज़ा रखने के बाद हैज़ आ गया, तो खाना पीना जाइज़ है। लेकिन दूसरों के सामने न खाए और अगर दिन को हैज़ से पाक हुई तो दिन का बाक़ी हिस्सा रोज़ादारों की तरह रहना वाजिब है।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–428)

दूध पिलाने की मुद्दत पूरी नहीं हुई थी कि हमल क़रार पा गया

सवालः एक हामिला हमल के नुक़्सान पहुंचने की वजह से रोज़ा न रख सकी, बच्चा की पैदाइश के बाद दूध पिलाने की वजह से माज़ूर रही और अभी दूध की

मुद्दत पूरी न हुई थी कि फिर हमल क़रार पा गया। इस तरह पर तवातुर क़ाइम हो गया, तो अब हामिला रोज़ा किस तरह रखे?

जवाबः अगर हालते हमल में उसको रोज़ा रखने की ताक़त नहीं है, या बच्चा की तरफ़ से अंदेशा है, तो जिस वक़्त उसका तवातुरे हमल मुनक़ता हो उसी वक़्त क़ज़ा करे। (फ़तावा रारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–462, बहवाला रद्दुलमुहतार फ़स्ल फ़िलअ़वारिज़ जिल्द–2 सफ़्हा–159)

रोज़े में औरत का बच्चे को चबा कर खिलाना

अपने मुंह से चबा कर छोटे बच्चे को कोई चीज़ खिलाना मकरूह है, अलबत्ता अगर इसकी ज़रूरत पड़े और मजबूरी और नाचारी हो जाए तो मकरूह नहीं है।

(बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–13, बहवाला शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–313)

और चबा कर खिलाने के उज़्र में से एक ये भी है, कि किसी औरत के पास कोई हैज़ वाली या निफ़ास वाली या कोई बेरोज़ादार न हो कि जो उसके बच्चा को खाना खिलाए और उसको नर्म पका हुआ खाना और दूध भी नहीं मिलता है, तो इस सूरत में चबा कर खिलाना जाइज़ है। (फ़तावा आलमगीरी उर्दू पाकिस्तानी जिल्द–2 सफ़्हा–11)

चबाते वक़्त लुक़्मा निगल जाना

अगर किसी ने लुक़्मा दूसरे के खिलाने के लिए चबाया, फिर उसको निगल गया, तो कफ़्फ़ारा न होगा सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–2 सफ़्हा–16 किताबुस्सौम)

अगर ज़बान से कोई चीज़ चख कर थूक दे, तो रोज़ा नहीं टूटा, लेकिन बेज़रूरत ऐसा करना मकरूह है। हाँ अगर किसी का शौहर बड़ा बदमिज़ाज हो और ये डर हो कि अगर सालन में नमक पानी दुरुस्त न हो, तो परेशान कर देगा उसका नमक चखना दुरुस्त है और मकरूह नहीं है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–13, बहवाला शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–313)

खाना पकाने की वजह से प्यास से बेताब हो जाना

खाना पाकाने की वजह से बेहद प्यास लग आई और इतनी बेताबी हो गई कि अब जान जाने का ख़ौफ़ है, तो रोज़ा खोल डालना दुरुस्त है, लेकिन अगर ख़ुद उसने क़स्दन इतना काम किया जिससे ऐसी हालत हो गई तो गुनहगार होगी। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–17, बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–159 और रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–152)

रोज़े में होंटों पर सुर्ख़ी लगाना

सवालः औरत को रोज़ा की हालत में होंटों पर सुर्ख़ी लगाना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः जाइज़ है, अलबत्ता मुंह के अन्दर जाने का एहतिमाल हो तो मकरूह है। (अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–424)

औरत का नफ़्ल रोज़ा

औरत को बग़ैर अपने शौहर की इजाज़त के नफ़्ल रोज़ा रखना मकरूह है, लेकिन अगर उसका शौहर मरीज़ या रोजादार, या हज, या उमरा के एहराम में है, तो मकरूह नहीं है। और गुलाम व बांदी को बग़ैर इजाज़त

अपने मालिक के रोज़ा रखना जाइज़ नहीं।

और अगर उनमें से किसी ने रोज़ा रख लिया तो शौहर को इख़्तियार है। तोड़ा दे। और यही हुक्म मालिक का है। और औरत उस रोज़ा की उस वक़्त क़ज़ा रखे जब शौहर इजाज़त दे, या शौहर से जुदा हो जाए। और अगर शौहर मरीज़ या एहराम में हो तो उसको ये जाइज़ नहीं कि अपनी बीवी को नफ़्ल रोज़ा से मना करे। और अगर मना करे तो भी इस सूरत में नफ़्ल रोज़ा रखना जाइज़ है। (आलमगीरी जिल्द–2 सफ़्हा–14 किताबुस्सौम)

औरत की तरफ़ से शौहर का क़ज़ा रखना

सवालः अगर किसी औरत के माहे रमज़ान के रोज़े क़ज़ा हो जाएं और उसका शौहर उसकी तरफ़ से रख दे तो दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः औरत ही को रोज़े रखने चाहिएँ, शौहर के रखने से औरत के रोज़े अदा न होंगे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–422, बहवाला बाबुलहज अनिलग़ैर जिल्द–2 सफ़्हा–326)

दसवाँ बाब

बच्चों के मसाइल

औलाद अमानत है

औलाद इंसान के पास एक अमानत है, उसके सिलसिले में उस पर बहुत सी शरई, अख़लाक़ी और क़ानूनी ज़िम्मादारियाँ आएद होती हैं। इस्लाम चाहता है कि इंसान के अन्दर शुरू ही से दीनी और दुनवी ज़िम्मादारियों का शुऊर व एहसास ताज़ा रहे और वालिदैन अपने बच्चों की तरबियत इस्लाम की रौशनी में करें। बच्चों पर अगरचे नमाज़ रोज़ा फ़र्ज़ नहीं, लेकिन आदत डलवाने के लिए बच्चों से भी नमाज़ पढ़वाई जाए और रोज़े भी रखवाए जाऐं, अगर ज़्यादा न रखवाए जाऐं तो एक दो ही काफ़ी हैं। क्योंकि आइंदा रमज़ान में उससे ज़्यादा भी रख सकते हैं। इसी तरह इबादत करना आदत बन जाएगी और यही इस्लाम चाहता है। बच्चा ताज़ा शाख़ की मानिन्द होता है, जिस तरफ़ भी शुरू में मोड़ देंगे (आदत डाल देंगे) मुड़ जाएगी। बाज़ औरतें मामता में आ कर ये ख़्याल करती हैं कि बच्चा कमज़ोर हो जाएगा, सेहत पर असर पड़ेगा। और अगर बच्चा अपने शौक़ में रोज़ा रख भी लेता है तो फूल सा मुरझाया हुआ चेहरा देखा नहीं जाता और रोज़ा इफ़्तार कराना चाहती हैं, भला कोई उनसे पूछे, कल जब

अल्लाह के यहाँ रोज़ा और अहकामे इलाही की पाबंदी न करने पर सख़्त से सख़्त सज़ा दी जाएगी और हौलनाक अज़ाब होगा, उसको कैसे बरदाश्त करेंगी?

सहाबए किराम (रज़ि.) के भी बच्चे थे और वह भी अपने माँ बाप के चहेते थे, लेकिन उन हज़रात की मुहब्बत अक़्लमंदी के साथ थी, और वह हज़रात कल की बड़ी मुसीबत से बचने के लिए दुनिया की थोड़ी सी देर की तकलीफ़ बरदाश्त करते थे। उनके बच्चे जब भी रोज़ा रखने के क़ाबिल, बल्कि पहले ही से रोज़ा रखवाने की कोशिश फ़रमाते थे। एक मरतबा हज़रत उमर (रज़ि.) ने रमज़ान में एक शराबी से फ़रमाया तेरी ख़राबी हो हमारे बच्चे (तक) तो रोज़ादार हैं, फिर उसको मारा। (बुख़ारी)

जब तक रमज़ान के रोज़े फ़र्ज़ नहीं हुए थे तो रसूलुल्लाह (स.अ.व.) आशूरा के दिन सुब्ह के वक़्त एलान करा देते थे कि जिसने अभी कुछ खाया पिया न हो वह रोज़ा रख ले। सहाबए किराम (रज़ि.) फ़रमाते हैं–

"ये एलान सुन कर हम भी रोज़ा रखते थे और अपने छोटे बच्चों को भी रखवाते थे और उनको लेकर मस्जिद की तरफ़ निकल जाते थे और उनके लिए रंगीन ऊन वग़ैरा के खिलौने बना देते थे, जब कोई बच्चा खाने के लिए रोता तो हम उसको खिलौना दे कर बहला देते थे और इसी तरह इफ़्तार का वक़्त हो जाता था।"

(नैलुल औतार जिल्द–2 सफ़्हा–209)

इससे अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि बच्चों की क्या उम्र होगी, जो खेल खिलौने से बहल जाते थे और उन बच्चों के वालिदैन पर क्या गुज़रती होगी। लेकिन ये

सब कुछ इसलिए बरदाश्त फ़रमाते थे कि उनके नज़्दीक बच्चों के दीनदार होने की अहमियत आज कल के अहमक़ाना लाड और चोंचलो से ज़्याद थी।

(मुरत्तिब रफ़अत क़ासमी)

ज़वाल से पहले बालिग़ हो जाना

अगर कोई ज़वाल से पहले बालिग़ हुआ और अभी तक कुछ खाया नहीं है और नफ़्ल रोज़ा की नीयत की तो रोज़ा हो जाएगा।

(आलमगीरी पाकिस्तानी उर्दू जिल्द–2 सफ़्हा–36)

बच्चे में रोजे की ताक़त हो तो

जब बच्चा में रोज़ा रखने की ताक़त हो, तो उसको रोज़ा का हुक्म किया जाए और ये उस सूरत में है कि जबकि बच्चा को रोज़ा रखने से कोई ज़रर न हो, और अगर ज़रर हो तो हुक्म न किया जाए। और जब हुक्म किया और उसने रोज़ा न रखा तो उस पर क़ज़ा वाजिब नहीं है। (आलमगीरी उर्दू पाकिस्तानी जिल्द–2 सफ़्हा–36)

दस साल के बच्चा का हुक्म

अबूहफ़्स (रह.) से पूछा गया कि दस बरस के बच्चा को रोज़ा न रखने पर क्या मारें, तो उन्होंने जवाब दिया इसमें इख़्तिलाफ़ है और सही ये है वह बमंज़िलए नमाज़ के ही है। (आलमगीरी उर्दू जिल्द–2 सफ़्हा–36)

नाबालिग़ बच्चे का रोज़ा तोड़ देना

सवालः नाबालिग़ बच्चा रोज़ा फ़ासिद कर दे, या उसके वालिद रहम की वजह से रोज़ा खुलवा दें, या फ़ासिद कर दे, तो क्या उस पर क़ज़ा या कफ़्फ़ारा वाजिब है?

जवाबः नाबालिग़ रोज़ा तोड़ दे तो उसकी क़ज़ा

रखवाना ज़रूरी नहीं, नमाज़ तोड़ दे तो दोबारा पढ़वाना (जबकि समझदार हो) वाजिब है, सात साल का हो तो प्यार और मुहब्बत से कहा जाए। और अगर दस बरस का हो तो मार कर नमाज़ पढ़ाई जाए। (अहसनुल फ़तावा (पाकिस्तानी) जिल्द–4 सफ़्हा–430, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–117)

बच्चे के लिए रोज़ा रखना बेहतर है या पढ़ने में मेहनत करना?

सवालः नाबालिग़ तलबा को रमज़ानुलमुबारक में रोज़ा रखना बेहतर है या पढ़ने में मेहनत करना ज़रूरी है? जबकि रोज़ा रखने से उनको ज़ोअ़फ़ होता है और वह तालीम में मसरूफ़ रहते हों।

जवाबः दुर्रेमुख़्तार की इबारत से मालूम होता है कि नाबालिग़ लड़कों का हुक्म रोज़े के बारे में नमाज़ की तरह है कि सात बरस की उम्र में नमाज़ और रोज़ा का हुक्म किया जाए, और दस साल की उम्र में मार कर नमाज़ रोज़ा रखवाया जाए कि रमज़ान में बच्चों से तहसीले इल्म की मेहनत कम ली जाए। इस वजह से मदारिसे इस्लामिया में उमूमन रमज़ान शरीफ़ की तातील कर दी जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–491, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–326 किताबुस्सलात जिल्द–2 सफ़्हा–147 किताबुस्सौम)

रमज़ान में दिन में बालिग़ हो जाना

अगर कोई दिन में मुसलमान हो जाए या दिन में जवान (बालिग़) हो जाए तो दिन में खाना पीना दुरुस्त

नहीं है। और अगर कुछ खा लिया तो उस रोज़ा की क़ज़ा रखनी भी उस नौ मुस्लिम या नए बालिग़ पर वाजिब नहीं है।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–19, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–303)

आज कल की रस्में

आज कल, लोगों ने ब्याह, शादी, वलीमा, ख़तना और अक़ीक़ा और उन जैसे और बहुत से उन कामों को जो ख़ालिस दीन हैं अपनी बेवकूफ़ी से उन्हें रस्म व रिवाज के शिकंजों में कस कर अपने ऊपर मुसीबत बना लिया है और आसान से आसान चीज़ को सख़्त से सख़्त और मुश्किल से मुश्किल कर लिया है। यही हाल बहुत सी जगहों पर बच्चों के पहले रोज़ा का भी है कि जब बच्चा पहले पहल का रोज़ा रखता है तो चाहे, कोई कितना ही ग़रीब और तंगदस्त हो लेकिन क़र्ज़ लेकर, भीक माँग कर किसी न किसी तरह बच्चे के लिए नए कपड़े बनाएगा, रिश्तादारों, मुहल्लादारों और कुंबा वालों को दावत देगा और बेहतर से बेहतर खाने पीने का इंतिज़ाम करेगा और क़िस्म क़िस्म के फल मेवे मिठाइयाँ बच्चे के इफ़्तार के लिए लाएगा और इन तमाम बखेड़ों के साथ बच्चे का पहला रोज़ा पूरा होगा। और जब तक इतनी हिम्मत न हो बच्चों का रोज़ा नहीं रखवाया जा सकता, चाहे वह जवान हो जाऐं, मैंने अपनी आँख से ऐसे बच्चे देखे हैं जो जवान हो गए लेकिन सिर्फ़ इस वजह से अभी रोज़े शुरू नहीं किए कि वालिदैन के पास अभी इतनी गुंजाइश नहीं है कि धूम धाम से बच्चे का पहला रोज़ा रखवा सकें।

"لاحول ولا قوة"

सच कहा है इक़बाल मरहूम ने!

हक़ीक़त ख़ुराफ़ात में खो गई
ये उम्मत रिवायात में खो गई

अल्लाह तआ़ला हम सब मुसलमानों को अक़्ल नसीब फ़रमाए और हमारी इबादतों को रस्म व रिवाज के शिकंजों से आज़ाद कर दे। आमीन! (रमज़ान क्या है?)

ग्यारहवाँ बाब

मरीज़ा के मसाइल

मरीज़ का नीयत के बावजूद इफ़्तार कर लेना

सवालः एक शख़्स रमज़ान शरीफ़ में मरीज़ था, बाज़ दिन रोज़ा रखता था और बाज़ दिन इफ़्तार करता था। इत्तिफ़ाक़न एक दिन रोज़ा की नीयत की फिर सुब्ह की नमाज़ के बाद इफ़्तार कर लिया तो इस सूरत में क्या हुक्म है, क़ज़ा या कफ़्फ़ारा?

जवाबः इस सूरत में उस रोज़ा की क़ज़ा वाजिब होगी। कफ़्फ़ारा वाजिब न होगा, क्योंकि वह पहले से मरीज़ था, लिहाज़ा उसको रोज़ा इफ़्तार करना जाइज़ था।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–425, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–150)

रोज़ा रखने के बाद बीमार हो जाना

सवालः एक शख़्स रोज़ा रखने के बाद बीमार हो गया और हालत नाज़ुक थी, अगरचे मौत का ख़ौफ़ न था। इस हालत में डॉक्टर ने दवा पिलाई, तो क्या ये शख़्स गुनहगार होगा? क़ज़ा वाजिब है या कफ़्फ़ारा?

जवाबः अगर रोज़ा छोड़ने की सूरत में मरज़ की शिद्दत या मौत में इज़ाफ़ा का ज़न्ने ग़ालिब हो, तो इफ़्तार जाइज़ है, सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है, कफ़्फ़ारा नहीं। अगर इंजेक्शन

से इलाज हो सके तो रोज़ा तोड़ना जाइज़ नहीं है।
(अहसनुलफ़तावा (पाकिस्तानी) जिल्द–4 सफ़्हा–422)

मजबूरी में इफ़्तार का हुक्म

सवाल: एक शख़्स ने बुख़ार में रोज़ा रखा और तीसरे दिन भी उसने नीयत रोज़ा की कर के रोज़ा शुरू किया और बुख़ार की शिद्दत की वजह से ये तीसरा रोज़ा इफ़्तार करना पड़ा और उसके बाद दस दिन बराबर बीमार रहा और दस दिन रोज़ा न रख सका। शरअन ऐसे शख़्स पर कफ़्फ़ारा है? या क़ज़ा?

जवाब: उस शख़्स पर क़ज़ा सिर्फ़ उस रोज़े की है और नीज़ उन रोज़ों की जो उसके बाद इफ़्तार किए (यानी बीमारी की हालत में जो रोज़े नहीं रखे थे) क़ज़ा वाजिब है, क्योंकि इस बारे में ख़ुद रोज़ादार मरीज़ का ग़लबए ज़न भी मोतबर है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–422, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–158)

सेहत याब होने से पहले इंतिक़ाल हो जाना

सवाल: एक शख़्स फ़ौत हो गया, उस पर सात दिन की नमाज़ें मरज़ की वजह से रह गई हैं और दो माह के रोज़े क़ज़ा हो गए हैं, मुआलिज रोज़ा रखने से मना करता है, अगर उसके वारिस उसकी तरफ़ से कफ़्फ़ारा अदा करें तो क्या हुक्म है?

जवाब: अगर उस मरज़ से सेहत न हुई हो, तो जिसमें रोज़े फ़ौत हुए थे, और उसी मरज़ में इंतिक़ाल हो गया तो उन नमाज़ों की क़ज़ा लाज़िम नहीं है। लिहाज़ा उन नमाज़ों का फ़िदया अदा करना भी लाज़िम नहीं है। अलबत्ता नमाज़ों का फ़िदया वारिसवों को अदा कर देना

चाहिए, अगरचे मैयत ने वसीयत न की हो, उम्मीद है कि इंशाअल्लाह तआ़ला कफ़्फ़ारा नमाज़ों का हो जाएगा।

सात दिन की नमाज़ें 42 होती हैं, वित्र के साथ, और हर एक नमाज़ का फ़िदया मिस्ले सदक़ए फ़ित्र के पौने दो किलो गेहूं या उसकी क़ीमत देनी चाहिए, और रोज़ों का फ़िदया अरचे वाजिब नहीं, लेकिन अगर दे दिया जाए तो कुछ हरज नहीं है, मैयत को सवाब पहुंच जाएगा। और फ़िदया एक रोज़ा का मिस्ल एक नमाज़ के है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–465)

रोज़ा रखने से नक्सीर फूट जाना

सवाल: एक शख़्स को भूका रहने की वजह से नक्सीर वग़ैरा फूट जाती है, ऐसी हालत में दो रमज़ान गुज़र गए हैं और आइंदा भी कम उम्मीद है, तो ये शख़्स गुज़श्ता रमज़ान का फ़िदया दे या सेहत का इंतिज़ार करे?

जवाब: ये शख़्स मरीज़ है, शैख़ फ़ानी नहीं है, और मरीज़ का हुक्म शरीअ़त में ये है कि अगर मरज़ से अच्छा होने के बाद इतनी मुद्दत उसको मिले कि उसमें क़ज़ा कर सकता है, तो रोज़े की क़ज़ा उसके ज़िम्मा वाजिब है, वरना क़ज़ा भी नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–75, क़दीम अज़ीज़िया)

नज़ले में दवा सूंघना

क्या फ़रमाते हैं मुफ़्तियाने किराम ज़ैल की सूरत में, नज़ला में आज कल दवा खाने पीने की बजाए विक्स (एक क़िस्म की दवा है जिसके सूंघने से उसकी तेज़ी दिमाग़ में पहुंचती है, जिससे नज़ला ठीक हो जाता है) का इस्तेमाल करते हैं यह रोज़ा की हालत में जाइज़ है

या नहीं?

वस्सलाम

रज़ी अहमद शम्स मंज़िल

मुहल्ला बड़े भाईयान, देवबंद 18–4–1407 हिजरी

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

अलजवाब

"هوالموفق و المعین"

रोज़ा की हालत में विक्स का इस्तेमाल एहतियात के ख़िलाफ़ है, अगर उसमें सुफूफ़ नहीं होता है, तो इससे रोज़ा नहीं टूटेगा, जैसे ख़ुश्बू, इत्र वग़ैरा, या गुलाब के फूल सूंघने से रोज़ा नहीं फ़ासिद होता है।

"انہ کشم الورد ومائہ والمسک لو ضوح الفرق بین هواء تطیب بریح المسک وشبهه" (ردالمحتار)

अलजवाबु सहीहुन
कफ़ीलुर्रहमान नशात
नाइब मुफ़्ती, दारुलउलूम, देवबंद
22 रबीउस्सानी 1407 हिजरी

वल्लाहु आलमु
ज़फ़ीरुद्दीन गुफ़िरलहू
नाइब मुफ़्ती, दारुलउलूम, देवबंद

हैज़े और पेट का मरीज़

सवाल: (1) मरज़े हैज़ा फ़ैला हुआ था, एक शख़्स को क़ैय और दस्त आने लगे, वह रोज़ा से था, जब कैय आई तो उस शख़्स ने और उसके आस पास वालों ने ये समझा कि अब रोज़ा टूट गया। मरीज़ ने पानी माँगा ओर लोगों ने पानी पिला दिया। अब उसके ज़िम्मा क़ज़ा है या कफ़्फ़ारा भी?

(2) और इसी तरह एक शख़्स के पेट में दर्द हुआ, उको दवा दी गई, उस पर क़ज़ा है या कफ़्फ़ारा?

जवाबः दोनों के ज़िम्मे सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है, कफ़्फ़ारा नहीं। (किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–2 सफ़्हा–230)

ज़ोअफ़े दिमाग़ का मरीज़

सवालः ज़ैद ज़ोअफ़े दिमाग़ के मरज़ में मुब्तला है जिसकी वजह से कभी कभी मरज़े रअ़शा (कपकपाहट) में मुब्तला हो जाता है, रोज़ा रखने से मजबूरी है और रोज़ा रखने की हलात में मुलाज़मत का काम अंजाम नहीं दे सकता है, रोज़ा रखे? या क़ज़ा करे या कफ़्फ़ारा दे?

जवाबः मरीज़ को रोज़ा इफ़्तार करना उस वक़्त जाइज़ होता है कि ज़्यादतीये मरज़ का अंदेशा हो, और तकलीफ़ बढ़ने का ख़ौफ़ हो, ऐसी हालत में इफ़्तार करना दुरुस्त है और बाद में क़ज़ा लाज़िम है, फ़िदया देना उसको जाइज़ नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–487)

दमा का मरीज़

सवालः ज़ैद रमज़ान शरीफ़ में खाँसी और दमा के मरज़ में मुब्तला है एक रोज़ा रख कर फिर नहीं रख सका, चुनांचे वह ही मर्ज़ अब भी है, अगर ज़ैद साठ मिस्कीनों को खाना खिला दे तो क्या रोज़ों की मआ़फ़ी हो सकती है?

जवाबः ज़ैद मरीज़ ब मरज़ मज़कूर के ज़िम्मा रोज़ों की क़ज़ा लाज़िम है, फ़िदया देना काफ़ी नहीं है, यानी क़ज़ा उससे साक़ित न होगी, बल्कि जिस ज़माना में वह मरज़ न हो, उस वक़्त क़ज़ा करे, फ़िदया एक रोज़ा का एक मिस्कीन को दोनों वक़्त खाना खिलाना है, या सदक़ए फ़ित्र की मिक़्दार के बराबर, या उसकी क़ीमत देना है,

मगर ये फ़िदया शैख़ फ़ानी (रोज़ा की कभी भी कूवत की उम्मीद न हो) के हक़ में दुरुस्त है, दीगर बीमारों को रोज़ा की क़ज़ा करना लाज़िम है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–462, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–160 बाब फ़िलअवारिज़)

रोज़े में पेशाब बंद हो जाना

पेशाब बंद होने की सूरत में डॉक्टर मसाने में नल्की डाल कर पेशाब कराते हैं। रोज़े की हालत में ऐसी सूरत पेश आ जाए तो रोज़े का क्या हुक्म है, बहवाला जवाब इनायत फ़रमाएँ।

इस सूरत में रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा, इसलिए कि मसाने और उज़्वे तनासुल का तअ़ल्लुक़ पेट से नहीं होता। दुर्रेमुख़्तार में है कि:

”اَوْاَقْطَرَفِیْ اِحْلِیْلِهٖ مَاءً اَوْدُهْنًا وَ اِنْ وَصَلَ اِلَی الْمَثَانَةِ عَلی المذهب (درمختار) ای قَوْلِ اَبِیْ حَنِیْفَةَ وَ مُحمد مَعَهٗ فِی اللَّظْهَرِ الخ وَاللَّظْهَرُ اِنَّهٗ لَا مَنْفَذَ لَهٗ وَ اِلَّا یَجْمِعُ الْبَوْلُ فِیْهَا بِالتَّرشِیْحِ کَذَ ایَقُوْلُ اْلاَ طِبَّاءُ زُیلعی الخ فَاِنَّ المثَانَتَهَ لَا مَنْفَذَ لَهَا عَلیٰ قَوْلِهِمَا (ردالمحتار)

ख़ुलासा ये है कि मसाना में नल्की डाल कर पेशाब कराने से रोज़ा नहीं टूटता है।

”الجواب: کفیل الرحمن نشاط نائب مفتی دارالعلوم، دیوبند
۲۲–۴–۱۴۰۷ھ

वल्लाहु आलमु, मुहम्मद ज़फ़ीरुद्दीन गुफ़िरलहू मुफ़्तिये दारुलउलूम देवबंद 22–4–1407 हिजरी

रोज़े में अनीमा कराना

सवालः पाख़ाना बंद होने की सूरत में अनीमा कराया जाता है। उस सूरत में रोज़ा बाक़ी रहेगा या नहीं?

जवाबः अनीमा भी बतौर दवा अन्दर लगाते हैं, लिहाज़ा उससे रोज़ा टूट जाएगा और उस पर उसकी क़ज़ा वाजिब होगी, कफ़्फ़ारा नहीं आएगा। दुर्रेमुख़्तार में है किः

اَوْاِحْتَقَنْ اور استعط الخ قَضیٰ فقط (درمختار)

अलजवाबु सहीहुनः कफ़ीलुर्रहमान नशात नाइब मुफ़्ती, दारुलउलूम देवबंद। वल्लाहु आलमुः मुहम्मद ज़फ़ीरुद्दीन मुफ़्तिये दारुलउलूम 22–4–1407 हिजरी

ख़ूनी बवासीर का मरीज़

सवालः एक शख़्स ख़ूनी बवासीर के मरज़ में मुब्तला है, जब भी रोज़ा रखता है ख़ून आने लगता है, और मस्से भी बवासीर के फूल जाते हैं, और बड़ी तकलीफ़ होती है, रोज़ा अगर न रखे तो सही रहता है, उसके लिए शरई हुक्म क्या है?

जवाबः ऐसे मरीज़ को रमज़ान शरीफ़ में रोज़ा इफ़्तार करने की इजाज़त है, फिर जब तंदुरुस्त हो जाए और रोज़ा रखने के क़ाबिल हो जाए, उस वक़्त क़ज़ा करे, फ़िदया देना उसको काफ़ी नहीं है, अलबत्ता ऐसे मरीज़ को जिसका मरज़ दाएमी हो जाए और सेहत से नाउम्मीद हो तो फ़िदया देना जाइज़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–484, बहवाला रद्दुलमुहतार, जिल्द–2 सफ़्हा–163) फ़स्लुन फ़िलअवारिज़।

बवासीर के मस्सों पर मरहम लगाना

सवालः अगर रोज़ा की हालत में मक़अद (दुबुर) के अन्दर बवासीर के मस्सों के ज़ख़्म पर मरहम या तेल उंगली से लगाए, या अन्दर से ख़ूब धोए, तो रोज़ा सही होगा या नहीं?

जवाबः रोज़ा उसका सही है, मगर एहतियात बेहतर है। (हाशिया में ये लिखा है कि सूरते मस्ऊला में अन्दर इस हद तक दवा पहुंच जाए, या पानी जहाँ से मेअ़दा उसको जज़्ब कर लेता है, या वह ख़ुद मेअ़दा में पहुंच जाता है, तो रोज़ा फ़ासिद हो गया, और इसी वजह से हज़रत मुफ़्ती अल्लाम ने एहतियात को बेहतर कहा है, इसलिए इसका लिहाज़ व ख़्याल हर शख़्स के लिए मुम्किन नहीं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–411, बहवाला रद्दुलमुहतरी जिल्द–2 सफ़्हा–135)

बवासीर के मस्से बाहर निकल आना

सवालः एक शख़्स को बवासीर का मरज़ है, इजाबत के वक़्त (पाख़ाना के वक़्त) बवासीर के मस्से बाहर आ जाते हैं, इस्तिंजा करने के बाद दबाने से अन्दर जाते हैं। हाथ को पानी से तर कर के मस्सों को, या ख़्वाह मस्सों को तर कर के दबाया जाए, और मस्सों का अन्दर जाना किसी वक़्त ग़ैर मुम्किन और किसी वक़्त सख़्त दुश्वारी का बाइस और तकलीफ़ देह होता है, और बाज़ मरतबा तो इस तरह से दबाने से ख़ून भी जारी हो जाता है। सवाल ये है कि इस तरह करने से रोज़ा बाक़ी रहेगा या नहीं?

जवाबः ऐसी हालत में रोज़ा उसका क़ाइम रहेगा। रोज़ा में किसी तरह का नुक़्सान न आएगा, इसलिए कि मस्सों की जगह जो किनारए दुबुर है उस जगह पानी पहुंचने से रोज़ा नहीं टूटता, न माज़ूर का और न ग़ैर माज़ूर का।

जवाब दोमः रोज़ा की हालत में हाथ को पानी से

तर कर के मस्सों को दबाना, या तहारत मस्सों की पानी से कर के मस्सों को दबाना मुफ़सिदे रोज़ा नहीं है। इसलिए कि जो रुतूबत पानी की मस्सों पर रह जाती है और मस्सों के साथ जौफ़ में दाख़िल होगी उससे एहतिराज़ मुम्किन नहीं ख़ुसूसन मरीज़े बवासीरे शदीद को और जो उस क़िस्म की चीज़ जौफ़ में दाख़िल हो जिससे एहतिराज़ (बचना) मुम्किन न हो वह नाक़िज़े रोज़ा नहीं होती है, जैसे कि पानी की रुतूबत कुल्ली करने के बाद रह जाती है। इसलिए बावजूद रुतूबत मस्सों के ज़्यादा होती है। (फ़तावा रशीदिया कामिल, सफ़्हा–372) बवासीरी मस्से मौज़ए हुक़ना से बहुत नीचे होते हैं और बराहे मक़अद दाख़िल होने वाली चीज़ जब तक मौज़ए हुक़ना तक न पहुंचे मुफ़्सिद नहीं। लिहाज़ा मस्सों को पानी से तर कर के चढ़ाने से और मस्सों पर दवा लगाने से रोज़ा नहीं टूटता। अलबत्ता काँच को तर कर के चढ़ाने से रोज़ा टूट जाता है। इसलिए कि ये मौज़ए हुक़ना तक पहुंच जाती है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–430)

बेहोश और पागल का हुक्म

अगर माहे रमज़ान में किसी दिन जुनून लाहिक़ हो गया, या पहले से जुनून तारी था और माहे रमज़ान में किसी दिन इफ़ाक़ा हो गया, तो रोज़े की क़ज़ा वाजिब है, हाँ अगर पूरे दिन या इससे ज़्यादा अरसा तक हालते जुनून तारी रही तो उसकी क़ज़ा वाजिब नहीं है। बख़िलाफ़ उसके कि जिसको बेहोशी लाहिक़ हो उस पर रोज़ा की क़ज़ा वाजिब है ख़्वाह बेहोशी कितने ही अरसा तक रही हो।

नशा में डूबे हुए और सोए हुए का वही हुक्म है जो बेहोशी का है, इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि कोई नशा का आदी हो या न हो।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–885)

ज़ियाबीतस (शक्कर) का मरीज़

सवालः ज़ैद कई साल से ज़ियाबीतस के मरज़ में मुब्तला है। जिसकी वजह से कमज़ोरी हो जाती है और नक़ाहत भी, रोज़ा रखना दुश्वार है, ख़ुसूसन सख़्त गर्मी में, उसके लिए क्या हुक्म है?

जवाबः ऐसे मरीज़ पर कि वह रोज़ा न रख सके ज़ोअ़फ़ की वजह से, या मरज़ की वजह से इफ़्तार करना यानी रोज़ा न रखना रमज़ान शरीफ़ में दुरुस्त है, लेकिन जब तक तवक़्क़ो सेहत की हो, फ़िदया देना काफ़ी नहीं बल्कि सेहत के बाद क़ज़ा लाज़िम है, और फिर अगर सेहत की उम्मीद न रहे और मरज़ का इज़ाला न हो, तो उन रोज़ों का फ़िदया दे दे। और हर एक रोज़े का फ़िदया सदक़ए फ़ित्र के बराबर है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–474, बहवाला रद्दुलमुहतार फ़स्लुन फ़िलअवारिज़ जिल्द–2 सफ़्हा–159)

टीबी (पतेदिक़) का मरीज़

हमारे गाँव में टीबी का मरीज़ है, कम व बेश छः माह से ज़ेरे इलाज है। इससे क़ब्ल एक्सरे लिया गया था जिसमें फेफड़े में ख़राबी बताई गई है, और दूसरा एक्सरे चार माह बाद लिया गया था, उसमें दस बारह आना फ़ाएदा मालूम हुआ है, दवा जारी है। हकीम साहब का कहना है कि रोज़ा न रखे, शरअ़न क्या हुक्म है?

जवाब: टीबी के मरीज़ को नुक़सान पहुंचने के अंदेशा की वजह से जनाब हकीम साहब रोज़ा रखने की इजाज़त नहीं देते, तो उसके मुताबिक़ अमल करना चाहिए वह ख़ुद आलिम हैं और हाज़िक़ हकीम हैं, उनकी राए मोतबर है बाद सेहत कज़ा रखे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–39)

बीमारी के बाद ज़ोअफ़ बाक़ी रहना

अगर बीमारी से अच्छा हो जाए, लेकिन अभी कमज़ोरी बाक़ी है, और ये ग़ालिब गुमान है कि अगर रोज़ा रखा तो फिर बीमार पड़ जाएगा, तब भी न रखना जाइज़ है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–11 सफ़्हा–153)

घोड़े पर बैठने से मनी ख़ारिज हो जाना

सवाल: एक शख़्स को बाज़ औक़ात ये बात पेश आती है कि जिस वक़्त घोड़े पर सवार हो कर दौड़ता है तो शर्मगाह हरकत कर के मनी कूद कर ख़ारिज हो जाती है। हसबे इत्तिफ़ाक़ एक रोज़ रमज़ान में घोड़े पर सवार हो कर जा रहा था, ये वाक़िआ पेश आ गया। इस बारे में जो शरई हुक्म हो मुत्तला फ़रमाऐं। क्या कफ़्फ़ारा होगा या क़ज़ा?

जवाब: उस पर न क़ज़ा है और न कफ़्फ़ारा, बल्कि उसका रोज़ा सही और बाक़ी है। दुर्रेमुख़्तार में है कि सोच विचार से एहतेलाम या इंज़ाल हो जाए, या जानदार की शर्मगाह को हाथ लगाया, प्यार किया, इंज़ाल हो जाए तो रोज़ा नहीं टूटता। (इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–170)

रोज़े में टीका लगवाना

सवाल: अगर रोज़ा की हालत में टीका लगाया जाए

जो कि बाज़ू में या किसी जगह बदन में लगाया जाता है उसका क्या हुक्म है। क्या रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा?

जवाबः इससे रोज़ा हो जाता है। फ़ासिद नहीं होता। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–407, बहवाला अलबदाए वस्सनाए जिल्द–2 सफ़्हा–93)

रोज़े में इंजेक्शन लगवाना, गुलूकोज़ और ख़ून चढ़वाना

इंजेक्शन के ज़रीए जो चीज़ें जिस्म में दाख़िल की जाती हैं वह उमूमन रगों के वास्ता से क़ल्ब और दिमाग़ या मेअ़दा तक पहुंचती हैं और एक ऐसी राह से गुज़रती हैं जो उसकी हक़ीक़ी राह (और फ़ुक़हा की ज़बान में मनफ़ज़) नहीं है। कुतुबे फ़िक़्ह की मुख़्तलिफ़ नज़ाइर को सामने रखने से अंदाज़ा होता है कि फ़ुक़हा ऐसी सूरतों को मुफ़्सिदे सौम क़रार नहीं देते हैं, मसलन ज़ख़्म दो क़िस्म के हैं जिसमें दवा डालने को मुफ़्सिदे सौम (रोज़ा) क़रार दिया है–

(1) एक आमा, दूसरे जाएफ़ा।

आमा सर के उस गहरे ज़ख़्म को कहते हैं जो अस्ल दिमाग़ तक पहुंच गया हो और उसके ज़रीए दवा भी वहां तक पहुंच जाती हो।

(2) जाएफ़ा, पेट के उस ज़ख़्म को कहते हैं जो मेअ़दा तक गहरा हो, और उसके ज़रीए दवाएं पेट तक पहुंच जाती हों, इस तरह गोया ये ज़ख़्म मेअ़दा और दिमाग़ तक पहुंचने के लिए बिला वास्ता राह और मनफ़ज़ पैदा कर देते हैं, उसमें दवा डालना मुफ़्सिदे सौम है। उसके बरख़िलाफ़ दूसरे ज़ख़्मों पर दवा डालना मुफ़्सिदे सौम नहीं है। चाहे वह कोई भी ज़ख़्म हो, जो जिस्म के अन्दरूनी

हद तक पहुंचा हो, उसमें डाली गई दवाऐं बिलवास्ता मेअ़दा तक या दिमाग़ तक पहुंच ही जाती हैं, मगर उससे रोज़ा नहीं टूटता है।

हिदाया जिल्द औवल सफ़्हा–200 मुफ़्सिदाते सौम में है कि अगर पेट या दिमाग़ के अन्दर पहुंचे हुए ज़ख़्म का दवा के ज़रीए इलाज करे फिर दवा पेट या दिमाग़ के अन्दर तक पहुंच जाए तो इमाम आज़म के नज़दीक रोज़ा टूट जाएगा और इस तरह मरतूब दवा ही पहुंच सकती है।

हासिल ये है कि इंजेक्शन के ज़रीए चाहे ख़ून पहुंचाया जाए या दवा मुफ़्सिदे सौम न होगा, चूंकि गुलूकोज़ वग़ैरा की नौइयत भी यही होती है कि रगों के वास्ते से पहुंचाया जाता है। मेअ़दा या दिमाग़ के किसी मनफ़ज़ के ज़रीए नहीं पहुंचाया जाता है। इसलिए रोज़ा नहीं टूटेगा।

(जदीद फ़िक़्ही मसाइल जिल्द–1 सफ़्हा–96)

इंजेक्शन के बारे में उलमाए देवबंद का फ़तवा

ये ज़ाहिर है कि इंजेक्शन का तरीक़ा अह्दे रिसालत में मौजूद था और न अइम्मए मुजतहिदीन (रह.) के ज़माने में, इसलिए उसका हुक्म न हदीस में मिल सकता है और न अइम्मए दीन के ज़माना में, इसलिए फ़िक़्ही उसूल व क़वाएद पर क़यास कर के ही उसका हुक्मे शरई मालूम किया जा सकता है। सो उसकी वाज़ेह मिसाल यह है कि अगर किसी को बिच्छू या साँप काट ले तो मुशाहदा है कि ज़हर बदन के अन्दर जाता है। साँप का ज़हर अक्सर दिमाग़ पर ही असर अंदाज़ हो जाता है, और बाज़ जानवरों के काटने से बदन फूल जाता है। जिससे

ज़हर अन्दर जाना यक़ीनी हो जाता है। मगर किसी दुनिया के फ़ेक़्ही आलिम ने उसको मफ़्सिदे सौम क़रार नहीं दिया। ये इंजेक्शन की वाज़ेह मिसाल है, बल्कि सुना गया है कि इंजेक्शन की ईजाद इसी तरह हुई है कि ज़हरीले जानवरों के काटने पर तजरबा करते करते इस नतीजा पर पहुंचा गया है कि दवा का फ़ौरी असर इस तरह बदन में पहुंचाया जा सकता है।

साँप बिच्छू और दूसरे ज़हरीले जानवरों के काटने को किसी ने मुफ़्सिदे सौम क़रार नहीं दिया है, इसकी वजह वही हो सकती है जो बदाए की इबारत से दो बातें साबित होती हैं: औवल ये कि किसी चीज़ का बदन के किसी हिस्सा में दाख़िल होना मुतलक़न रोज़ा को फ़ासिद नहीं करता, बल्कि उसके लिए दो शर्तें हैं।

(1) औवल ये कि वह चीज़ जो जौफ़े मेअ़दा या दिमाग़ में पहंच जाए।

(2) दूसरे ये कि ये पहुंचना भी मनफ़ज़े असली के रास्ता से हो, अगर कोई चीज़ मनफ़ज़े असली के अलावा किसी दूसरे कीमियाई तरीक़े से जौफ़े मेअ़दा या दमाग़ में पहुंचाई जाए वह भी मुफ़्सिदे रोज़ा नहीं। इंजेक्शन के ज़रीए बिला शुब्हा दवा या उसका असर पूरे बदन के हर हिस्से में पहुंच जाता है मगर ये पहुंचना मनफ़ज़े असली के रास्ते से नहीं, बल्कि रगों के रास्ता से, ये रास्ता मनफ़ज़े असली नहीं है। इसलिए गर्मी के मौसम में कोई शख़्स अगर ठंडे पानी से गुस्ल करता है तो प्यास कम हो जाती है। क्योंकि अजज़ा मसामात के रास्ता से अन्दर जाते हैं, मगर उसको किसी ने मुफ़्सिदे सौम नहीं क़रार

दिया, इससे ये शुब्हा भी दूर हो गया कि गुलूकोज़ वग़ैरा के इंजेक्शन ऐसे हैं कि उनके ज़रीए बदन को ग़िज़ा जैसी कूवत पहुंच जाती है। इसलिए उसका हुक्म ग़िज़ा का सा होना चाहिए था। जवाब वाज़ेह है कि कूवत पहुंचाना मुतलक़न मुफ़्सिद नहीं है, जैसे ठंडक पहुंचाना मुफ़्सिद नहीं, बल्कि मनफ़ज़े असली के रास्ता किसी चीज़ का जौफ़े मेअ़दा या दिमाग़ में पहुंचना मुफ़्सिद है, वह इंजेक्शन में नहीं पाया जाता, अगरचे कूवत उससे पहुंच जाए।

अलजवाबु सहीहुन

- अशरफ़ अली थानवी।
- बंदा असग़र हुसैन उफ़िया अन्हु मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद।
- बंदा मुहम्मद शफ़ीअ़ अफ़ल्लाहु अन्हु।

11 रबीउलऔवल 1350 हिजरी

हुसैन अहमद गुफ़िरलहू, मुदर्रिस दारुलउलूम, देवबंद

मुहम्मद एज़ाज़ अली गुफ़िरलहू मुदर्रिस दारुलउलूम, देवबंद

"अलाते जदीदा के शरई अहकाम"

बहवाला बदाए सनाए (जिल्द–2 सफ़्हा–93)

रोज़ा उस चीज़ से फ़ासिद होता है जो किसी मनफ़ज़ के ज़रीए मेअ़दा या दिमाग़ में पहुंच जाए। इंजेक्शन से दवा बज़रीए मनफ़ज़ नहीं जाती, बल्कि उरूक़ (रगों) और मसामात के ज़रीए मेअ़दा में पहुंचती है, लिहाज़ा रोज़ा नहीं टूटता।

(अहसनुलफ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–423)

बज़रीए इंजेक्शन जिस्म में दवा या ग़िज़ा पहुंचाने से

रोज़ा नहीं टूटता है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–39)

कुत्ते के काटे का इंजेक्शन

जिस इंजेक्शन के ज़रीए बिऔनिही दवा जौफ़े मेअ़दा में पहुंचा दी जाए, रोज़ा टूट जाता है। पागल कुत्ते के काटने के इंजेक्शन से रोज़ा नहीं टूटता है।

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी गुफ़िरलहू)

इंजेक्शन की हक़ीक़त

इंजेक्शन के मुतअल्लिक़ जहां तक तहक़ीक़ की गई है ये मालूम हुआ कि उससे बज़रीए मसामात दवा बदन में पहुंचाई जाती है, इसलिए नाक़िज़े रोज़ा नहीं, नाक़िज़े सौम वह है जो बज़रीए किसी मनफ़ज़ के बदन के अन्दर पहुंचे न बज़रीए मसामात और दाख़िले बदन में दवा का असर पहुंच जाने से फ़सादे रोज़ा लाज़िम नहीं आता है, जैसे गुस्ल का असर, ज़हरीले जानवर के काटने का असर, बदन के अन्दर सिरायत कर जाता है मगर बइत्तिफ़ाक़ मुफ़्सिदे रोज़ा नहीं, इसी तरह इंजेक्शन भी मुफ़्सिदे रोज़ा नहीं।

नोटः इस मस्अला की तहक़ीक़ अहक़र के रिसाला "मक़ालातुलमुफ़ीदा फ़िलआलतिल जदीदा" में मज़कूर है।

(बंदा मुहम्मद शफ़ी फ़तावा दारुलउलूम क़दीम जिल्द–3 सफ़्हा–68)

मरीज़ के रोज़े की क़ज़ा का हुक्म

अगर किसी शहर के लोगों ने रमज़ान का चाँद देख कर 29 रोज़े रखे और उनमें बाज़ मरीज़ थे, उन्होंने रोज़ा नहीं रखा, तो उन पर 30 दिन की क़ज़ा लाज़िम होगी, और अगर मरीज़ को शहर वालों का हाल मालूम न हुआ

तो वह 30 दिन के रोज़ों की क़ज़ा करेगा। ताकि यक़ीनन वाजिब अदा हो जाए। (फ़तावा आलमगीरी उर्दू पाकिस्तानी जिल्द–2 सफ़हा–11)

सेहत के बाद गुरूब तक खाना पीना

सवालः हिन्दा के रोज़ा की हालत में पेट में शदीद दर्द हो गया। दवा इस्तेमाल की, आराम हो गया, ता गुरूब तक रोज़ादारों की तरह रहना वाजिब है या मुस्तहब?

जवाबः वाजिब है, जिस तरह से मुसाफ़िर, हाएज़ा व निफ़ास वाली और मजनून वग़ैरा को, जब इफ़ाक़ा हो जाए शाम तक खाने पीने से रुके रहना और रोज़ादारों की तरह रहना वाजिब है।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़हा–432)

❑❑❑

बारहवाँ बाब

मुसाफ़िर के मसाइल

सफ़र की तारीफ़

सफ़र ख़्वाह जाइज़ हो, या नाजाइज़, या बेमशक़्क़त हो, जैसे रेल वग़ैरा का, या बामशक़्क़त जैसे पैदल का घोड़े वग़ैरा की सवारी पर, हर हाल में रोज़ा न रखना जाइज़ है। मगर बेमशक़्क़त सफ़र में मुस्तहब यही है कि रोज़ा रख ले। हाँ अगर चंद लोग उसके हमराह हों और वह रोज़ा न रखें और तन्हा उसके रोज़ा रखने में, खाने वग़ैरा के इंतिज़ाम में उन लोगों को तकलीफ़ हो तो फिर अगर मशक़्क़त भी न हो तब भी न रखे।

(इल्मुलफ़िक़्ह हिस्सा सोम सफ़्हा–35)

सफ़र में रोज़ा रखना दुरुस्त है, और सवाब है, अलबत्ता अगर न रखे तो रुख़्सत (इजाज़त) है, और सफ़र की मिक़्दार अड़तालीस मील होना ज़रूरी है।

(क़दीम फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–73)

क्या रोज़े में भी क़स्र है?

सवालः जिस तरह नमाज़ में क़स्र है क्या उसी तरह रोज़े में भी क़स्र है, या नहीं? यानी अगर सफ़र में पूरी नमाज़ पढ़े, तो गुनहगार होगा, क्योंकि यह कुफ़राने नेमत है, क्या ये हुक्म रोज़ों से मुतअल्लिक़ भी है?

जवाबः रोज़ा के लिए सफ़र में ये हुक्म है कि बाद में क़ज़ा उन रोज़ों की करे जो सफ़र में न रखे हों।

"فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَّرِيْضًا اَوْعَلٰى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِّنْ اَيَّامٍ اُخَر"

(सूरए बक़रह पारा–2 रुकूअ़–6)

नमाज़ के लिए हदीस शरीफ़ में ये हुक्म आ गया है कि इस तख़फ़ीफ़ (कमी) को क़बूल करो, लिहाज़ा इमाम आज़म (रह.) इस अम्र को वुजूब के लिए लेते हैं, कि क़स्र करना नमाज़ में ज़रूरी फ़रमाते हैं। रोज़ा के लिए नस्से कुरआनी से एहतियात साबित होता है, कि चाहे रखो चाहो तो फिर क़ज़ा कर लो, अगर सफ़र सुहूलत का है और रोज़ा में कुछ दुश्वारी नहीं है तो रोज़ा रखना बेहतर है, जैसा कि फ़रमाया गया है– "وَاَنْ تصوموا خيرالكم"

(सूरए बक़रह रुकूअ़–6)

पस मालूम हुआ कि सफ़र में बहालते अदमे मशक़्क़त रोज़ा न रखने की फ़ज़ीलत और ख़ैरीयत ख़ुद अल्लाह तआ़ला ने फ़रमा दी है। और नमाज़ में क़स्र न करने में कुफ़राने नेअ़मत, आंहज़तर (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि वह भी हुक्म ख़ुदा तआ़ला ही का है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–472, बहवाला रद्दुलमुहतार फ़स्लुन फ़िलअ़वारिज़ जिल्द–2 सफ़्हा–160)

हालते तरद्दुद में रोज़ा

सवालः जो लोग तरद्दुद में क़स्र नमाज़ पढ़ते हैं उनको रमज़ान शरीफ़ में रोज़ा क़ज़ा करना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः मुसाफ़िर को जब तक वह किसी जगह पन्द्रह दिन क़याम की नीयत न करे और तरद्दुद में हो, नमाज़ क़स्र करना चाहिए, और रोज़ा को भी इफ़्तार कर सकता

है, बाद में क़ज़ा करे। ग़रज़ जिस हालत में नमाज़ क़स्र जाइज़ है रोज़ा का इफ़्तार करना भी दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–475, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–158, फ़स्लुन फ़िलअ़वारिज़)

एक दिन का सफ़र

सवालः एक रोज़ के सफ़र में भी क़ज़ा कर सकता है, या तीन ही दिन के सफ़र में क़ज़ा कर सकता है?

जवाबः 48 मील का सफ़र हो जब ही रोज़ा इफ़्तार करना दुरुस्त है, इससे कम के सफ़र में रोज़ा इफ़्तार करना दुरुस्त नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–473, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–158, फ़स्लुन फ़िलअ़वारिज़)

पन्द्रह दिन की नीयत का हुक्म

अगर रास्ता में पन्द्रह दिन रहने की नीयत से ठहर गए, तो अब रोज़ा छोड़ना दुरुस्त नहीं है, क्योंकि शरअ़ की नज़र में अब वह मुसाफ़िर नहीं है, अलबत्ता पन्द्रह दिन से कम ठहरने की नीयत की हो तो रोज़ा न रखना दुरुस्त है।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा सोम सफ़्हा–19, बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–168)

सुब्ह सादिक़ के बाद सफ़र करना

सवालः ज़ैद का दिन में सफ़र में जाने का इरादा है तो अगर वह सहरी खा ले मगर रोज़ा की नीयत न करे तो जाइज़ है या नहीं?

जवाबः जो शख़्स सुब्ह के वक़्त सफ़र में न हो, उसके लिए रोज़ा छोड़ना जाइज़ नहीं, अगरचे दिन में सफ़र का

पुख़्ता इरादा हो। (अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–437)

दोपहर से पहले ही घर पहुंच जाना

सफ़र में रोज़ा न रखने का इरादा था, लेकिन दोपहर से एक घंटा पहले ही (ज़वाल) से अपने घर पहुंच जाए, या ऐसे वक़्त में पन्द्रह दिन की नीयत से कहीं रहना पड़े और अब तक कुछ खाया पिया नहीं है, तो अब रोज़ा की नीयत कर ले। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा सोम सफ़्हा–19, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–203)

अगर कोई मुक़ीम रमज़ान में रोज़ा की नीयत के बाद सफ़र करे तो उस पर उस दिन का रोज़ा रखना ज़रूरी है, लेकिन अगर उस रोज़ा को फ़ासिद कर दे तो कफ़्फ़ारा न होगा। इसी तरह कोई मुसाफ़िर निस्फ़ नहार (दोपहर) से पहले मुक़ीम हो जाए और अभी तक कोई फ़ेल रोज़ा के ख़िलाफ़ नहीं हुआ, मसलन खाने पीने वग़ैरा का उससे सादिर न हुआ हो, तो भी रोज़ा रखना ज़रूरी है। लेकिन अगर फ़ासिद कर दे तो कफ़्फ़ारा न देना पड़ेगा।

(इल्मुलफ़िक़्ह हिस्सा सोम सफ़्हा–35)

रोज़ादार मुसाफ़िर का रोज़ा फ़ासिद कर देना

अगर कोई मुक़ीम रोज़ा की नीयत करने के बाद मसाफ़िर बन जाए और थोड़ी दूर जा कर किसी भूली हुई चीज़ को लेने के लिए अपने घर वापस आए और वहां पहुंच कर रोज़ा को फ़ासिद कर दे, तो उसको कफ़्फ़ारा देना होगा, इसलिए कि उस पर उस वक़्त मुसाफ़िर का इतलाक़ न था। गो वह ठहरने की नीयत से न गया हो, और न वहां ठहरा। (इल्मुलफ़िक़्ह हिस्सा सोम सफ़्हा–36)

रोज़े से बच कर सफ़र करना

सवालः अगर रोज़ा से बच कर हीलए सफ़र या मरज़ वग़ैरा कर के रोज़ा क़ज़ा करे, तो कैसा है?

जवाबः मुसाफ़िरे शरई और मरीज़ को इफ़्तार करना दुरुस्त है, और हीला करना मज़मूम और क़बीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–496, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–158 फ़स्लुन फ़िलअवारिज़)

मुसाफ़िर का रोज़ा रख कर तोड़ देना

सवालः ज़ैद ने सफ़र में रोज़ा की नीयत की, मगर बाद में नीयत बदल दी, और खा पी लिया, तो क्या गुनहगार होगा?

जवाबः कफ़्फ़ारा नहीं, अलबत्ता रोज़ा रखने के बाद सफ़र शुरू करना वुजूबे कफ़्फ़ारा में इख़्तिलाफ़ है और राजेह ये है कि इस सूरत में भी कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–448, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–132)

क्या सफ़र में आँहज़रत (स.अ.व.) ने रोज़ा रख कर तोड़ दिया था?

सवालः हुज़ूर (स.अ.व.) ने सफ़र की हालत में रोज़ा तोड़ा था और अपने रुफ़क़ा (साहाबा रज़ि.) से इफ़्तार कराया था, क्या ये बात मुस्तनद है?

जवाबः हाँ सफ़र की हालत में हुज़ूर (स.अ.व.) और सहाबए किराम (रज़ि.) के रोज़ा के इफ़्तार का वाक़िआ सही और मुस्तनद है। हज़रत इब्न अब्बास (रज़ि.) का ब्यान है कि आँहज़रत (स.अ.व.) रमज़ान शरीफ़ में मदीना से मक्का मुकर्रमा के लिए रवाना हुए तो रास्ता में मक़ामे

असक़ान पर पानी मंगवाया और सहाबा (रज़ि.) को बता कर इफ़्तार फ़रमाया। फिर मक्का पहुंचने तक रोज़ा न रखा।

ये अपनी मर्ज़ी पर है, जो चाहे रोज़ा रखे और जो चाहे इफ़्तार करे। दूसरी रिवायतों में ये भी तसरीह है कि रोज़ा की वजह से सहाबए किराम (रज़ि.) की हालत दिगर गूँ थी। इसलिए आप (स.अ.व.) ने ऐसा किया। हज़रत जाबिर (रज़ि.) फ़रमाते हैं कि बाज़ अस्हाब ने इफ़्तार नहीं किया था। जब आँहुज़ूर (स.अ.व.) को ख़बर की गई तो आप (स.अ.व.) ने (बअंदाज़े ख़फ़गी) फ़रमाया कि ये नाफ़रमान हैं, क्योंकि आप (स.अ.व.) ने रुख़्सत पर अमल किया औ आप (स.अ.व.) की ख़्वाहिश थी कि सब रुख़्सत पर अमल करें। ख़ुसूसन इसलिए कि आँहज़रत (स.अ.व.) फ़तहे मक्का के लिए तशरीफ़ ले जा रहे थे। ये सफ़रे जिहाद था, बहरहाल कुछ साहबान ने अमल नहीं किया तो आप (स.अ.व.) को नागवारी हुई। एक रिवायत में है कि एक सफ़र में एक सहाबी की हालत बहुत ख़राब हो गई, सहाबा जमा हो कर उसकी ख़िदमत करने लगे, उन पर साया का इंतिज़ाम किया गया, ये देख कर आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया– "सफ़र में (जान पर जुल्म कर के) रोज़ा ही कोई नेकी नहीं है।"

इन अहादीस की रौशनी में फ़ुक़हाए किराम (रह.) फ़रमाते हैं कि सफ़र की हालत में रोज़ा रखना ज़रूरी और वाजिब नहीं है। अगर रखा तो अज़ीमत पर अमल किया, और न रखा तो रुख़्सत पर अमल हुआ।

अगर रोज़ा रखने से तबीअत ख़राब न होने, या तकलीफ़ पहुंचने का डर न हो, तो रख लेना बेहतर है।

अगर उसको या उसके साथियों को नुक़्सान या तकलीफ़ पहुंचने का अंदेशा हो तो रोज़ा छोड़ देना बेहतर है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–36, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–160 व मुस्लिम शरीफ़ जिल्द–2 सफ़्हा–356)

सफ़र में लू की वजह से रोज़ा तोड़ देना

सवालः अगर किसी शख़्स को माहे रमज़ान में ऐसा सफ़र पेश आए जिससे वह शरअ़न मुसाफ़िर नहीं हो सकता, इस वजह से रोज़ा की हालत में सफ़र करे, और दोपहर को सख़्त धूप और लू की वजह से बेबरदाश्त हो कर रोज़ा तोड़ दे तो उस पर क़ज़ा है या कफ़्फ़ारा भी लाज़िम आएगा?

जवाबः इस सूरत में उस शख़्स पर कफ़्फ़ारा लाज़िम न होगा, सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम होगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–444, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–158 फ़स्लुन फ़िलअवारिज़)

प्यास की शिद्दत या सफ़र की वजह से रोज़ा तोड़ देना

सवालः रोज़ादार शदीद प्यास की वजह से रोज़ा तोड़ दे या सफ़र में रोज़ा तोड़ दे, तो उसके लिए क्या हुक्म है?

जवाबः प्यास अगर ऐसी शदीद है कि उसमें मर जाने का अंदेशा है, या अक़्ल के जाते रहने का ख़ौफ़ है, तो इस हाल में क़ज़ा लाज़िम है। इसी तरह सफ़र में बरोज़े सफ़र रोज़ा तोड़ना न चाहिए, लेकिन अगर तोड़ दिया तो क़ज़ा लाज़िम है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–440, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–158)

मुसाफ़िर का फ़िदया देना

सवालः मुसाफ़िर ने सफ़र में चंद रोज़े नहीं रखे और फ़िदया दे दिया तो क्या ये दुरुस्त है?

जवाबः उन रोज़ों की बाद में क़ज़ा करना ज़रूरी है, फ़िदया काफ़ी नहीं है, जैसा कि आयते कुरआनी में है। "فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَرِيْضًا اَوْعَلٰى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِّنْ اَيَّامٍ اُخَرَ" से साबित है। (पारा–2 सूरए बक़रह रुकूअ़–6, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–463)

सफ़र में फ़ौत शुदा रोज़ों का हुक्म

सवालः सफ़र की हालत में फ़ौत शुदा रोज़ों की क़ज़ा ज़रूरी है या नहीं?

जवाबः हाँ क़ज़ा का वक़्त मिले तो क़ज़ा रखना ज़रूरी है, और न रखे तो फ़िदया देने की वसीयत लाज़िम है। बशर्ते कि माल छोड़ गया हो, और सफ़र की हालत में मर गया हो या मुक़ीम हो कर मरा लेकिना क़ज़ा का वक़्त नहीं मिला तो फ़िदया देने की वसीयत लाज़िम नहीं, अगर चंद रोज़े क़ज़ा रखने का वक़्त मिला तो उतने रोज़ों की क़ज़ा लाज़िम है, अगर क़ज़ा न कर सका तो उन दिनों का फ़िदया देने की वसीयत ज़रूरी है। मसलन सफ़र की हालत में दस दिन रोज़े फ़ौत हो गए और पाँच रोज़ा रखने का वक़्त मिला, लेकिन क़ज़ा नहीं की, तो उन पाँच रोज़ों के फ़िदया की वसीयत लाज़िम है, इससे ज़ाएद की नहीं। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–34, बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–160)

अगर मुसाफ़िर सफ़र से लौटने के बाद, या मरीज़ सेहत यांब होने के बाद इतना वक़्त न पाये जिसमें क़ज़ा

शुदा रोज़े अदा करे, तो उसके ज़िम्मा क़ज़ा लाज़िम नहीं, सफ़र से लौटने या बीमारी से सेहत याब होने के बाद जितने दिन भी मिलें उतने ही की क़ज़ा लाज़िम होगी।

(जवाहिरुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–381)

छूटे हुए रोज़े रखने का मौक़ा नहीं मिला

सवालः मरज़ या हैज़ व निफ़ास की वजह से रोज़े छूट गए, क़ज़ा रखने से पहले ही इंतिक़ाल हो गया तो क्या गुनाह होगा?

जवाबः अगर क़ज़ा करने का वक़्त ही नहीं मिला, तो ये रोज़े मआफ़ हैं, और अगर हालते इक़ामत, सेहत और तहारत में क़ज़ा रखने का मौक़ा मिल गया हो, तो तरका से फ़िदया अदा करने की वसीयत करना वाजिब है।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–448, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–125)

रोज़ेदार मुसाफ़िर का सफ़र में इंतिक़ाल हो जाना

सवालः एक शख़्स रमज़ान शरीफ़ में मुसाफ़िर हुआ, और वह रोज़े से नहीं था, और वह इंतिक़ाल कर गया, उसके रोज़े का क्या हुक्म है?

जवाबः उसके ज़िम्मा रोज़ा की क़ज़ा लाज़िम नहीं हुई और फ़िदया या फ़िदया की वसीयत भी लाज़िम नहीं हुई। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–432, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–160)

रमज़ान के रोज़े अगर किसी शरई मजबूरी की वजह से छूटे थे और अभी वह मजबूरी ख़त्म नहीं हुई थी कि दुनिया से कूच (इंतिक़ाल) कर गया, तो उस पर कोई शरई मुतालबा नहीं है। क्योंकि उसको अदा करने का

मौक़ा ही नहीं मिला था। हाँ अगर मौक़ा मिल गया था मगर उसने सुस्ती कर के रोज़ों की क़ज़ा नहीं की, तो ये फ़रीज़ा उसके ज़िम्मा वाजिब रहा, ख़ुदा के यहां पकड़ होगी। और अगर सफ़र या मरज़ की वजह से दस रोज़े रह गए थे और फिर उस सफ़र या मरज़ से फ़ारिग़ हो कर पाँच दिन ज़िन्दा रहा और रोज़े शुरू नहीं किए थे, तो पाँच ही दिन क़ज़ा उसके ज़िम्मा वाजिब रही, क्योंकि उसको इतना ही वक़्त मिला।

अब उसके रिश्तादारों और मुतअल्लिक़ीन को चाहिए कि रोज़ों का फ़िदया दे दें। उसके ज़िम्मा से रोज़े अदा हो जाएंगे। और अगर वह शख़्स माल छोड़ कर मरा है और फ़िदया देने की वसीयत भी कर गया, तो वारिसों के ऊपर फ़िदया देना वाजिब और ज़रूरी है। और अगर वसीयत की, लेकिन माल नहीं छोड़ा, या इतना कम है कि एक तिहाई हिस्से में उसके रोज़ों का बदला पूरा नहीं होता, या माल तो काफ़ी छोड़ा मगर वसीयत नहीं की, तो इन सब सूरतों में वारिसों पर उसके रोज़ों का फ़िदया देना वाजिब नहीं है।

मगर मरने वाले के साथ हमदर्दी और तअल्लुक़ इसमें ही है कि उसकी आख़िरत की भलाई की नीयत से दे देना अच्छा है। मरने वाले की तरफ़ से उसके रिश्तादार या मिलने वाले फ़िदया तो दे सकते हैं, लेकिन उसकी तरफ़ से नमाज़ या रोज़ा की क़ज़ा नहीं कर सकते हैं।

(मुरत्तिब मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

❑❑❑

तेरहवाँ बाब

मुतफ़र्रिक़ मसाइल

रमज़ान में एलानिया खाना पीना

सवालः रमज़ानुलमुबारक में जो बिला उज़्र रोज़ा न रखे और एलानिया तौर पर खाए, पीए तो क्या हुक्म है?

जवाबः ऐसा शख़्स फ़ासिक़ और इस्लामी शिआ़र की तौहीन करने वाला है। ख़लीफ़ा हो तो ऐसे बे–बाक और बे–हया को क़त्ल की सज़ा दे। दुर्रेमुख़्तार में है कि अगर कोई बिला उज़्रे शरई रोज़ा न रखे और बिल क़स्द एलानिया खाए पीए, तो ख़लीफ़ए इस्लाम के हुक्म से क़त्ल कर दिया जाएगा। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–104, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–151)

गर्मियों में दिन बड़ा होने की वजह से रोज़े का फ़िदया

सवालः मौसमे गर्मा में जबकि अट्ठारह घंटे रोज़ा रखना पड़े, तो क्या रोज़े के बदले कफ़्फ़ारए अनाज दिया जा सकता है?

जवाबः रोज़ा ही रखे, फ़िदया देना बिलाउज़्र के सही नहीं है। अगर किसी बीमारी वग़ैरा की वजह से रमज़ान शरीफ़ में रोज़ा न रखा, तो क़ज़ा उसके बाद में करे, फ़िदया उसको भी देना जाइज़ नहीं। फ़िदया ख़ास है शैख़ फ़ानी के लिए, शैख़ फ़ानी वह बूढ़ा है जो किसी

तरह रोज़ा न रख सके। (फ़तावा दारुलउलूम, क़दीम अज़ीज़ुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–72)

शैख़ फ़ानी उस मर्द और औरत को कहते हैं जो ज़िन्दगी के आख़िरी स्टेज पर पहुंच चुके हों, अदाएगीये फ़र्ज़ से क़तअन मजबूर और आजिज़ हों और जिस्मानी ताक़त, कूवत वग़ैरा रोज़ बरोज़ घटती चली जा रही हो, यहाँ तक कि ज़ोअ़फ़ व तवानाई के सबब उन्हें ये क़तअन उम्मीद न हो कि आइंदा कभी रोज़ा रख सकेंगे।

(मज़ाहिरे हक़ जदीद जिल्द–2 क़िस्त–21)

क्या सर्दियों में रोज़ा रखने का सवाब कम मिलता है?

सवालः जिन लोगों के रोज़े माहे रमज़ान में किसी उज़्र के सबब क़ज़ा हो जाते हैं उनको मौसमे सरमा में अदा करने से क्या सवाब में कमी आती हैं?

जवाबः सर्दियों के दिनों में रोज़ा की क़ज़ा करने से सवाब में कुछ कमी नहीं होती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–499)

बे-नमाज़ी का रोज़ा

सवालः जो शख़्स रमज़ान शरीफ़ में रोज़ा रखता हो, और नमाज़ न पढ़ता हो, उसका रोज़ा होता है या नहीं?

जवाबः रोज़ा हो जाता है, नमाज़ छोड़ने का गुनाह रहता है। नमाज़ की क़ज़ा उसके ज़िम्मा फ़र्ज़ है। (हाशिया में है) दोनों अलग अलग हैं, एक दूसरे पर मौकूफ़ नहीं हैं। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–499)

जाँकनी (नज़अ़) की हालत में रोज़ा

सवालः अगर कोई रोज़ादार जाँकनी के आलम में हो तो उसको रोज़ा इफ़्तार करा कर शरबत देना चाहिए या

नहीं?

जवाबः ऐसी हालत में रोज़ा इफ़्तार करा देना चाहिए और शरबत वग़ैरा देना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–470)

बग़ैर इफ़्तार किये इंतिक़ाल हो जाने पर नमाज़े जनाज़ा का हुक्म

सवालः एक शख़्स रोज़ा की हालत में प्यास व भूक की शिद्दत से मर गया है, लेकिन उसने शरीअ़त का हुक्म नहीं माना, इफ़्तार नहीं किया। उसकी नमाज़े जनाज़ा पढ़ी जाए या नहीं, क्योंकि उसने शरीअ़त की ख़िलाफ़ वरज़ी की है?

जवाबः इस सूरत में अगर वह शख़्स रोज़ा की हालत में फ़ौत हो गया तो माज़ूर है, यानी इंदल्लाह अज्र व सवाब पाएगा, गुनहगार नहीं हुआ। पस उसकी नमाज़ के जवाज़ में कुछ शब्हा नहीं हो सकता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–471, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–158)

तवील औक़ात वाले एलाक़े में रोज़ा

रोज़ा के औक़ात के सिलसिले में इस बात की कुरआन व हदीस में तसरीह है कि तुलूए फ़ज्र से उसका आग़ाज़ और ग़ुरूबे आफ़ताब पर उसका इख़्तिताम होता है। नीज़ इस पर उम्मत का इजमाअ़ भी है, बाज़ जुज़्वी बातों पर थोड़ा सा इख़्तिलाफ़ है, मगर इस हद तक सब का इत्तिफ़ाक़ है। इसी लिए तो ये ज़ाहिर है कि रोज़ा के अस्ल औक़ात ये ही हैं।

जुग़राफ़ियाई और मौसमी हालात के लिहाज़ से उनमें

कमी व बेशी हो सकती है और होती रहती है। ख़ुद हिन्दुस्तान में भी ऐसा तफ़ावुत होता रहता है। अब अगर कहीं औक़ात का थोड़ा बहुत फ़र्क़ हो, दिन बारह के बजाए सोला या सत्तरा घंटे का हो जाए तो ज़ाहिर है कि रोज़ा का यही हुक्म रहेगा, और अगर ग़ैर मामूली फ़र्क़ हो जाए मसलन बीस या बाईस घंटों का दिन हो जाए और दो चार घंटों की रात रह जाए तो भी कुरआन व हदीस के उमूमी अहकाम का तक़ाज़ा है कि रोज़ा तुलूए फ़ज्र से गुरूबे आफ़ताब तक हो, फ़तवा इसी पर है।

अलबत्ता बसाऔक़ात इसकी वजह से ग़ैर मामूली मशक़्क़त पैदा हो जाएगी और उम्र रसीदा और कमज़ोर आदमियों के लिए रोज़ा रखना दुश्वार हो जाएगा। उनको ये ख़ुसूसी सहूलत दी जा सकती है कि वह रमज़ानुलमुबारक में रोज़ा न रखें, आइंदा जब मौसम हल्का और क़ाबिले तहम्मुल हो जाए और दिन के औक़ात निस्बतन कम हो जाऐं तो क़ज़ा कर लें, जैसा कि फ़ुक़हा ने भूक व प्यास की हलाकतख़ेज़ शिद्दत को भी रोज़ा तोड़ने के लिए उज़्र क़रार दिया है। फ़तावा आलमगीरी में उसकी तसरीह जिल्द–1 सफ़्हा–106 पर मौजूद है। लेकिन जहाँ पर एक तवील अरसा का दिन और फिर उसी तरह रात का सिलसिला रहता है वहां जिस तरह नमाज़ के औक़ात का अंदाज़ा से तअैयुन किया जाएगा उसी तरह माहे रमज़ान की आमद और रोज़ा के औक़ात का भी। ऐसे मक़ाम के बाशिंदों को उन मक़ामात के मुताबिक़ अमल करना चाहिए। जो उनसे क़रीब हैं और वहाँ मामूल के मुताबिक़ दिन रात की आमदोरफ़्त का सिलसिला है।

(जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा–94)

हवाई सफ़र में दिन बहुत छोटा हो जाने पर रोज़े का हुक्म

सवालः ज़ैद हवाई जहाज़ के ज़रीए मग़रिब की सिम्त जा रहा है, सूरज गुरूब हो रहा है, तो नमाज़ किस तरह अदा करे, और रोज़ा किस वक़्त इफ़्तार करे? और उसके बरअक्स मशरिक़ की तरफ़ जा रहा है तो उसका दिन बिल्कुल छोटा रहेगा। उसकी नमाज़ और रोज़े के मुतअल्लिक़ क्या हुक्म है?

जवाबः रद्दुलमुहतार सफ़्हा–339 में हदीस दज्जाल के तहत जो मसाइल दर्ज हैं उससे साबित हुआ कि मग़रिब की तरफ़ जाने वाला शख़्स अगर चौबीस घंटा में पाँच वक़्त नमाज़ें उनके औक़ात में अदा कर सकता हो तो हर नमाज़ उसका वक़्त दाख़िल होने पर अदा करे, और अगर उसका दिन इतना तवील हो गया कि चौबीस घंटे में पाँच नमाज़ों का वक़्त नहीं आया, तो आम अैयाम में औक़ाते नमाज़ के फ़स्ल का अंदाज़ा कर के उसके मुताबिक़ नमाज़ें पढ़े, और यही हुक्म रोज़ा का है, कि अगर तुलूए फ़ज्र से लेकर चौबीस घंटे के अन्दर गुरूब हो जाए तो गुरूब के बाद इफ़्तार करे। जिन मुमालिक में मुस्तक़िल तौर पर दिन इतने तवील हों कि चौबीस घंटे में सिर्फ़ बक़द्र किफ़ायत खाने पीने का वक़्त मिलता हो, उनमें सूरज गुरूब होने से पहले इफ़्तार की इजाज़त नहीं, तो आरज़ी तौर पर शाज़ोनादिर एक दिन तवील हो जाने से बतरीक़े औला उसकी इजाज़त न होगी, अलबत्ता अगर चौबीस घंटे के अन्दर गुरूब न हो, तो चौबीस घंटे पूरे होने से इतना वक़्त पहले कि उसमें बक़द्रे ज़रूरत खा पी

सकता है तो इफ़्तार कर ले, अगर इब्तिदाए सुब्ह सादिक़ के वक़्त भी सफ़र में था तो उस पर रोज़ा फ़र्ज़ नहीं, बाद में क़ज़ा रखे, और अगर उस वक़्त मुसाफ़िर न था तो रोज़ा रखना फ़र्ज़ है। और अगर इतने तवील रोज़ा का तहम्मुल न हो तो सफ़र नाजाइज़ है।

जो शख़्स जानिबे मशरिक़ जा रहा है, नमाज़ के औक़ात उस पर गुज़रते रहेंगे, उन औक़ात में नमाज़ अदा करेगा और रोज़ा गुरूबे आफ़ताब के बाद इफ़्तार करे, क्योंकि सौम (रोज़ा) के माना हैं तुलूए फ़ज्र से गुरूबे शम्स (सूरज) तक इमसाक (रुकना) का।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–71, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–88)

सफ़र की वजह से रोज़ों का कम या ज़्यादा हो जाना

सवालः एक शख़्स जद्दा में काम करता है, वहां उसने रमज़ान के रोज़े रखने शुरू किए (वहाँ पर रमज़ान का रोज़ा जुमा को हुआ और हमारे यहां हिन्द में सनीचर को पहला रोज़ा हुआ) फिर वह शख़्स यहां आ गया और यहां पर उन्तीस का चाँद नहीं हुआ और उस शख़्स के तीस रोज़े पूरे हो गए अब वह यहां वालों के साथ क्या इक्तीसवाँ रोज़ा रखे?

जवाबः ये शख़्स इतवार को यहां वालों के साथ रोज़ा रखे, चाहे इक्तीस रोज़े हो जाऐं। जिस तरह किसी ने तन्हा चाँद देखा और उसकी गवाही क़बूल न की गई तो उसको अपनी रूयत के एतेबार से रमज़ान का रोज़ा रखना चाहिए, और इत्तिफ़ाक़ से तीस रोज़े पूरे करने के बाद चाँद नज़र न आए तो उसको तन्हा इफ़्तार करना

जाइज़ नहीं, बल्कि उसके लिए हुक्म ये है कि वह लोगों के साथ रोज़ा रखे और सब के साथ ईद करे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–181, बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–123)

रोज़ा रख कर उमरे के लिए गया तो वहाँ रोज़े की तारीख़ों में फ़र्क़ था

सवालः एक शख़्स ने बमबई में रोज़े रखने शुरू किए और फिर वह शख़्स रमज़ान में उमरा करने के लिए मक्का चला गया, वहाँ वाले एक दो दिन आगे थे, अब वह शख़्स वहां वालों के साथ ईद मनाए, या क्या हुक्म है?

जवाबः ये शख़्स वहां वालों के साथ ईद कर ले बाद में बाक़ी मांदा रोज़ों की क़ज़ा कर ले, यानी अगर सत्ताईस रोज़े हुए तो दो रोज़े रखे और अगर 28 हुए तो एक रोज़ा रखे कि महीना उन्तीस दिन से कम का नहीं होता है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–181)

रोज़े की हालत में लिफ़ाफ़े का गोंद ज़बान से तर कर के चिपकाना

सवालः रोज़ा की हालत में ज़बान से लिफ़ाफ़ा का गोंद लगा कर चस्पाँ (बंद) करना बिला कराहत दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः अगर ज़बान से लिफ़ाफ़ा का गोंद चाट कर थूक निगल गया तो रोज़ा टूट जाएगा, और अगर चाटने के बाद थूक दिया तो उससे रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा। मगर ऐसा करना मकरूहे तंज़ीही है।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–443, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–122)

सरजरी और आज़ा की तब्दीली

रोज़ा को फ़ासिद करने वाली दरअस्ल वह चीज़ें हैं जो दिमाग़ या बत्न (पेट) के जौफ़ तक पहुंच जाऐं। इससे ये बात तो वाज़ेह होगई कि ऐसे ऑपरेशन जो जिस्म के दूसरे हिस्से या हाथ पाँव वग़ैरा के हों, उनका तो रोज़ा पर कोई असर नहीं पड़ेगा। इसी तरह कान, शर्मगाह, सुरीन, नाक वग़ैरा के आज़ा जिनसे दिमाग़ या पेट की जानिब मनफ़ज़ (असली राह) नहीं हैं। उनका भी सिर्फ़ ऑपरेशन मुफ़्सिदे सौम न होगा। यानी रोज़ा को नुक़्सान न होगा, और न आज़ा की तब्दीली, इसलिए कि मुफ़सिदे सौम तो किसी ऐसी चीज़ का दाख़िल करना है जो बदन को दुरुस्त करे और दिमाग़ और पेट तक पहुंच जाए, या ग़ालिब इम्कान उसके पहुंचने का हो, यहां ये मसनूई आज़ा अपनी जगह लगे रह जाएंगे। हाँ अगर ऑपरेशन के साथ कोई दवा डाली जाए, तो रोज़ा टूट जाएगा। इनके अलावा अगर ख़ुद पेट या दिमाग़ का ऑपरेशन इस तरह हो कि कुछ काट कर निकाल दिया जाए और कोई नई चीज़ दाख़िल न की जाए तो रोज़ा नहीं टूटेगा। और अगर अन्दर कोई दवाई लगाई या मसनूई आज़ा लगाया तो रोज़ा टूट जाएगा। इसकी नज़ीर फ़ुक़हा का ये जुज़ईया है कि अगर नेज़ा इस ज़ोर से मारा कि जौफ़े बत्न तक पहुंच गया फिर उसको निकाल लिया तो रोज़ा नहीं टूटेगा, और अगर पेट के अन्दर रह गया तो बाज़ लोगों की राए है कि रोज़ा नहीं टूटेगा। और बाज़ हज़रात इसके क़ाएल हैं कि टूट जाएगा। यहाँ गो कि सही तर क़ौल रोज़ा का न टूटना है।

मगर इस आजिज़ के ख़्याल में सरजरी इलाज की मज़कूरा सूरत में सही रोज़ा का टूट जाना है, इसलिए कि नेज़ा मारने का मक़्सद जिस्म को नुक़्सान पहुंचाना है और इस सरजरी का मन्शा जिस्म की इस्लाह और दुरुस्तगी है। और अगर ये सूरत हो कि मेअ़दा के ऑपरेशन में कोई उज़्व, सरजरी के दौरान बाहर निकाला जाए फिर अपनी जगह फ़िट कर दिया जाए तो भी रोज़ा टूट जाएगा। इसकी नज़ीर क़ैय है, कि अगर मुंह से बाहर आ जाने के बाद उसे खा लिया जाए, या लुआ़बे देहन मुंह से निकाल कर हाथ में जमा किया जाए और फिर खा लिया जाए तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। इसी तरह ये उज़्व जब बाहर ले आया गया और फिर उसको जौफ़े बत्न में फ़िट कर दिया गया तो रोज़ा टूट जाएगा।

(जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा–99)

सोने की हालत में मसोढ़ों से ख़ून मुंह में चला जाना

सवालः मेरे मसोढ़ों से ख़ून निकलता है। आज कल रोज़ा में दोपहर के बाद ख़ून बहुत जारी रहता है, ये कैफ़ियत ख़ास तौर पर सोने की हालत में होती है। ख़ून थूक पर ग़ालिब रहता है। जागने की सूरत में तो एहतियात करता हूँ, लेकिन सोने की हालत में थूक हलक़ से नीचे उतर जाता है, अब तक रमज़ान में ऐसा दो मरतबा हुआ है, मेरा रोज़ा हुआ या क़ज़ा रखना होगा? आज कल नींद रात को पूरी नहीं होती, अगर दिन में न सोऊँ तो रात को इबादत में ख़लल होगा और नौकरी करना भी मुहाल होगा। मेरे लिए क्या हुक्म है?

जवाबः ख़ून अगर सिर्फ़ हलक़ में गया मगर पेट में

नहीं पहुंचा तो रोज़ा नहीं टूटा और अगर ख़ून मग़लूब हो यानी थूक का रंग सुर्ख़ के बजाए ज़र्द हो तो पेट में जाने से भी रोज़ा नहीं टूटता, अलबत्ता ख़ून मग़लूब होने के बावजूद हलक़ में उसका मज़ा महसूस हो तो पेट में जाने से रोज़ा टूट जाएगा। इसी तरह ख़ून ग़ालिब हो यानी थूक सुर्ख़ हो तो पेट में जाने से रोज़ा टूट जाएगा अगरचे मज़ा महसूस न हो।

जिन सूरतों में रोज़ा टूट जाता है उनमें अगर सोने की हालत में या और कोई उज़्र से ख़ून बिलाइख़्तियार पेट में उतर जाता हो तो रोज़ा न टूटने के क़ौल की गुंजाइश मालूम होती है। शामी में इसी तरह है। बेहतर ये है कि अगर मुस्तक़बिल क़रीब में सेहत की तवक़्क़ो हो तो रोज़ा न रखें, बाद में क़ज़ा करें, और अगर रोज़ा की हालत में ग़ैर इख़्तियारी तौर पर ख़ून पेट में चला गया तो सेहत के बाद एहतियातन इस रोज़े की क़ज़ा करें।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–438)

ऐसा तंदुरुस्त जिस में रोज़ा रखने की ताक़त नहीं

सवालः एक शख़्स देखने में जवान और तंदुरुस्त है और किसी क़िस्म की अलामते ज़ाहिरा उसको नहीं है मगर कमज़ोर बहुत है, और रमज़ान का रोज़ा उससे नहीं रखा जाता, रोज़ा रखने से उसको बहुत कमज़ोरी होती है, अगर वह रोज़ा छोड़ दे तो उसका क्या हुक्म है?

जवाबः मस्अला ये है कि शैख़ फ़ानी को रोज़ा न रखना और फ़िदया दे देना दुरुस्त है। शैख़ फ़ानी के ये माना हैं कि उसकी क़ूवत फ़ना हो गई हो, और रोज़ा की ताक़त न हो। पस अगर वह शख़्स ख़िलक़तन ऐसा ज़ईफ़

व कमज़ोर है कि किसी तरह रोज़ा नहीं रख सकता है। उसको दुरुस्त है कि रोज़ा न रखे और फ़िदया दे दे, हाशिया फ़तावा दारुलउलूम में हैः लेकिन अगर वह ऐसा नहीं है बल्कि आरज़ी तौर पर मरज़ की वजह से ऐसा है तो इफ़्तार की इजाज़त है, सेहत के बाद क़ज़ा वाजिब है। बल्कि शैख़ फ़ानी के लिए भी यही हुक्म है कि बाद में अगर वह रोज़ा रखने के क़ाबिल हो जाएगा, क़ज़ा करेगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–468, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–163 फ़स्लुन फ़िलअवारिज़)

रोज़ा रखने से बीमार हो जाना

सवालः एक शख़्स नमाज़ रोज़ा का पाबंद है, लेकिन रमज़ान शरीफ़ शुरू होने पर तीन चार रोज़े रखने से फ़ौरन बीमार हो जाता है ग़रीब आदमी अयालदार है दवा वग़ैरा करने की या मिस्कीन को खाना खिलाने की ताक़त नहीं रखता और अगर सर्दियों में भी क़ज़ा करता है तब भी वैसा ही बीमार क़रीबुलमर्ग हो जाता है इस सूरत में इसके लिए क्या हुक्म है?

जवाबः ऐसे मरीज़ के लिए जो रोज़ा रखने पर क़ादिर न हो हमेशा रमज़ान के रोज़ा रखने से या क़ज़ा करने से उसका मरज़ बढ़ता हो, और किसी तरह रोज़ा न रख सकता हो, फ़िदया देना फ़ुक़हा ने जाइज़ लिखा है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–478, बहवाला रद्दुलमुहतार फ़सल फ़िलअवारज़ि जिल्द–2 सफ़्हा–163)

क्या रमज़ान में इम्तिहान आ जाने पर रोज़ा छोड़ सकते हैं?

सवालः दुन्यवी उलूम मसलन बी० काम०, बी० ए०

वग़ैरा के इम्तिहान के तहत रोज़ा की हालत में इम्तिहान में ख़लल वाक़े होने का अंदेशा हो तो क्या करे? रोज़ा, रखे या फिर क़ज़ा करे?

जवाबः सूरते मसऊला में रोज़ा छोड़ने या रोज़ा तोड़ने की गुंजाइश नहीं है। रोज़ा के साथ ही इम्तिहान दे, ख़ुदा मदद फ़रमाऐंगे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–34)

रोज़ा में बाजा, बाँसुरी बजाना

सवालः कोई आदमी रोज़ा की हालत में बाँसुरी, बाजा और दीगर गाने बजाने की अशिया दम घूँट कर बजाए तो रोज़ा में कुछ ख़लल होगा या नहीं?

जवाबः रोज़ा में तंबूरा वग़ैरा बजाना गुनाह का काम है, लेकिन रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–38)

क्या इख़्तिलाज की वजह से रोज़ा छोड़ सकते हैं?

सवालः उमर को इख़्तिलाज या कोई मरज़ है जिससे उसको रोज़े की मुतलक़ बरदाश्त नहीं होती. उसको क्या करना चाहिए?

जवाबः रोज़ा मआफ़ नहीं हो सकता, अगर किसी क़वी शरई उज़्र की वजह से रमज़ान में रोज़ा न रख सके तो बाद में क़ज़ा करना वाजिब है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–483, बहवाला रद्दुलमुहतार फ़स्लुन फ़िलअवारिज़ जिल्द–2 सफ़्हा–160)

क्या मआशी मेहनत की वजह से रोज़ा छोड़ सकते हैं?

सवालः रमज़ान शरीफ़ के रोज़े फ़र्ज़ हैं, लेकिन मआश की वजह से मसलन काश्तकारी, या खाना वग़ैरा पकाने

की वजह से, क्या रोज़ा की क़ज़ा कर सकते हैं?

जवाबः इन उज़्रों की वजह से रमज़ान शरीफ़ के रोज़ा क़ज़ा करना दुरुस्त नहीं, बल्कि मुनासिब है कि रमज़ान शरीफ़ में ऐसे सख़्त मेहतन के काम न किए जाऐं जिनकी वजह से क़ज़ा करने की नौबत आए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–466, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब मायुफ़्सिदुस्सौम जिल्द–2 सफ़्हा–157)

जान के ख़तरा की हालत में इफ़्तार

सवालः रोज़ा की वजह से जान ख़तरे में हो तो रोज़ा तोड़ना वाजिब है या रुख़्सत?

जवाबः अगर मरज़ या भूक या प्यास की शिद्दत से जान का ख़तरा हो तो रोज़ा तोड़ना वाजिब है, अगर रोज़ा न तोड़ा और मर गया तो गुनहगार होगा, और बहालते इकराह यानी जब कोई रोज़ा तोड़ने पर मजबूर कर रहा हो और न तोड़ने की सूरत में जान से मार देने की धमकी दे रहा हो तो रोज़ा तोड़ देना वाजिब नहीं जाइज़ है, और न तोड़ना अफ़ज़ल है, जान दे दी तो सवाब है, अलबत्ता रोज़ादार मरीज़ या मुसाफ़िर हो तो इकराह की सूरत में भी रोज़ा तोड़ना वाजिब है।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–441, बहवाला बदाए सनाए जिल्द–2 सफ़्हा–94, 96)

रोज़े में गुस्ल करते वक़्त ग़रग़रा

सवालः किसी शख़्स को रोज़ा की हालत में गुस्ल की ज़रूरत हुई, गुस्ल करते वक़्त ग़रग़रा नहीं किया और न नाक के नर्म हिस्सा में उसने पानी पहुंचाया तो उसका गुस्ल हुआ या नहीं? और इस तरह गुस्ल कर के नमाज़

पढ़ी तो नमाज़ दुरुस्त हुई या नहीं?

जवाबः रोज़ादार के लिए ग़रग़रा और नाक के नर्म हिस्सा में पानी पहुंचाने का हुक्म नहीं है कि रोज़ा टूटने का अंदेशा है, और जो नमाज़ पढ़ी है वह सही है इआदा की ज़रूरत नहीं। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–198, बहवाला मराक़ियुलफ़लाह सफ़्हा–39)

क्या रोज़े में इस्तिंजे का पानी खुश्क करना ज़रूरी है?

सवालः नूरुलईज़ाह से मालूम होता है कि रोज़ादार को इस्तिंजा करने के बाद ख़ास मक़ाम को किसी चीज़ से अच्छी तरह ख़ुश्क कर ले, ताकि पानी अन्दर की तरफ़ जज़्ब न होने पाए, क्या ये क़ौल मुफ़्ताबिही है?

जवाबः इसकी कोई ज़रूरत नहीं, इस्तिंजा से रोज़ा पर असर नहीं पड़ता, अलबत्ता अगर पानी मौज़ए हुक़ना तक पहुंच जाए तो रोज़ा टूट जाएगा, मगर इस्तिंजा में ऐसा नहीं होता। (असनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–427, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–108)

क्या ग़ीबत करने से रोज़ा टूट जाता है?

सवालः इमाम साहब ने नमाज़ के बाद ये हदीस पढ़ कर सुनाई कि दो शख़्स जिन्होंने नमाज़े ज़ुहर या अस्र आप (स.अ.व.) की इक़्तिदा में पढ़ी थी। नमाज़ के बाद आप ने उनसे फ़रमाया तुम्हारा वुज़ू और नमाज़ नहीं हुई कि तुम ने ग़ीबत की थी, और अपना रोज़ा पूरा कर लो, दूसरे दिन उसकी क़ज़ा करना। क्या ग़ीबत करने से नमाज़ और रोज़ा नहीं होगा? क्या इआदा ज़रूरी है?

जवाबः हदीस में वुज़ू, नमाज़ और रोज़े के इआदा का हुक्म ख़्वास के लिए है हक़ीक़तन, और अवाम के

लिए ज़जरन और एहतियातन है। ग़ीबत हराम है, इससे इबादत में ख़लल वाक़े होता है। लिहाज़ा ग़ीबत से बचने का पूरा एहतेमाम किया जाए, ये मतलब नहीं कि वुज़ू, नमाज़ और रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। उलमा ने लिखा है कि रोज़ा के तीन दरजात हैं।

(1) आदमी रोज़ा की नीयत से खाने पीने और जिमाअ़ से दिन भर रुका रहे, ये अवाम का रोज़ा है।

(2) आदमी रोज़ा की नीयत से खाने पीने और जिमाअ़ से रुकने के अलावा आँख, नाक, कान, ज़बान, हाथ, पैर और तमाम आज़ा को तमाम गुनाहे कबीरा व सग़ीरा से रोके रखे। ये सालेहीन और नेक मोमिनीन का रोज़ा है।

(3) रोज़े की नीयत से खाने पीने और जिमाअ़ से दिन भर रुकने के अलावा तमाम आज़ा को गुनाहों से रोके और क़ल्ब को भी दुन्यवी ख़्यालात और फ़िकरों से रोके। इस तरह कि अल्लाह के अलावा कोई ख़्याल ही क़ल्ब में न आए। एक हदीस में हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि.) से रिवायत है कि "रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमाया जो रोज़ा रख कर बातिल कलाम और बातिल काम न छोड़े (यानी ग़ीबत और गुनाह करता रहे) तो उसके भूके प्यासे रहने की ज़रूरत नहीं। मालूम हुआ कि रोज़ा मक़्बूल होने के लिए आदमी खाना पीना और जिमाअ़ छोड़ने के अलवा मासियात और मुनकरात मिस्ल झूट, ग़ीबत, चुग़लख़ोरी वग़ैरा से भी ज़बान की हिफ़ाज़त करे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–196)

एक हदीस की तशरीह

सवालः हदीस "हाथ में प्याला हो और अज़ान हो

जाए तो पानी पी ले।" इससे बज़ाहिर मालूम होता है कि सुब्ह सादिक़ के बाद भी खना पीना जाइज़ है हदीस का क्या मतलब है?

जवाबः हज़राते मुहद्दिसीन ने इस हदीस की मुख़्तलिफ़ तौजीहें ब्यान फ़रमाई हैं।

(1) जब रोज़ादार को ज़न्ने ग़ालिब हो कि अज़ान वक़्त से पहले हुई है।

(2) हज़रत बिलाल (रज़ि.) की अज़ान मुराद है, जो सुब्ह सादिक़ से पहले जगाने के लिए होती थी।

(3) यह इफ़्तार से मुतअल्लिक़ है। मक़्सद ये है कि इफ़्तार की हालत में अज़ान सुनने या उसका जवाब देने के लिए इफ़्तार में तवक़्कुफ़ नहीं करना चाहिए।

नोटः बंदा के ख़्याल में इसकी मन्दरजा ज़ैल तौजीहें भी हो सकती हैं।

(1) उसका रोज़ा से कोई तअल्लुक़ नहीं, बल्कि मक़्सद ये है कि जब पानी पीने के लिए प्याला हाथ में ले लिया हो और उस हाल में अज़ान शुरू हो जाए तो पानी पी ले, अज़ान के सुनने और जवाब के लिए पानी न छोड़े।

(2) हदीस में "निदा" का लफ़्ज़ है जिससे इक़ामत मुराद ली जा सकती है, यानी ऐसी हालत में इक़ामत शुरू हुई कि प्याला हाथ में है तो पानी पी कर इत्मीनान से जमाअत में शरीक हो।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–444)

रमज़ानुलमुबारक में दिन में होटल खोलना

सवालः रमज़ानुलमुबारक में दिन में होटल खोलना कैसा है? होटल में बिला तफ़रीक़े मज़हब व मिल्लत हर

क़िस्म के लोग आते हैं, अगर खुला रखना नाजाइज़ हो तो, क्या सिर्फ़ ग़ैर मुस्लिमों के लिए खोल सकते हैं?

जवाबः माहे रमज़ानुलमुबारक के एहतिराम की ख़ातिर दिन के वक़्त होटल बंद रखना ज़रूरी है, ख़्वाह खाने पीने वाले किसी भी मज़हब के हों।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–197)

ईदुल फ़ित्र के रोज़े

ईद के महीने (शौवाल) में ईद के दिन के बाद ख़त्म महीने तक चाहे जिस तारीख़ में छः रोज़े रख लेने चाहिऐं, ये रोज़ा रमज़ान शरीफ़ के फ़र्ज़ रोज़ों के बाद ऐसे हैं जैसे फ़र्ज़ नमाज़ के बाद सुन्नतें और नफ़्लें होती हैं।

मिश्कात शरीफ़ में सफ़्हा–179 में है– जिसने रमज़ान के रोज़े रखे और फिर ईद के बाद छः रोज़े रखे तो उसने गोया हमेशा (पूरे साल) के रोज़े रखे।

तशरीहः साल भर के रोज़ों के बराबर हो जाने का मतलब ये है कि अल्लाह तआला के यहां हर नेकी का सवाब दस गुना दिया जाता है। रमज़ान के एक महीने के रोज़े तो दस महीनों के बराबर होंगे। बाक़ी बचे दो माह तो ये छः रोज़े दस गुने हो गए यानी एक साल के बराबर हो जाते हैं। कितना सहल काम और मेहनत बहुत कम और सवाब ज़्यादा।

शश ईद के रोज़े कब से शुरू करे

सवालः माहे शौवाल में छः रोज़े नफ़्ली रखे जाते हैं, इन रोज़ों को ईद के अगले ही दिन से शुरू करे? अगर अगले दिन से शुरू न करे तो बाक़ी महीने में रखे या नहीं?

जवाबः शौवाल के छः रोज़े शश ईद के नाम से मशहूर हैं। दुर्रेमुख़्तार में लिखा है कि मुतफ़र्रिक़ तौर पर उनका रखना बेहतर और मुस्तहब है और पै–दर–पै यानी मुसलसल रखना भी मकरूह नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–491, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–171)

शश ईद में क़ज़ा रोज़ों का हुक्म

सवालः रमज़ान में छः रोज़े क़ज़ा हुए और उनको शौवाल में क़ज़ा रखे, तो हदीस के बमोजिब शश ईद के रोज़ों का सवाब मिलेगा या नहीं?

जवाबः रमज़ान के रोज़े फ़र्ज़ हैं, उसकी नफ़्ल में नीयत करने से रमज़ान का रोज़ा सही न होगा। और अगर नीयत नफ़्ल शश ईद की गई हो तो रमज़ान के क़ज़ा अदा न होंगे। (फ़तावा दारुलउलूम, क़दीम अज़ीज़िया जिल्द–3 सफ़्हा–40)

❑❑❑

चौदहवाँ बाब

नज़्र के रोज़ों के मसाइल

नज़्र की दो क़िस्में

नज़्र की दो क़िस्में हैं मुअ़ल्लक़ और ग़ैर मुअ़ल्लक़। मुअल्लक़ वह नज़्र है जिसमें किसी शर्त का एतेबार किया गया हो। ख़्वाह वह शर्त मक़्सूद हो जैसे कोई मरीज़ कहे कि अगर मुझ को इस मरज़ से सेहत हो जाए तो मैं इतने रोज़े रखूंगा। या ग़ैर मक़्सूद, जैसे कोई कहे कि अगर मैं नमाज़ न पढ़ूं तो इस क़दर रोज़े रखूंगा। नज़्र ग़ैर मुअ़ल्लक़ किसी ज़माने या किसी जगह के साथ ख़ास नहीं होती, अगरचे मुतकल्लिम (नज़्र मानने वाला) तख़सीस करे मिसाल– (1) कोई शख़्स ये नज़्र करे कि मैं जुमा के दिन रोज़ा रखूंगा और वह दोशंबा के दिन रख ले तब भी नज़्र पूरी हो जाएगी।

(2) कोई शख़्स नज़्र करे कि में मक्का मुअ़ज़्ज़मा में रोज़े रखूंगा और वह अपने घर में ही रख ले तब भी जाइज़ है। नज़्र ग़ैर मअ़ल्लक़ रोज़ों में अलबत्ता इस शर्त की पाबंदी करना होगी, जिसका उसमें लिहाज़ किया गया हो, जो शख़्स ये नज़्र करे कि मैं फ़लाँ मक़्सद में कामियाब हो जाऊँ तो इस क़दर रोज़े रखूंगा, और कामियांबी से पहले रोज़े रख ले तो उसकी नज़्र पूरी न होगी, और

कामियाबी के बाद फिर उसको रोज़े रखने होंगे।

नज़्र और क़सम में फ़र्क़ ये है कि क़सम के रोज़ों को अगर फ़ासिद कर दे तो क़सम का कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा, और अगर उम्र भर न रखे ते उसके कफ़्फ़ारा की वसीयत कर जाना उस पर ज़रूरी है। बख़िलाफ़े नज़्र के कि उसके रोज़ों के फ़ासिद करने में सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम होती है, कफ़्फ़ारा लाज़िम नहीं होता। हाँ वसीयत करना इस में भी ज़रूरी है। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–43)

नज़्र की शर्तें

(1) पहली शर्त ये है कि जिस चीज़ की नज़्र करे उसकी जिन्स से शरअ़न कोई वाजिब हो, इसलिए कि मरीज़ की अ़यादत की नज़्र सही नहीं। (2) दूसरे ये कि वह मक़्सूद बिज़्ज़ात हो, वसीला न हो पस वुज़ू और सज्दए तिलावत की नज़्र सही न होगी। (3) तीसरे ये कि जिस चीज़ की नज़्र करे वह फ़िलहाल या किसी और वक़्त में वाजिब न हो। पस अगर कोई जुहर की नमाज़ या किसी वक़्त की नमाज़ की नज़्र करे तो सही नहीं। (4) चौथी ये कि जिस चीज़ की नज़्र करे वह अपनी ज़ात में गुनाह का काम न हो। पस अगर कोई यूँ कहे कि अल्लाह के लिए कुरबानी के दिन रोज़ा रखूंगा, और रोज़ा न रखे और फिर क़ज़ा करे तो ये नज़्र सही है इसके लिए रोज़ा रखना बिज़्ज़ात मशरूअ़ है और मना दूसरी वजह से हो गया है। (5) पाँचवीं शर्त ये है कि ये ज़रूरी है कि जिस काम के लिए नज़्र करे उस काम का होना मुहाल न हो, मसलन किसी गुज़श्ता रोज़ रोज़े की नज़्र की तो ये नज़्र सही न होगी।

(आलमगीरी उर्दू जिल्द–2 सफ़्हा–25)

कोई नज़्र पूरी न करे तो?

जब कोई नज़्र माने तो उसका पूरा करना वाजिब है अगर न पूरा करेगा तो गुनहगार होगा। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–8, बहवाला नूरुलईज़ाह सफ़्हा–150)

नज़्र की नीयत का तरीक़ा

(1) नज़्र दो तरह की है, एक तो ये कि दिन मुक़र्रर कर के नज़्र मानी कि या अल्लाह आज अगर फ़लाँ काम हो जाएग तो कल ही रोज़ा रखूंगा। या इस तरह कहे कि या अल्लाह मेरी फ़लाँ मुराद पूरी हो जाए तो परसों जुमा के दिन रोज़ा रखूंगा। ऐसी नज़्र में अगर रात से रोज़ा की नीयत न की तो दोपहर से एक घंटा पहले नीयत करे, ये भी दुरुस्त है। नज़्र अदा हो जाएगी।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–8, कंज़ुद्दक़ाइक़ सफ़्हा–66)

(2) दूसरी नज़्र ये है कि दिन तारीख़ मुक़र्रर कर के नज़्र नहीं मानी, बस इतना ही कहा कि या अल्लाह अगर मेरा काम हो जाए तो एक रोज़ा रखूंगा, या किसी काम का नाम नहीं लिया वैसे ही कह दिया कि पाँच रोज़े रखूंगा। ऐसी नज़्र में रात से नीयत करना शर्त है, अगर सुब्ह हो जाने के बाद नीयत की तो नज़्र का रोज़ा नहीं हुआ, बल्कि वह रोज़ा नफ़्ल हो गया। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–8, बहवाला शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–36 व आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–210)

वाहियात नज़्र का हुक्म

किसी काम पर इबादात की कोई नज़्र मानी, फिर वह काम हो गया जिसके लिए मिन्नत मानी थी, तो अब

मिन्नत का पूरा करना वाजिब है, अगर मिन्नत पूरी नहीं करेगा तो बहुत गुनहगार होगा, लेकिन अगर कोई वाहियात नज़्र हो जिसका शरीअ़त में कुछ एतेबार नहीं तो उसका पूरा करना वाजिब नहीं।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़हा–47, बहवाला जौहरतुन्नैयरा जिल्द–2 सफ़हा–263)

पाँच रोज़ों की मिन्नत रखने का तरीक़ा

अगर किसी ने कहा कि या अल्लाह अगर मेरा फ़लाँ काम हो जाए तो मैं पाँच रोज़े रखूंगा, तो जब काम हो जाए तो पाँच रोज़े रखने पडेंगे। और अगर न हो तो न रखे। अगर फ़क़त इतना ही कहा था कि पाँच रोज़ा रखूंगा तो इसमें इख़्तियार है कि पाँचों रोज़े एक साथ लगातार रखे चाहे एक एक दो दो कर के पूरे पाँचों रोज़े रख ले। दोनों सूरतों में दुरुस्त हैं। और अगर नज़्र करते वक़्त ये कह दिया कि पाँचों रोज़े लगातार रखूंगा या दिल में ये नीयत थी, तो सब एक साथ रखने पड़ेंगे। अगर पाँच में एक आध छूट जाए तो दोबारा रखने पड़ेंगे।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़हा–155)

नज़्र के बाद नफ़्ल रोज़े की नीयत करना

जुमा के दिन रोज़ा रखने की नीयत (नज़्र) की और जब जुमा आया तो बस इतनी नीयत कर ली कि आज मेरा रोज़ा है, ये मुक़र्रर नहीं किया कि ये नज़्र का रोज़ा है, या कि नफ़्ल की नीयत कर ली तब भी नज़्र का रोज़ा अदा हो गया। अलबत्ता जुमा को अगर क़ज़ा रोज़ा रख लिया और नज़्र का रोज़ा रखना याद नहीं रहा, या याद था मगर क़स्दन क़ज़ा का रोज़ा रख लिया तो नज़्र

का रोज़ा अदा न होगा, बल्कि क़ज़ा का रोज़ा हो जाएगा, नज़्र का रोज़ा फिर रखे। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–8, बहवाला शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–306)

ईद के दिन रोज़ा रखने की नज़्र मानना

अगर कोई शख़्स ईद के दिन रोज़ा रखने की मिन्नत माने, तब भी उस दिन रोज़ा दुरुस्त नहीं, उसके बदले किसी और दिन रखना चाहिए। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–9, बहवाला शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–318)

पूरे साल रोज़ा रखने की नज़्र मानना

अगर किसी ने ये मिन्नत मानी कि मैं पूरे साल रोज़े रखूंगा, साल में किसी दिन का भी रोज़ा न छोड़ूंगा तब भी ये पाँच रोज़े न रखेः (ईद के दिन, ज़िलहिज्जा की दस, ग्यारह, बारहर, तेरह) बाक़ी सब रखे, फिर इन पाँच रोज़े की क़ज़ा रख ले। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–9, बहवाला शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–318)

नज़्र में जुमा की क़ैद लगाना

अगर ये कहा जाए कि जुमा का रोज़ा रखूंगा, या मुहर्रम की पहली तारीख़ से दसवीं तारीख़ तक रोज़े रखूंगा, तो ख़ास जुमा को रोज़ा रखना वाजिब नहीं, और मुहर्रम की ख़ास उन्हीं तारीख़ों में रोज़ा रखना वाजिब नहीं, जब चाहे दस रोज़े रख ले, लेकिन दसों लगातार रखत्ता पड़ेंगे, चाहे मुहर्रम में रखे चाहे और किसी महीने में रखे सब जाइज़ है, इसी तरह अगर ये कहा कि आज मेरा ये काम हो जाए तो कल ही रोज़ा रखूंगा। जब भी इख़्तियार है जब चाहे रख ले।

नीज़ किसी ने नज़्र करते वक़्त यूं कहा कि मुहर्रम के

महीने के रोज़े रखूंगा तो मुहर्रम के पूरे महीने के रोज़ा लगातार रखना पड़ेंगे। बीच में किसी वजह से दस पाँच रोज़े छूट जाऐं तो उसके बदले इतने रोज़े रख ले, सारे रोज़े न दुहराए, और ये भी इख़्तियार है कि मुहर्रम के महीना में न रखे किसी और महीने में रख ले। लेकिन सब लगातार रखे। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–48, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–299)

नज़्र मान कर बीमार हो गया

सवालः जो शख़्स नज़्र रोज़ा की करने के बाद बीमार हो जाए तो उसके लिए क्या हुक्म है?

जवाबः सेहत का इंतिज़ार करे और सेहत के बाद नज़्र का रोज़ा रखे, अगर अच्छा न हो तो वसीयत फ़िदया की करे कि उसके माल में से उसके वारिस फ़िदया अदा करें। और फ़िदया एक रोज़ा का फ़ित्रा के बराबर है, ज़िन्दगी में फ़िदया देना उसको दुरुस्त नहीं है, यानी इस फ़िदया से रोज़े अदा न होंगे, तंदुरुस्त हो कर फिर रोज़े रखने होंगे, वरना वसीयत करना लाज़िम होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम, क़दीम फ़तावा अज़ीज़िया जिल्द–3 सफ़्हा–74)

❑❑❑

पन्द्रहवाँ बाब

नफ़्ल रोजे के मसाइल

फ़र्ज़ रोज़ा जान बूझ कर तोड़ना बहुत बड़ा गुनाह है और उसकी शरीअ़त ने सज़ा (कफ़्फ़ारा) मुक़र्रर की है, लेकिन नफ़्ली रोज़ा बग़ैर किसी सख़्त मजबूरी के भी तोड़ सकते हैं। मस्अला में गुंजाइश है, जबकि अपने पर क़ज़ा रखने का पूरा भरोसा हो, मगर रखने के बाद तोड़ना अच्छा नहीं है, हाँ अगर कोई बहुत ही ज़रूरत पेश आ जाए तो शरीअ़त ने रुख़्सत दे दी है, मसलन कोई मेहमान ऐसा आ जाए कि उसके साथ खाना नहीं खाया तो अफ़सोस करेगा, या किसी ने दावत की कि अगर उसमें शिरकत न की तो मेहमान नवाज़ की दिलशिकनी होगी। तो नफ़्ल रोज़ा तोड़ देना जाइज़ है, मगर क़ज़ा रखना वाजिब है। क्योंकि नफ़्ल शुरू करने के बाद वाजिब हो जाता है।

मेरे मोहतरम व मुकर्रम उस्ताद फ़क़ीहुलउम्मत मुफ़्ती महमूद साहब दामत बरकातुहुम मुफ़्तीए आज़म दारुलउलूम, देवबंद, दारुलइफ़्ता में अपने साथियों को बाज़ मरतबा हुक्म दे कर नफ़्ली रोज़ा तुड़वा देते हैं और फिर फ़रमाया करते हैं कि उसकी क़ज़ा रखना, अब तुम को डबल सवाब मिलेगा। पहले तो सिर्फ़ नफ़्ली रोज़ा था उसका ही सवाब

मिलता, लेकिन नफ़्ल शुरू करने के बाद वाजिब हो जाता है और उसका पूरा करना भी वाजिब ही है।

तंबीह: बाज़ हज़रात बीमारी या सफ़रे शरई में रोज़ा की वजह से बिल्कुल लबेदेहन हो जाते हैं। मगर रोज़ा नहीं तोड़ते, ये तरीक़ा ग़लत और खिलाफ़े शरीअ़त है, क्योंकि शरीअ़त ने मरीज़ और मुसाफ़िर को इजाज़त दे रखी है। इससे फ़ाएदा उठाना चाहिए।

मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी (मुरत्तिब)

नफ़्ल रोज़ा के बारे में आँहज़रत (स.अ.व.) का मामूल

हज़रत आएशा (रज़ि.) फ़रमाती हैं कि नबी करीम (स.अ.व.) जब नफ़्ल रोज़े रखने शुरू करते तो हम कहते कि अब आप रोज़े रखना ख़त्म नहीं करेंगे और जब रोज़े रखने पर आते तो हम कहते कि अब कभी रोज़े नहीं रखेंगे।

तशरीह: मतलब ये है कि आँहज़रत (स.अ.व.) हमेशा नफ़्ल रोज़ा नहीं रखते थे, बल्कि इस सिलसिले में आप (स.अ.व.) का मामूले मुबारक ये था कि कभी तो मुसलसल काफ़ी अरसा तक रोज़े रखते थे यहां तक कि आप (स.अ.व.) के रोज़ों की कसरत और तसलसुल को देख कर लोग गुमान करने लगते थे कि अब रोज़ों का ये सिलसिला शाएद आप (स.अ.व.) कभी भी ख़त्म न करें। और कभी ऐसा होता है कि आप मुसलसल काफ़ी अरसा तक रोज़ा रखते ही नहीं थे, यहाँ तक कि लोग सोचते कि शाएद अब आप (स.अ.व.) कभी नफ़्ल रोज़ा रखेंगे ही नहीं।

(मज़ाहिरे हक़ जदीद जिल्द–2 क़िस्त–5 सफ़्हा–43)

नफ़्ल रोज़ा में ख़फ़ीफ़ उज़्र

सही ये है कि नफ़्ल रोज़े का भी बग़ैर उज़्र के इफ़्तार करना जाइज़ नहीं, हाँ इस क़दर फ़र्क़ है कि नफ़्ल रोज़ा में ख़फ़ीफ़ उज़्र के सबब भी इफ़्तार करना जाइज़ है। बख़िलाफ़ फ़र्ज़ रोज़ा के, मसलन रोज़ादार किसी की दावत करे और मेहमान बग़ैर उसकी शिरकत के खाना न खाए, या रंजीदा हो जाए, तो ऐसी हालत में अगर उसको अपने नफ़्स पर कामिल वसूक़ हो कि उसकी क़ज़ा रख लेगा तो नफ़्ल रोज़ा तोड़ डाले वरना नहीं।

(इल्मुलफ़िक़्ह हिस्सा–3 सफ़्हा–42)

नफ़्ल रोज़ा की नीयत का तरीक़ा

नफ़्ल रोज़े की नीयत अगर ये मुक़र्रर कर के करे कि मैं नफ़्ल का रोज़ा रखता हूं, जब भी सही है, अगर फ़क़त इतनी नीयत करे कि मैं रोज़ा रखता हूं जब भी सही है। नफ़्ल रोज़ा में दोपहर से एक घंटा क़ब्ल तक नफ़्ल की नीयत कर लेना दुरुस्त है, तो अगर दिन के दस बजे तक मसलन रोज़ा रखने का इरादा न था लेकिन अभी तक कुछ खाया पिया नहीं, फिर दिल में ख़्याल आ गया और रोज़ा रख लिया तो भी दुरुस्त है।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–9, बहवाला कुदूरी सफ़्हा–45 व फ़तावा हिन्दीया जिल्द–1 सफ़्हा–164)

नफ़्ल का रोज़ा नीयत करने के बाद वाजिब हो जाता है। सो अगर सुब्ह सादिक़ से पहले रोज़ा रखने की नीयत कर ली कि आज मेरा रोज़ा है, फिर उसके बाद तोड़ दिया, तो अब उसकी क़ज़ा रखे, नीज़ अगर किसी ने रात को इरादा किया कि मैं कल रोज़ा रखूंगा। लेकिन

सुब्ह सादिक़ होने से पहले इरादा बदल गया और रोज़ा नहीं रखा तो क़ज़ा वाजिब नहीं।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–9 कुदूरी सफ़्हा–45 व आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–193)

औरत का नफ़्ल रोज़ा

औरतों को बग़ैर शौहर की इजाज़त के नफ़्ल रोज़ा रखना दुरुस्त नहीं, अगर बग़ैर इजाज़त के रोज़ा रखा तो शौहर के तुड़वाने से तोड़ देना दुरुस्त है, फिर जब शौहर इजाज़त दे तब उसकी क़ज़ा रखे।

नोट: ये हुक्म जब है कि जब शौहर मकान पर मौजूद हो। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–10, बहवाला फ़तावा ख़ानिया बर–हाशिया आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–194)

ईद के दिन नफ़्ल रोज़ा रखना

किसी ने ईद के दिन नफ़्ल रोज़ा रख लिया और नीयत कर ली, तब भी तोड़ देना ज़रूरी है, और उसकी क़ज़ा रखना भी वाजिब नहीं है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–10, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–208)

मुहर्रम और ज़िलहिज्जा के रोज़े

मुहर्रम की दस्वीं तारीख़ को रोज़ा रखना मुस्तहब है, हदीस शरीफ़ में आया है कि– "जो कोई ये रोज़ा रखे उसके गुज़रे हुए एक साल के गुनाह मआफ़ हो जाते हैं।" उसके साथ नौवीं या ग्यारहवीं तारीख़ का रोज़ा रखना भी मुस्तहब है। इसी तरह बक़रईद की नौवीं तारीख़ का रोज़ा रखने का भी बड़ा सवाब है, इससे एक साल के अगले और एक साल के पिछले गुनाह मआफ़ हो जाते हैं। और अगर शुरू चाँद से नौवीं तारीख़ तक

बराबर रोज़े रखे तो बहुत ही बेहतर है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़हा–10, बहवाला फ़तावा हिन्दीया सफ़हा–200 व आलमगीरी जिल्द–1 सफ़हा–200)

शबेबराअत के रोज़े

शबेबराअत (शाबान) की पन्द्रहवीं और ईद के छः दिन नफ़्ल रोज़े रखने का भी और नफ़्लों से यानी जिन रोज़ों की कोई ख़ास बुज़रगी साबित नहीं, ज़्यादा सवाब है, और इसी तरह हर महीने की तेरहवीं, चौदहवीं, पन्द्रहवीं तीन दिन रोज़ा रख लिया करे तो गोया उसने साल भर बराबर रोज़े रखे। हुजूर (स.अ.व.) ये तीन रोज़े रखा करते थे। एसे ही हर दो शंबा व जुमेरात के दिन भी रोज़ा रखा करते थे, अगर कोई हिम्मत करे तो उनका भी सवाब है।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़हा–10, बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़हा–200 व मराक़ियुलफ़लाह सफ़हा–193)

कुछ और रोज़ों का हुक्म

अगर महीने की तेरहवीं, चौदहवीं, पन्द्रहवीं तीन दिन रोज़ा रख लिया करे, तो गोया उसने साल भर बराबर रोज़े रखे। हुजूर (स.अ.व.) ये तीन रोज़े रखा करते थे। इसी तरह हर दोशंबा व जुमेरात के दिन भी रोज़ा रखा करते थे, अगर कोई हिम्मत करे तो उनका भी सवाब बहुत है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़हा–10, बहवाला मराक़ियुलफ़लाह सफ़हा–194)

□□□

सोलहवाँ बाब

वह उज़्र जिनकी वजह से रोज़ा न रखने की इजाज़त होती है

ये मजबूरियाँ ऐसी हैं कि उनमें रमज़ान के अन्दर रोज़ा न रखने की इजाज़त हो जाती है:

(1) बीमारी की वजह से रोज़ा की ताक़त न हो, या मरज़ बढ़ने का शदीद ख़तरा हो, तो रोज़ा न रखना जाइज़ है। रमज़ान के बाद उसकी क़ज़ा लाज़िम है।

(2) जो औरत हमल से हो और रोज़ा में बच्चा को, या अपनी जान को नुक़्सान पहुंचने का अंदेशा हो, तो रोज़ा न रखे, बाद में क़ज़ा करे।

(3) जो औरत अपने या किसी ग़ैर के बच्चा को दूध पिलाती है, अगर रोज़ा से बच्चा को दूध नहीं मिलता, तकलीफ़ पहुंचती है, तो रोज़ा न रखे, फिर क़ज़ा करे।

(4) मुसाफ़िर शरई (जो कम अज़ कम अड़तालीस मील के सफ़र की नीयत पर घर से निकला हो) उसके लिए इजाज़त है कि रोज़ा न रखे, फिर अगर कुछ तकलीफ़ व दिक़्क़त न हो, तो अफ़ज़ल ये है कि सफ़र ही में रोज़ा रखे, लेकिन अगर ख़ुद अपने आप को या अपने साथियों को इससे तकलीफ़ हो तो रोज़ा न रखना ही अफ़ज़ल है।

(5) रोज़ा की हालत में सफ़र शुरू किया, तो उस

रोज़ा का पूरा करना ज़रूरी है, और अगर कुछ खाने पीने के बाद सफ़र से वतन वापस आ गया, तो बाक़ी दिन खाने से एहतिराज़ करे। और अगर कुछ खाया पिया नहीं था कि वतन में ऐसे वक़्त आ गया जबकि रोज़ा की नीयत हो सकती है, यानी ज़वाल से डेढ़ घंटा क़ब्ल, तो उस पर लाज़िम है कि रोज़ा की नीयत कर ले।

(6) किसी को क़त्ल की धमकी दे कर रोज़ा तोड़ने पर मजबूर कर दिया जाए, तो उसके लिए तोड़ देना जाइज़ है फिर क़ज़ा करे।

(7) किसी बीमारी या भूक प्यास का इतना ग़ल्बा हो जाए कि किसी मुसलमान दीनदार माहिर तबीब या डॉक्टर के नज़दीक जान का ख़तरा लाहिक़ हो तो रोज़ा तोड़ देना जाइज़ बल्कि वाजिब है, फिर क़ज़ा लाज़िम होगी।

(8) औरत के लिए अैयामे हैज़ में और बच्चा की पैदाइश के बाद जो ख़ून आता है यानी निफ़ास के दौरान में रोज़ा रखना जाइज़ नहीं। इन दिनों में रोज़ा न रखे, बाद में क़ज़ा करे। बीमार, मुसाफ़िर, हैज़ और निफ़ास वाली औरत के लिए रमज़ान में रोज़ा न रखना और खाना पीना जाइज़ है, उनको भी लाज़िम है कि रमज़ान का एहतेराम करें, सब के सामने खाते पीते न फ़िरें।

(जवाहिरुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–381)

रोज़ा न रखने में अपनी राए

अगर ऐसी बीमारी है कि रोज़ा नुक़्सान करता है, और ये डर है कि अगर रोज़ा रखेगा तो बीमारी बढ़ जाएगी, या देर में सेहत होगी, या जान जाती रहेगी, तो रोज़ा न रखे, जब सेहत हो जाए तो उसकी क़ज़ा रख ले, लेकिन

फ़क़त अपने दिल से ऐसा ख़्याल कर लेने से रोज़ा छोड़ना दुरुस्त नहीं है, बल्कि जब कोई मुसलमान दीनदार तबीब कह दे कि तुम को रोज़ा नुक़्सान करेगा, तब छोड़ना चाहिए। नीज़ अगर हकीम या डॉक्टर ने तो कुछ नहीं कहा, लेकिन अपना ख़ुद तजरबा है और कुछ निशानियाँ मालूम हुई जिनकी वजह से दिल गवाही देता है कि रोज़ा नुक़्सान करेगा, तब भी न रखे। और अगर ख़ुद तजरबा कार न हो, और उस बीमारी का कुछ हाल मालूम न हो, तो फ़क़त ख़्याल का एतेबार नहीं। अगर दीनदार हकीम के बग़ैर बताए और बग़ैर तजरबा के अपने ख़्याल ही ख़्याल पर रमज़ान का रोज़ा तोड़ दिया, तो कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा। और अगर रोज़ा न रखेगा तो गुनहगार होगा।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–18, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–153)

जिन सूरतों में रोज़ा न रखना जाइज़ है उन सूरतों में दूसरों के सामने अपने बे–रोज़ा होने को ज़ाहिर करना जाइज़ नहीं है, क्योंकि इसमें डबल गुनाह है, एक तो ये कि गुनाह कर के उसको ज़ाहिर करना भी गुनाह है और अगर सब से कह दे तो दोहरा गुनाह है।

अवाम में जो मशहूर है कि ख़ुदा से चोरी नहीं, तो बंदों से क्या चोरी, ये ग़लत बात है, हर वह बात जो ख़ुदा को मालूम है, क्या बंदों के सामने ज़ाहिर की जाती है? बल्कि जो किसी उज़्र से रोज़ा न रखे उसको मुनासिब है कि सब के रू–ब–रू न खाए।

मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी (मुरत्तिब)

❑❑❑

सत्तरहवाँ बाब

वह उज़्र जिसकी वजह से रोज़ा तोड़ देना जाइज़ है

(1) अचानक ऐसा बीमार पड़ जाए कि अगर रोज़ा न तोड़े गा तो जान ख़तरा में हो जाएगी, या बीमारी बढ़ जाएगी। तो रोज़ा तोड़ देना बेहतर है, जैसे अचानक पेट में ऐसा दर्द उठे कि बेताब हो जाए, या साँप ने काट लिया, तो ऐसी सूरत में दवा पी लेना और रोज़ा तोड़ देना दुरुस्त है, ऐसे ही अगर ऐसी प्यास लगी कि हलाकत का डर है, तो भी तोड़ देना दुरुस्त है।

(बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–17, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–201 व मराक़ियुलफ़लाह सफ़्हा–212)

(2) हामिला औरत को कोई ऐसी बात पेश आ गई कि जिससे अपनी जान का, या बच्चा की जान का डर है, तो रोज़ा तोड़ डालना बेहतर है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–17, बहवाला शरहुलबिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–202)

(3) खाना पकाने की वजह से बेहद प्यास लग आई और इतना बेताब हो गया कि अब जान का ख़ौफ़ है तो रोज़ा खोल डालना दुरुस्त है, लेकिन अगर ख़ुद क़स्दन उसने इतना काम किया जिससे ऐसी हालत हो गई तो गुनहगार ख़ुद होगा। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–17, बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–159 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–152)

❑❑❑

अट्ठारहवाँ बाब

मकरूहाते रोज़ा

रोज़ा की हिफ़ाज़त कीजिए

हर चीज़ का क़ाएदा है कि अपना सही असर उसी वक़्त दिखाती है जब कि उसको नुक़्सान देने वाली और उसके असर को ख़त्म करने वाली चीज़ों से महफ़ूज़ रखा जाए। अगर हिफ़ाज़त न की जाए तो फ़ाएदा के बजाए नुक़्सान भी हो सकता है, मसलन डॉक्टरी एलाज के बाद अगर उसके बताए हुए परहेज़ पर अमल न किया जाए तो नतीजा ज़ाहिर है।

रोज़ा एक बहुत ही अहम और क़ीमती और अपने अन्दर बेशुमार फ़ाएदे लिए हुए है, लेकिन अगर उसकी हिफ़ाज़त न की गई, शरई बताया हुआ परहेज़ न किया गया, यानी खाने पीने और मुनाफ़ीए रोज़ा के साथ साथ लग्वीयात, बेहूदा गोई, लड़ाई, झगड़ा, झूट, ग़ीबत, चुग़लख़ोरी, धोका देही और इसी क़िस्म की और चीज़ों से अगर न बचा गया, तो रोज़ा तो हो जाएगा, मगर रोज़ा का जो फ़ाएदा होना चाहिए था वह नहीं होगा।

मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–177 में इस बारे में बहुत सी अहादीस आई हैं, मसलन– "आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि बहुत से रोज़ादार ऐसे हैं ज़िन्हें सिवाए भूक

व प्यास के कुछ नहीं मिलता है, और रातों को जागने और इबादतें करने वाले कितने ही ऐसे हैं, जिन्हें जागने की परेशानी के सिवा कुछ हासिल नहीं। जो शख़्स रोज़ा रखे और बेकार बातें और बेहूदा हरकतें न छोड़े तो अल्लाह को उसके खाने पीने छोड़ने की कोई परवाह नहीं।"

मतलब पूरी तरह वाज़ेह है कि, जब तक रोज़ा के साथ साथ उसका पूरा पूरा परहेज़ ने किया जाए, तो उस रोज़ा का कोई फ़ाएदा नहीं होगा।

ग़ौर करने की बात ये है कि जो काम मसलन खाना पीना वग़ैरा रोज़ा की नीयत से पहले हलाल थे, नीयत के बाद उनसे भी रोक दिया गया, और जो रोज़ा से पहले ही से हराम व नाजाइज़ हैं, उनकी किस क़दर बुराई बढ़ गई होगी। लेकिन कितने ही अफ़राद ऐसे हैं जो सिर्फ़ खाने पीने और जिमाअ़ से रुकने के अलावा बाक़ी किसी बुराई से नहीं बचते हैं, उनमें औरतों का तो क्या ही कहना, बल्कि मर्द हज़रात भी वक़्त काटने के लिए मशग़ूल हो जाते हैं। ये बातें बज़ाहिर मामूली सी मालूम होती हैं लेकिन वह बहुत ही नुक़्सान देह और रोज़ा का अज्र व सवाब को ख़त्म कर देने वाली हैं।

मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी (मुरत्तिब)

वह चीज़ें जिनसे रोज़ा नहीं टूटता मगर मकरूह हो जाता है

(1) किसी चीज़ का चखना, जबकि वह मेअ़दा में न जाए, ख़्वाह रोज़ा फ़र्ज़ हो या नफ़्ल, अलबत्ता अगर ऐसा करना ज़रूरी हो तो जाइज़ है, मसलन किसी औरत का ख़ाविंद बदमिज़ाज हो तो खाने का नमक चख लिया करे और यही हुक्म बावरची, नान बाई का भी है।

(2) किसी चीज़ का चखना बग़ैर किसी उज़्र के, अगर माजूरी हो तो, जैसे कोई औरत अपने बच्चे को चबा कर कुछ खिलाना चाहे और कोई बग़ैर रोज़ादार न हो।

(3) अपनी बीवी का बोसा (प्यार) लेना मकरूह है, ख़्वाह ये बोसा फ़ाहिशा हो, मसलन उसके होंटों को चूसना या फ़ाहिशा न हो।

(4) अपने मुंह में जमा शुदा लुआब को निगल जाना मकरूह है, क्योंकि उसमें रोज़ा टूटने का अंदेशा है।

(5) ऐसा कोई काम करना जिसकी बाबत गुमान ये हो कि उससे रोज़ा की हालत में कमज़ोरी हो जाएगी, अगर कमज़ोरी का गुमान ग़ालिब न हो तो मकरूह नहीं।

(6) दिन के वक़्त दाँतों के खनदाने में बीज दनदान का एक मरज़ है दवा लगाना मकरूह है, अगर रात तक रुकने से ज़रर का अंदेशा है, या सख़्त अज़ीयत का अंदेशा हो, तो दवा का डालना वाजिब है। (अगर दवा का असर पेट में चला गया तो रोज़ा टूट जाएगा)।

(7) कतान (अलसी) का ज़ाएक़ा हो, कातना मकरूहात में से है, और कतान अलसी वह है, जबकि मरतूबात में डाल कर सड़ाया जाता हो, ये मकरूह उस सूरत में जब कि कातने वाला कातने के काम पर मजबूर न हो। वरना मकरूह नहीं है, उस पर लाज़िम है कि उसके असर से मुंह में पानी भर आए तो उसको मुसलसल थूका जाए।

(8) एक कतान वह होती है जिसको दरया में डाल कर सड़ाया जाता है, ऐसी कतान का कातना मकरूह नहीं है, अगरचे बग़ैर मजबूरी के हो।

(9) फ़सल का काम भी रोज़ादार के लिए मकरूह है

और उसका मकरूह होना भी उस सूरत में है जबकि मजबूरन ऐसा करना पड़े, मजबूरी हो तो मकरूह नहीं, अलबत्ता खेती के मालिक को इजाज़त है कि काटते वक़्त वहां पर मौजूद रहे, क्योंकि उसके लिए (ग़ल्ला की) हिफ़ाज़त और देख भाल करना ज़रूरी है।

(10) जिमाअ़ के मुहर्रिकात मसलन बोसा लेना (और शह्वत अंगेज़) ख़्यालात में पड़ना, और ऐसी अशिया का देखना मकरूह है, जबकि मज़ी के निकलने या इंज़ाल होने की तरफ़ से इत्मीनाने नफ़्स न हो, और अगर उसमें शक हो, या इत्मीनान नहीं है, या कोई शख़्स ये जानता है कि बच नहीं सकेगा, तो ये बातें हराम हैं, ताहम अगर ऐसी सूरत में मज़ी आ जाए, तो रोज़ा की क़ज़ा लाज़िम है, अलबत्ता अगर बिला इरादा और मुसलसल नज़र किए बग़ैर महज़ मज़ी ख़ारिज हो जाए, तो क़ज़ा वाजिब नहीं है, अगर (ऐसी हरकात से) इंज़ाल हो जाए और रमज़ान का रोज़ा हो तो क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों लाज़िम होंगे बशर्ते कि जिन मुहर्रिकाते जिमाअ़ से इरतिकाब किया गया वह उसके लिए हराम हों, मसलन देखने वाले को अपने नफ़्स पर इत्मीनान न हो कि इंज़ाल या जिमाअ़ से महफ़ूज़ रहेगा, या ऐसा हो जाने का अंदेशा रहा हो, लेकिन इन मुहर्रिकात का इरतिकाब महज़ मकरूह था बईं तौर कि उससे नफ़्स पर इत्मीनान था, कि ऐसा न होगा ताहम ऐसा हो गया तो क़ज़ा वाजिब होगी, बशर्ते कि उन मुहर्रिकात के इरतिकाब में सहल अंगारी से काम न लिया गया हो जिसके बाइस इंज़ाल हो गया, तो इस सूरत में भी क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब होंगे।

(11) हरी मिस्वाक को इस्तेमाल करना, जो किसी क़दर मुंह में घुल जाती हो, मकरूह है, अगर ऐसी न हो तो तमाम दिन जाइज़ है, बल्कि अम्रे मुस्तहब है।

(12) सुब्ह होने तक नापाकी की हालत में रहना ख़िलाफ़े औला है, बेहतर यही है कि रात के अन्दर नहा (गुस्ल) लिया जाए। (किताबुलफ़िक़्ह मज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–923)

(13) फ़स्द कराना, किसी मरीज़ के लिए अपना ख़ून देना जो आज कल डॉक्टरों में राइज है ये भी उसमें दाख़िल है। (यानी मकरूह है)

(14) ग़ीबत, यानी किसी की पीठ पीछे बुराई करना ये हर हाल में हराम है, रोज़ा में इसका गुनाह और बढ़ जाता है।

(15) रोज़ा में लड़ना, झगड़ना, गाली देना, ख़्वाह इंसान को हो, या किसी बेजान चीज़ को, या जानदार को, इनसे भी रोज़ा मकरूह हो जाता है।

(16) रोज़ा में टूथ पेस्ट, टूथ पावडर, या मनजन या काएला से दाँत साफ़ करना भी मकरूह है।

(जवाहिरुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–379)

(17) फ़स्द और पछने (ख़ून निकलवाना) रोज़ादार के लिए मकरूह है, (ये भी मकरूह जब है कि कोई मरीज़ हो)

(18) और ये अंदेशा हो कि शाएद मरज़ की ज़्यादती के बाइस रोज़ा तोड़ना पड़े, अगर ज़्यादतीए मरज़ से महफ़ूज़ रहने का यक़ीन हो तो दोनों बातें जाइज़ हैं।

(19) लुआबे देहन को मुंह में जमा कर के उसको निगल लेना, और ऐसी चीज़ का जो घुलने वाली न हो,

मकरूह है, और घुलने वाली चीज़ का चबाना हराम है, अगर उसका शीरा निगल न गया हो।

(20) बिला ज़रूरत खाने को चखना मकरूह है, अगर खाने को किसी ख़ास ग़रज़ से चखा गया हो तो मकरूह नहीं है। ताहम अगर बिला ज़रूरत ऐसा करने से कुछ हलक़ तक पहुंच गया, तो रोज़ा जाता रहा।

(21) ख़ूराक का ज़र्रा दाँतों में फंसा रहने देना, और ऐसी अशिया का सूंघना जिसके हलक़ में पहुंच जाने की तरफ़ से इत्मीनान न हो मकरूह है, मसलन मुश्क, काफ़ूर का सुफ़ूफ़ और ऊद वग़ैरा के बुख़ूरात, बख़िलाफ़ उन अशिया के जिनकी तरफ़ से इत्मीनान हो कि (उनका असर) हलक़ तक नहीं पहुंचेगा, सूंघना मकरूह नहीं है।

(22) बीवी का प्यार लेना (बोसा) और दूसरी महर्रिकाते जिमाअ़ मसलन चिमटना, लिपटना और हाथ फेरना और बार बार देखना, जबकि इन अशिया से शह्त की तहरीक हो, मकरूह है, और अगर ऐसा न हो तो मकरूह नहीं। अगर प्यार और दूसरी मुहर्रिकाते जिमाअ़ (सोहबत) से अगर इंज़ाल हो जाने का अंदेशा या गुमान हो तो ऐसा करना हराम है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–927)

❑❑❑

उीन्नसवाँ बाब

वह चीजें जिनसे रोज़ा नहीं टूटता और मकरूह भी नहीं होता

(1) मिस्वाक करना (2) सुरमा या मोछों पर तेल लगाना (3) आँखों में दवा या सुरमा डालना (4) खुशबू सूंघना (5) गर्मी या प्यास की वजह से गुस्ल करना (6) किसी क़िस्म का इंजेक्शन या टीका लगवाना (7) भूल कर खाना पीना (8) हलक़ में बिला इख़्तियार धुवां या गर्द व गुबार या मक्खी वग़ैरा चला जाना (9) कान में पानी डालना या बिला क़स्द चला जाना (10) दाँतों से ख़ून निकले मगर हलक़ में न जाए, तो रोज़ा में ख़लल आया नहीं (11) सोते हुए एहतेलाम (गुस्ल की हाजत) हो जाना (12) खुद ब–खुद कैय आ जाना। (13) अगर ख़्वाब में, या सोहबत से गुस्ल की ज़रूरत हुई और सुब्ह सादिक़ होने पहले गुस्ल नहीं किया और ऐसी हालत में रोज़ा की नीयत कर ली तो रोज़ा में ख़लल नहीं आया।

(जवाहिरुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–379)

(14) कुल्ली करना नाक में पानी डालना, ख़्वाह ये अमल वुज़ू के अलावा में हो, गुस्ल करना (15) बदन पर भीगा हुआ कपड़ रख कर जिस्म को ठंडक पहुंचाना। (16) पछने (ख़ून निकलवाना) लगवाना अगर रोज़ादार को कमज़ोरी न हो। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–924)

❑❑❑

बीसवाँ बाब

मुस्तहब्बाते रोज़ा

(1) सूरज डूबते ही रोज़ा खोलने में जल्दी करना।

(2) खजूर या छुहारे से इफ़्तार करना, उसके बाद पानी का दरजा है।

(3) और जिस चीज़ से रोज़ा इफ़्तार किया जाए वह ताक़ अदद में हो, मसलन तीन या उससे ज़्यादा (कोई ताक़) अदद हो।

(4) इफ़्तार के बाद दुआए मासूरा का पढ़ना मसलन–

"اَللّٰهُمَّ لَکَ صُمْتُ وَعَلٰی رِزْقِکَ اَفْطَرْتُ"

(5) कुछ न कुछ सहरी के वक़्त खाया जाए, ख़्वाह थोड़ा सा ही हो, या सिर्फ़ पानी का एक घूंट हो। क्योंकि आँहज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि सहरी खाया करो, बिला शुब्हा सहरी में बरकत है। सहरी का वक़्त आख़िरी निस्फ़े शब है उसमें जितनी भी ताख़ीर की जाए अफ़ज़ल है।

(6) लेकिन इतनी देर न की जाए कि सुब्ह होने का अंदेशा होने लगे।

(7) ज़बान को बेहूदगी से बाज़ रखा जाए, रहा हराम अफ़आल मसलन ग़ीबत और चुग़ली का करना तो उससे तो बचना बहरहाल वाजिब है, और रमज़ान शरीफ़ में तो ख़ास तौर से बचने की ताकीद है।

(8) रिश्तादारों मुहताजों और मिस्कीनों को सदक़ात व

ख़ैरात से नवाज़ना, और हुसूले इल्म में मशगूल रहना और कुरआन शरीफ़ की तिलावत, दुरूद शरीफ़, ज़िक्रे इलाही में हत्तलइमकान दिन रात लगे रहना और एतिकाफ़ करना। (किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़्हा–937)

□□□

इक्कीसवाँ बाब

फ़िदया के मसाइल

शैख़ फ़ानी की तारीफ़

उमर रसीदा, नहीफ़ व नातवाँ बूढ़ा, या बुढ़िया, ऐसा बुढ़ापा आ गया हो कि अब ताक़त आने की कोई उम्मीद भी नहीं, या ऐसा बीमार हो गया कि अब सेहत के आसार नज़र नहीं आते, शैख़ फ़ानी का ये मतलब है कि जो ज़िन्दगी के आख़िरी स्टेज पर पहुंच चुका हो, अदाएगीए फ़र्ज़ से क़तअन मजबूर और आजिज़ हो, और जिस्मानी क़ूवत व ताक़त रोज़ बरोज़ घटती चली जा रही हो यहाँ तक कि ज़ोअ़फ़ व नातवानी के सबब ये क़तअन उम्मीद न हो कि आइंदा भी कभी रोज़ा रख सके, सिर्फ़ शैख़ फ़ानी ही के लिए जाइज़ है कि अपने रोज़ों का फ़िदया (माली बदला) दे दें।

हाँ उस शख़्स के लिए भी फ़िदया दे देना जाइज़ है जिसने हमेशा रोज़ा रखने की नज़्र मानी हो, और उससे आजिज़ हो, यानी असबाबे मईशत के हुसूल या किसी और उज़्र की वजह से अपनी नज़्र को पूरी न कर सके तो उसके लिए जाइज़ है कि वह रोज़ा न रखे, रोज़ा के बदले फ़िदया दे दिया करे। और फ़िदया की मिक़्दार एक फ़ित्रा के बराबर है, या सुब्ह व शाम हर रोज़ा के बदले

एक मिस्कीन को पेट भर कर खिलाए (फ़िदया यानी रोज़ों का माली बदला) इनके अलावा तमाम उज़्र का मस्अला ये है कि उज़्र ज़ाएल हो जाने के बाद रोज़ों की क़ज़ा ज़रूरी है। फ़िदया देना दुरुस्त नहीं है, यानी फ़िदया देने से रोज़ा मआ़फ़ नहीं होगा।

अगर कोई माजूर अपने उज़्र की हालत में मर जाए तो उस पर उन रोज़ों के फ़िदया की वसीयत करना वाजिब नहीं है, जो उसके उज़्र की वजह से फ़ौत हुए हैं, और न उसके वारिसों पर ये वाजिब होगा कि वह फ़िदया अदा करें, ख़्वाह उज़्र बीमारी का हो, या सफ़र का, या कोई शरई उज़्र हो, हाँ अगर कोई इस हाल में इंतिक़ाल करे कि उसका उज़्र ज़ाएल हो चुका था और वह क़ज़ा रोज़ा रख सकता था, मगर उसने क़ज़ा रोज़े नहीं रखे, तो उसके लिए ज़रूरी है कि वह उन दिनों के रोज़ों का फ़िदया की वसीयत कर जाए, जिनमें मरज़ से नजात पा कर सेहतमंद रहा था, या सफ़र पूरा कर के मुक़ीम था और या जो भी उज़्र रहा हो वह ज़ाएल हो चुका था।

अगर कोई शख़्स शैख़ फ़ानी सफ़र की हालत में इंतिक़ाल कर जाए तो उसकी तरफ़ से उन दिनों के रोज़ों का फ़िदया देना ज़रूरी नहीं होगा जिनमें वह सफ़र में रहा, क्योंकि जिस तरह अगर कोई दूसरा शख़्स सफ़र की हालत में मर जाए तो उसके अैयामे सफ़र के रोज़े मआ़फ़ होते हैं और उसके लिए भी उन दिनों के रोज़े मआ़फ़ हैं।

फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–470 में शैख़ फ़ानी की ये तारीफ़ की है कि इस क़दर बूढ़ा हो कि

उसमें बिल्कुल कूवत नहीं रही और क़रीब मौत के पहुंच गया, उम्र की कोई हद नहीं है, कूवत और अदमे कूवत पर मदार है, जब तक रोज़ा रख सके, अगरचे बतकल्लुफ़ हो रोज़ा रखे। क़ज़ा के रोज़े मुतवातिर रखना ज़रूरी नहीं है। मुतफ़र्रिक़ रखे, फ़िदया देना उस वक़्त तक काफ़ी नहीं है जब तक बिल्कुल रोज़ा न रखने की ताक़त रहे और किसी तरह भी रोज़ा न रख सके।

फ़िदया का क़ाएदा कुल्लीया

और अगर क़सम के कफ़्फ़ारा के रोज़े थे और शैख़ फ़ानी होने की वजह से रोज़ा से आजिज़ हो गया था तो उनके बदले खाना खिलाना जाइज़ नहीं। और क़ाएदा कुल्लीय ये है कि जो रोज़ा कि ख़ुद अस्ल हो और किसी दूसरे का एवज़ न हो उसके एवज़ में जब रोज़ा रखने से मायूस हो तो खाना दे सकता है। और जो रोज़ा कि दूसरे का बदल हो ख़्वाह अस्ल न हो उसके एवज़ खाना नहीं दे सकता। अगरचे आइंदा रोज़ा रखने से मायूस हो गया हो।

मसलन क़सम के कफ़्फ़ारा के रोज़ा के बदले में खाना देना जाइज़ नहीं। इसलिए कि वह ख़ुद दूसरे के बदल हैं और कफ़्फ़ारए ज़िहार और कफ़्फ़ारए रमज़ान में अपनी गुरबत की वजह से गुलाम आज़ाद करने से, या बूढ़ापे की वजह से रोज़ा रखने से आजिज़ हो, तो उसके एवज़ में साठ मिस्कीनों को खाना खिला सकता है, इसलिए कि ये फ़िदया रोज़ा के एवज़ में नस्स से साबित हुआ है।

(अलमगीरी उर्दू पाकिस्तानी जिल्द–2 सफ़्हा–24)

क्या फ़िदया रमज़ान से पहले देना जाइज़ है?

सवालः रमज़ान के रोज़ों के फ़िदया की रक़म अगर

रमज़ान आने से क़ब्ल एडवांस में दी जाए तो क्या ये सही है या नहीं? यानी अभी रोज़े नहीं आए और रोज़ों का फ़िदया पहले ही दे दिया।

जवाबः फ़िदया रोज़ों का बदल है, और रमज़ान के आने से वाजिब होता है, लिहाज़ा रमज़ान शुरू होने से क़ब्ल फ़िदया देना वजूदुस्सबब होने की वजह से दुरुस्त नहीं, अलबत्ता रमज़ान शुरू होने पर आइंदा ऐयाम का फ़िदया भी एक दम दे सकते हैं। उसके बरख़िलफ़ सदक़ए फ़ित्र का वजूब अफ़राद पर है, जो रमज़ान से क़ब्ल देना सही है बल्कि कई सालों का पेशगी भी दे सकते हैं।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–436)

फ़िदया की मिक़्दार

हर रोज़ा के बदले एक मिस्कीन को सदक़ए फ़ित्र के बराबर ग़ल्ला दे दे, या सुब्ह व शाम पेट भर कर खाना उसको खिला दे, शरीअ़त में उसको फ़िदया कहते हैं। अगर ग़ल्ला के बदले उस क़दर ग़ल्ला की क़ीमत दे दे जब भी जाइज़ हैं। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–20, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–163)

मज़ाहिरे हक़ जदीद जिल्द–2 क़िस्त–5 सफ़्हा–21 में क़ाएदा कुल्लीया इस तरह लिखा हैः हर दिन के रोज़े के बदले फ़िदया की मिक़्दार निस्फ़ साअ़ में एक किलो 633 ग्राम गेहूं या उसकी क़ीमत है। फ़िदया और कफ़्फ़ारा में जिस तरह तमलीक जाइज़ है उसी तरह इबाहते तआ़म भी जाइज़ है, यानी चाहे तो हर दिन के बदले मज़कूरा बाला मिक़्दार किसी मुहताज को दे दी जाए और चाहे हर दिन दोनों वक़्त भूके को पेट भर खाना खिला दिया

जाए। दोनों सूरतें जाइज़ हैं। सदक़ए फ़ित्र के बरख़िलाफ़ कि उसमें ज़कात की तरह तमलीक ही ज़रूरी है। इस बारे में उसूल समझ लीजिए कि जो सदक़ा लफ़्ज़ "इतआम या तआम" (खिलाने) के साथ मशरूअ़ है उसमें तमलीक और इबाहत दोनों जाइज़ हैं, और सदक़ा लफ़्ज़ "ईता या अदा" (देने) के साथ शुरू है, उसमें तमलीक शर्त और ज़रूरी है इबाहत क़तअ़न जाइज़ नहीं है।

गुज़श्ता सालों के फ़िदया में किस वक़्त की क़ीमत का एतेबार किया जाए?

सवाल: अगर बालिग़ होने के बाद शुरू उम्र में रोज़े क़ज़ा हो गए हों, अब ज़ईफ़ी की वजह से क़ज़ा रखने से माजूरी है, तो क्या फ़िदया में गंदुम की क़ीमत चालीस साल क़ब्ल की लगाई जाएगी कि जब रोज़े क़ज़ा हुए थे या मौजूदा निर्ख़ का एतेबार किया जाए?

जवाब: फ़िदया में अस्ल वाजिब ख़ुद गेहूं है, क़ीमत उसके क़ाइम मुक़ाम है, इसलिए बहरसूरत अदा के वक़्त की क़ीमत का एतेबार होगा।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द—4 सफ़्हा—431)

क्या बीमार फ़िदया दे सकता है?

सवाल: एक शख़्स बीमारी की वजह से रोज़ा नहीं रख सकता उसका फ़िदया क्या है?

जवाब: सेहत के बाद उसकी क़ज़ा रखना फ़र्ज़ है अलबत्ता अगर सेहत की कोई उम्मीद नहीं रही और आख़िर दम तक रोज़ा रखने की ताक़त लौटने से बिल्कुल मायूसी है, छोटे और ठंडे दिनों में भी रोज़ा रखने की ताक़त नहीं, तो एक रोज़ा के एवज़ पौने दो किलो गेहूं की

क़ीमत किसी मिस्कीन को दे दे।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–432)

मुतअद्दद रोज़ों का फ़िदया एक शख़्स को देना

सवालः एक रोज़ा का फ़िदया दो मिस्कीनों को, इसी तरह मुतअ़द्दद रोज़ों का फ़िदया एक मिस्कीन को देना दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः एक फ़िदया के गेहूं थोड़े थोड़े मुतअ़द्दद मसाकीन को देना दुरुस्त है, इसी तरह उसकी क़ीमत भी, और इसी तरह से मुतअ़द्दद रोज़ों का फ़िदया एक मिस्कीन को देना भी सही है। कफ़्फ़ारा की तरह नहीं बल्कि सदक़ए फ़ित्र की तरह है, लिहाज़ा मुतअ़द्दद रोज़ों का फ़िदया एक मिस्कीन को देना दुरुस्त है, और उसमें परेशानी से सहूलत है, हिफ़ाज़त है, वरना बड़ी रक़म में बड़ी दुश्वारियों का सामना होगा। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–199)

फ़िदया के मसारिफ़ क्या हैं?

फ़िदया वाजिबा के मसारिफ़ वह ही हैं जो ज़कात के मसारिफ़ हैं, उसमे मुहताज व मुफ़्लिस को मालिक बनाना ज़रूरी है। ख़्वाह वह गुरबा व मसाकीन किसी भी ज़गह के हों, उनकी मिल्क होना ज़रूरी है। पस जिन मसारिफ़ में तमलीक किसी की नहीं होती उन मसारिफ़ में रक़म का ख़र्च करना दुरुस्त नहीं। जैसे तामीरे मस्जिद, मदरसा व कुवां, कुतुबे अहादीस व फ़िक़्ह वग़ैरा इसमें सर्फ़ करना बिला किसी तमलीक के जाइज़ नहीं। मगर इस हीला से कि किसी ग़ैर मालिके निसाब की मिल्क कर के उसकी तरफ़ से मज़कूरा बाला मसरफ़ में ख़र्च कर सकते हैं। यतीम, नाबालिग़ मुफ़्लिस के मसारिफ़ में सर्फ़ करने के

लिए उसके वली को दे देना दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–459, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–79 व 85 बाबुलमसरफ़)

फ़िदया की रक़म से किसी मुफ़्लिस का क़र्ज़ अदा करना

सवालः फ़िदया की रक़म से किसी मुफ़्लिस क़र्ज़दार का क़र्ज़े जाइज़ अदा किया जा सकता है या नहीं? वह क़र्ज़ ख़ुद अदा कर दिया जाए, या उस रुपये को किसी मुफ़्लिस को देकर अदा कर दिया जाए?

जवाबः इस रक़म से ख़ुद क़र्ज़ अदा कर देना किसी मुफ़्लिस मक़रूज़ का दुरुस्त नहीं है, अलबत्ता उस मक़रूज़ मुफ़्लिस को दे देना दुरुस्त है कि वह अपना क़र्ज़ अदा कर ले। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–258, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलमसरफ़ जिल्द–2 सफ़्हा–85)

फ़िदया की रक़म यतीम ख़ाना में देना

सवालः फ़िदया की रक़म किसी यतीम ख़ाना के मसारिफ़ में दी जा सकती है या नहीं, और किसी यतीम नाबालिग़ के वली को उस नाबालिग़ के मसरफ़ के लिए दे देना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः यतीम नाबालिग़ मुफ़्लिस के मसारिफ़ में सर्फ़ करने के लिए उसके वली को दे देना दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–258, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–85 बाबुलमसरफ़)

फ़िदया की रक़म से कपड़ा ख़रीद कर तक़सीम करना

सवालः फ़िदया में ग़ुरबा अशख़ास को कपड़ा दे सकते हैं या नहीं? मौजूदा वक़्त में एक नमाज़ या रोज़ा का फ़िदया नक़द की सूरत में एक रुपया होता है, अगर बीस

रुपये का कम्बल ख़रीद कर एक शख़्स को दे दिया जाए तो एक रोज़ा का फ़िदया होगा, बाईस का, या बीस का होगा?

जवाबः फ़िदया में गेहूं की क़ीमत के बराबर कपड़ा वग़ैरा देना भी जाइज़ है और मुतअद्दद रोज़ों के फ़िदया की रक़म एक फ़क़ीर को देना भी जाइज़ है, इसलिए बीस रुपये का कम्बल देने से बीस रोज़ों का फ़िदया अदा हो गया। ग़ल्ला की क़ीमत या उतनी क़ीमत का सामान देना भी जाइज़ है, नाबालिग़ का बाप अगर मिस्कीन हो तो उसको सदक़ा देना जाइज़ है, अलबत्ता नाबालिग़ को खाना खिलाना काफ़ी नहीं है।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–439)

❑❑❑

बाईसवाँ बाब

इफ़्तार के मसाइल

रिज़्के हलाल की अहमियत

इफ़्तार के वक़्त अक्ले हलाल की पाबंदी की जाए और हराम के शुब्हा से भी गुरेज़ किया जाए, क्योंकि इस सूरत में रोज़ा के कोई माना नहीं कि तमाम दिन हलाल खाने से रुका है और जब इफ़्तार करने बैठा तो हराम रिज़्क़ से रोज़ा इफ़्तार किया।

ये रोज़ादार उस शख़्स की मानिन्द है जो एक महल तामीर कराए और एक शहर मुन्हदिम (तुड़वाए) कराए इसलिए कि हलाल खाने की कसरत मुज़िर होती है और रोज़ा उस कसरत का ज़ोर ख़त्म करता है।

जो शख़्स बहुत सी दवाएँ खाने के डर से ज़हर खाए तो यक़ीनन वह शख़्स बेवकूफ़ कहलाने का मुस्तहिक़ है हराम भी एक ज़हर है, जिस तरह ज़हर जिस्म के लिए मोहलिक है उसी तरह रिज़्क़े हराम भी दीन के लिए मोहलिक है। और हलाल खाने की मिसाल एक दवा की सी है, जिसकी कम मिक़्दार मुफ़ीद है और ज़्यादा मुज़िर है।

रोज़ा का मक़सद ये है कि हलाल खाना भी कम

खाया जाए, ताकि मुफ़ीद हो। एक रिवायत निसाई में हज़रत इब्न मसऊद (रज़ि.) से आप (स.अ.व.) के अलफ़ाज़ मनकूल हैं– "बहुत से रोज़ादार ऐसे हैं कि जिनके रोज़ा का हासिल भूक और प्यास के अलावा कुछ भी नहीं।"

इस हदीस की मुख़्तलिफ़ तफ़सीर मनकूल हैं। बाज़ लोगों के नज़दीक इससे मुराद वह शख़्स है जो हलाल रिज़्क़ से रुका रहे और लोगों के गोश्त यानी ग़ीबत से रोज़ा इफ़्तार करे। बाज़ लोगों की राए है कि वह शख़्स मुराद है जो अपने आज़ा को गुनाहों से न बचाए।

इफ़्तार के वक़्त हलाल रिज़्क़ भी इतना न खाया जाए कि पेट फूल जाए, अल्लाह के नज़्दीक कोई ज़र्फ़ इतना बुरा नहीं है जितना बुरा वह पेट है जो हलाल रिज़्क़ से भर दिया गया हो।

रोज़ा का अस्ल मफ़हूम (मक़सद) है कि पेट ख़ाली रहे और नफ़्स की ख़्वाहिशात ख़त्म हो जाऐं। और रोज़ा से ये भी मक़सद होता है कि रोज़ादार के नफ़्स में तक़्वा पैदा हो और ज़्यादा खाने की सूरत में ये मक़सद ख़त्म हो जाता है और ये जब ही हो सकता है कि जब गिज़ा में कमी की जाए और कमी की मीआद ये है कि इफ़्तार में इतना खाया जाए जितना कि आ़म रातों में खाया जाता है, ये नहीं कि सुब्ह से शाम तक के औक़ात का कोटा जमा कर लिया जाए। अगर ऐसा किया जाए तो ऐसे रोज़ा से यक़ीनन अस्ल मक़सद हासिल नहीं होगा।

(एहयाउलउलूम जिल्द–1 क़िस्त–4 सफ़्हा–596)

पाँचवीं चीज़ इफ़्तार के वक़्त हलाल माल से भी इतना ज़्यादा न खाए कि शिकम सैर हो जाए। इसलिए कि

रोज़ा की ग़रज़ इससे फ़ौत हो जाती है। मक़्सूद रोज़ा से कूवते शहवानिया और बहाएमीया का कम करना है और कूवते नूरानिया और मलकीयत का बढ़ाना है। ग्यारह महीने तक बहुत कुछ खाया पिया है, अगर एक महीना उसमें से कुछ कमी हो जाएगी तो क्या जान चली जाएगी? मगर हम लोगों का हाल ये है कि इफ़्तार के वक़्त तलाफ़िये माफ़ात में और सहर के वक़्त हिफ़्ज़े मातक़द्दुम में इतनी ज़्यादा मिक़्दार खा लेते हैं कि बग़ैर रमज़ान के और बग़ैर रोज़ा की हालत में इतनी मिक़्दार खाने की नौबत ही नहीं आती, रमज़ानुलमुबारक भी हम लोगों के लिए ख़ौद का काम करता है। (फ़ज़ाइले रमज़ान सफ़्हा–29)

रोज़ा इफ़्तार कराने का सवाब

मिशकात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–173 पर इफ़्तार कराने के बारे में अहादीस आई हैं। जिनका मफ़हूम ये है कि– "अगर कोई रोज़ादार का रोज़ा इफ़्तार कराए तो उसके सग़ीरा गुनाह बख़्श दिए जाते हैं, और जहन्नम की आग से नजात मिलती है, और उसको इतना ही सवाब मिलता है कि जितना रोज़ादार को रोज़ा रखने का।" इस पर मज़ीद लुत्फ़ और ख़ुदा तआला का एहसान कि रोज़ादार के सवाब में कोई कमी नहीं होती, बल्कि हक़ तआला अपने फ़ज़्ल व करम से अपनी तरफ़ से रोज़ा इफ़्तार कराने वाले को रोज़ादार के बराबर सवाब मरहमत फ़रमाएंगे।

सहाबए किराम (रज़ि.) ने अर्ज़ किया या रसूलुल्लाह अगर किसी में रोज़ा खुलवाने की गुंजाइश न हो तो वह कैसे इस सवाब को हासिल करेगा, क्योंकि हम में से हर एक इस लाएक़ नहीं है कि किसी को इफ़्तार कराए,

आप ने फ़रमाया– "ये सवाब तो अल्लाह तआला एक घूंट लस्सी पिलाने, या एक खजूर खिलाने या एक घूंट पानी पिलाने पर भी दे देते हैं। और जिसने पेट भर खाना खिला दिया उसको अल्लाह तआला मेरी हौज़े (कौसर) से ऐसा पानी पिलाऐंगे जिसकी अदना तासीर ये होगी कि जन्नत में दाख़िल होने तक फिर कभी उसको प्यास न लगेगी।

बाज़ जाहिल किसी के यहाँ रोज़ा इफ़्तार नहीं करते और ये समझते हैं कि रोज़ा का सवाब जाता रहेगा। और अगर किसी के यहां दावत क़बूल कर लेते हैं तो इफ़्तार करने के लिए अपने घर से कोई चीज़ ले जाते हैं, ये बहुत बड़ी जिहालत और कम इल्मी की बात है। फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–493 में इसी ही के बारे में फ़तवा है।

सवालः बाज़ हज़रात का ये ख़्याल होता है कि ग़ैर की इफ़्तारी से रोज़ा न खोला जाए, क्योंकि रोज़ा का सवाब उसको पहुंच जाएगा। क्या ये सही है?

जवाबः ये अक़ीदा फ़ासिद है कि दूसरे की इफ़्तारी से रोज़ा न खोला जाए कि रोज़ा का सवाब इफ़्तार कराने वाले को पहुंच जाएगा। हदीसे नबवी (स.अ.व.) का मफ़हूम है कि जो शख़्स किसी रोज़ादार का रोज़ा इफ़्तार कराए उसके गुनाह मआफ़ कर दिए जाते हैं, और इफ़्तार कराने वाले को रोज़ादार के बराबर सवाब मिलता है, रोज़ादार के सवाब में कोई कमी नहीं आती है।

(मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–174)

मोहम्मद रफ़अ़त क़ासमी (मुरत्तिब)

इफ़्तार के लिए घंटा वग़ैरा का इस्तेमाल

सहरी का, या इफ़्तारी का अगर वक़्त मालूम न होता हो और रोज़ों के फ़साद का अंदेशा हो तो, नक़्क़ारा बजाना, या घंटा बजाना, या गोला वग़ैरा का इस्तेमाल दुरुस्त है, लेकिन मस्जिद या उसकी छत पर नहीं होना चाहिए बल्कि मस्जिद से हट कर किसी दूसरे मकान, या बुलंद मक़ाम पर होना चाहिए, क्योंकि ये चीज़ें एहतेरामे मस्जिद के ख़िलाफ़ हैं। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–292)

जल्दी इफ़्तार करने का हुक्म

हुज़ूर अकरम (स.अ.व.) का इरशाद है कि– "रोज़ा इफ़्तार करने में जल्दी करनी चाहिए और इफ़्तार में जल्दी करने वाले बंदे ख़ुदा को बहुत प्यारे हैं।" एक हदीस में है कि– "जब तक मुसलमान रोज़ा इफ़्तार करने में जल्दी करते रहेंगे दीन का ग़लबा रहेगा।"

और इफ़्तार में जल्दी करने का मतलब ये नहीं है कि आफ़ताब गुरूब होने से पहले ही रोज़ा खोल लें बल्कि मतलब ये है कि जब सूरज का गुरूब होना मुतहक़्क़क़ व यक़ीनी हो जाए, तो फिर इफ़्तार में महज़ शुब्हा और वह्म की बिना पर इफ़्तार में देर नहीं करनी चाहिए। हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि.) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने इरशाद फ़रमाया– "कि अल्लाह तआला फ़रमाता है कि मेरे बंदों में ज़्यादा महबूब बंदा वह है जो इफ़्तार में जल्दी करे।"

इफ़्तार जल्दी करने को ग़लत न समझा जाए, इसलिए आप (स.अ.व.) ने आम फ़ह्म क़ाएदा ये बताया कि– "जब रात आ जाए और दिन चला जाए और सूरज गुरूब हो

जाए तो इफ़्तार का वक़्त हो गया।" (तिरमिज़ी शरीफ़)

ये तीन कलिमात ताकीद और तौज़ीह के लिए इरशाद फ़रमाए गए हैं ताकि कोई ये गुमान न करे कि सूरज का सिर्फ़ किनारा ग़ुरूब होने से, या उसके बग़ैर रात की सी तारीकी (जैसा कि अब्र के दिन) हो जाने से इफ़्तार दुरुस्त हो जाएगा। (मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–174, बहवाला मआ़रिफे मदीना जिल्द–10 सफ़्हा–10)

इफ़्तार में घड़ी और जन्त्री का इस्तेमाल

सवालः नमाज़े मग़रिब व इफ़्तार का हुक्म ऐसे वक़्त देना जबकि चंद अशख़ास को ग़ुरूबे आफ़ताब में कलाम हो कैसा है? और इन दोनों का सही वक़्त क्या है?

जवाबः ये अम्र तजरबा और मुशाहदा पर मौक़ूफ़ है और उसके जानने वाले हर वक़्त में मौजूद रहते हैं और सही घड़ी से और जन्त्री तुलूअ़ व ग़ुरूब से भी इसमें मदद मिलती है। पस जो जन्त्री तुलूअ़ और ग़ुरूब की सही हो और उसका तजरबा हो चुका हो सही घड़ी से उसके मुताबिक़ इफ़्तार और मग़रिब की नमाज़ का हुक्म किया जाएगा और अक्सर ज़मानों में मुशाहदा और अलामात से भी मालूम हो जाता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–498)

फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–108 में इस तरह दर्ज है– मग़रिब की अज़ान, नमाज़ और इफ़्तार का मदार ग़ुरूबे आफ़ताब पर है न कि घड़ी या जन्त्रिरी पर, घड़ी और जन्त्री ग़ुरूब के ताबेअ़ हैं ये ग़लत भी हो सकती हैं, इनसे एक हद तक इमदाद ली जा सकती है, इन पर मदार नहीं रखा जा सकता है, लिहाज़ा अगर आप देख

लें कि आफ़ताब छुप गया या दूसरे के ख़बर देने और क़ाइन से यक़ीन हो जाए कि सूरज गुरूब हो गया तो ज़रूर इफ़्तार कर लीजिए, और जैसे ही यक़ीन हो जाए तो फ़ौरन इफ़्तार कर लीजिए, अब एहतियात वग़ैरा के तसव्वुर (चक्कर) में ताख़ीर करना दुरुस्त नहीं है। और जब तक आप ख़ुद अपने मुशाहदा, या यक़ीन, ख़बर, या एलान की बिना पर यक़ीन हासिल न हो, बल्कि तरद्दुद हो तो सिर्फ़ जन्त्रिरी या घड़ी पर एतेमाद कर के नमाज़ पढ़ना और इफ़्तार करना दुरुस्त नहीं है, लेकिन अगर मतला साफ़ न हो जिसकी वजह से आफ़ताब को डूबता हुआ न देख सकें तो फिर चंद मिनट की ताख़ीर की जा सकती है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–108)

मस्जिद में इफ़्तार व सहर करना

सवालः मस्जिद में रोज़ा इफ़्तार करना, ऐसे ही सहरी खाना कैसा है? अगर मकान पर इफ़्तार किया जाए तो नमाज़ फ़ौत हो जाती है लिहाज़ा क्या करे?

जवाबः बेहतर ये है कि ऐसी सूरत में एतेकाफ़ की नीयत करे, मस्जिद में इफ़्तार करना या सहरी खाना दुरुस्त है, लेकिन जहां तक मुम्किन हो मस्जिद को ख़राब (गंदा) न किया जाए। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–1 सफ़्हा–508)

गुरूब से क़ब्ल अज़ान पर इफ़्तार

सवालः मुअज़्ज़िन ने अज़ान तक़रीबन सात मिनट पहले दे दी, मैंने उस अज़ान पर रोज़ा इफ़्तार कर लिया। क्या मेरा रोज़ा हो गया या नहीं?

जवाबः रोज़ा नहीं हुआ, अगर आपको इस अज़ान के सही वक़्त पर होने का ज़न्ने ग़ालिब था, तो सिर्फ़ क़ज़ा

वाजिब है, कफ़्फ़ारा नहीं। और अगर शुब्हा था तो कफ़्फ़ारा भी वाजिब है।

(अहसनुलफ़तावा पाकिस्तानी जिल्द–4 सफ़्हा–446)

ज़कात के पैसे से मस्जिद में इफ़्तार कराना?

सवालः क्या ज़कात के पैसे को मस्जिद या सहरी या इफ़्तारी या शबीना में ख़र्च कर सकते हैं?

जवाबः रमज़ान की इफ़्तारी का, या शबीना में ज़कात का देना, इस तरह जाइज़ है कि इफ़्तार खाने वाले या शबीना का खाने वाले मिस्कीन हों और तमलीकन (मालिक बना दिया जाए) उनको इफ़्तार या खाना तक़्सीम कर दिया जाए। अगर ग़नी, मालदार होंगे, तो जाइज़ नहीं है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–258, बहवाला फ़तावा हिन्दीया सफ़्हा–201)

इफ्तार का सही वक्त

आफ़ताब के गुरूब होने का यक़ीन हो जाने के बाद इफ़्तार में देर करना मरूह है। हाँ अगर बादल वग़ैरा की वजह से शुब्हा हो तो दो चार मिनट इंतिज़ार कर लेना बेहतर है, और तीन मिनट की एहतियात बहरहाल करना चाहिए। खजूर और ख़ुरमा से इफ़्तार करना अफ़ज़ल है और अगर किसी दूसरी चीज़ से इफ़्तार करें तो इसमें भी कोई कराहत नहीं। (जवाहिरुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–381)

इफ्तारी क्या होनी चाहिए

खजूर और छूहारे से इफ़्तार करना अफ़ज़ल है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–494, बहवाला मिश्कात शरीफ़ किताबुस्सौम जिल्द–1 सफ़्हा–175)

ताज़ा खजूर से इफ़्तार मुस्तहब है, वह तो न हो

ख़ुश्क खजूर से और अगर वह भी न हो तो पानी से।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–436)

आँहज़रत (स.अ.व.) की इफ़्तारी

हज़रत अनस (रजि.) फ़रमाते हैं कि नबी करीम (स.अ.व.) मग़रिब की नमाज़ से पहले चंद ताज़ा खजूरों से इफ़्तार फ़रमाते थे और ताज़ा खजूर न होती थीं तो ख़ुश्क खजूरों से इफ़्तार फ़रमाते थे। और अगर ख़ुश्क खजूरें भी न होतीं तो चंद (यानी तीन) चुल्लू पानी पी लेते। तिरमिज़ी की एक और हदीस में ये भी आया है कि आप (स.अ.व.) तीन खजूरों से या किसी ऐसी चीज़ से जो आग की पकी हुई न होती थी रोज़ा खोलना पसंद फ़रमाते थे।

तशरीहः खजूर या पानी से इफ़्तार करने में बज़ाहिर हिकमत ये मालूम होती है कि जब मेअ़दा ख़ाली होता है और खाने की ख़्वाहिश पूरी तरह होती है उस सूरत में जो चीज़ खाई जाती है उसको मेअ़दा अच्छी तरह क़बूल व हज़्म करता है, लिहाज़ा ऐसी हालत में जब शीरीनी मेअ़दा में पहुंचती है तो बदन को बहुत ज़्यादा फ़ाएदा पहुंचता है क्योंकि शीरीनी (मिठाई) की ये ख़ासियत होती है कि उसकी वजह से कुवाए जिस्मानी में कूवत जल्द सिरायत करती है। खुसूसन कूवते बासिरा (निगाह) को शीरीनी से बहुत फ़ाएदा पहुंचता है और चूंकि अरब में शेरीनी अक्सर खजूर ही होती थी और अह्ले अरब के मिज़ाज इससे बहुत ज़्यादा मानूस थे, इसलिए खजूर से इफ़्तार करने के लिए फ़रमाया गया है, और खजूर न होने की सूरत में पानी से इफ़्तार करने के लिए फ़रमाया गया है, क्योंकि ये ज़ाहिरी और बातिनी तहारत व पाकीज़गी

के लिए फ़ाले नेक है। इब्न मालिक (रह.) फ़रमाते हैं कि बेहतर ये है कि इसकी इल्लत शारेअ़ अलैहिस्सलाम के हवाला कर दी जाए। (मज़ाहिरे हक़ जिल्द–4 सफ़्हा–95)

इफ़्तार की वजह से जमाअ़त में ताख़ीर

सवाल: इफ़्तार के वक़्त लोगों की लाई हुई इफ़्तारी खा कर मग़रिब की नमाज़ अदा करते हैं, एक शख़्स इस पर मोतरिज़ है कि नमाज़ के बाद खाओ, और अज़ान होते ही सिर्फ़ छुहारे से रोज़ा इफ़्तार कर के फ़ौरन नमाज़ को खड़े हो जाओ, और वह शख़्स नाराज़ हो कर मग़रिब की नमाज़ अलग पढ़ता है, शरअ़न क्या हुक्म है?

जवाब: इफ़्तारी की वजह से मग़रिब की नमाज़ में कुछ देर करना जाइज़ है, इसमें कुछ हरज नहीं है, इत्मीनान से रोज़ा इफ़्तार कर के और पानी पी कर और कुछ खा कर जो मौजूद हो नमाज़ पढ़नी चाहिए। पस जो शख़्स ऐसी मामूली ताख़ीर की वजह से नाराज़ हुआ और अलाहिदा नमाज़ पढ़ने लगा उसने ख़ता की, उसको चाहिए जमाअ़त में शरीक हो कर और इस ताख़ीर को जो रोज़ा इफ़्तार करने की वजह से है ख़िलाफ़े शरअ़ न समझे, ये अ़ैन शरीअ़त का हुक्म है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–45, बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–49)

जब वक़्त में गुंजाइश है और एक ज़रूरी अम्र की वजह से ज़रा देर की जाती है, तो उसमें क़तअ़न कोई मुज़ाएक़ा नहीं, मिश्कात शरीफ़ की हदीस बाब ताजीलुस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–61 से मालूम होता है कि जब तक सितारे ज़्यादा तादाद में आसमान पर निकल कर फैल न जाऐं, ताख़ीर में कोई मुज़ाएक़ा नहीं है।

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी (मुरत्तिब)

मुशतरका इफ्तारी का सवाब किस को मिलेगा?

सवालः चार अशख़ास इफ़्तारी के लिए चार रोटी लाए और एक जगह रख दी, पाँच, सात अफ़राद थे, ऊपर की रोटी से रोज़ा इफ़्तार कर लिया, बाक़ी तीनों को भी इफ़्तारी का सवाब मिलेगा या नहीं?

जवाबः उन तीनों को भी सवाब मिलेगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–495)

ग़ैर मुस्लिम की चीज़ से इफ्तार करना

सवालः एक हिन्दू मुशरिक, हर माह रमज़ान में दूध और खांड और बर्फ़ ख़रीद कर मुसलमानों के हवाले कर देता है, उससे रोज़ा इफ़्तार करने में कुछ हरज तो नहीं?

जवाबः इसमें कुछ हरज नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–494)

किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–234 पर ये दर्ज है– ग़ैर मुस्लिम की भेजी अशिया क़बूल करना और उन चीज़ों को इफ़्तार के वक़्त इस्तेमाल करना जाइज़ है।

तवाइफ़ की इफ्तारी से इफ्तारी करना

सवालः तवाइफ़ की भेजी हुई इफ़्तारी से रोज़ा इफ़्तार करने का क्या हुक्म है?

जवाबः ख़िलाफ़े तक़्वा है, (गो अज़ राहे फ़तवा ये सूरत अदमे इल्मे हुरमत दुरुस्त है) यानी हराम माल का इल्म न होने की सूरत में दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–494)

ग़ैर मुस्लिम के पानी से रोज़ा खोलना

सवालः एक रोज़ादार ने हिन्दू से पानी लेकर रोज़ा

इफ़्तार किया, एक शख़्स कहता है कि रोज़ा जाता रहा, वह पानी हराम है, हिन्दू काफ़िर हैं, सही क्या है?

जवाबः उस रोज़ादार का हिन्दू मज़कूर से पानी ले कर वक़्त पर रोज़ा इफ़्तार करना, जाइज़ और हलाल है। झगड़ा करने वाले का झगड़ना ग़लत है, उसको झगड़ा न करना चाहिए। ये उसकी नावाक़िफ़ीयत और बेइल्मी की बात है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–456)

नमक की कंकरी से इफ़्तार करना

छुहारे से रोज़ा खोलना बेहतर है या और कोई मीठी चीज़ हो तो उससे इफ़्तार कर ले, अगर वह भी न हो तो पानी से इफ़्तार कर ले। बाज़ हज़रात नमक की कंकरी से इफ़्तार करते हैं और उसमें सवाब समझते हैं ये ग़लत अक़ीदा है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–15, बहवाला तिरमिज़ी)

दवा से रोज़ा इफ़्तार करना

सवालः जो शख़्स मरीज़ हो, वह दवा से रमज़ान शरीफ़ में रोज़ा इफ़्तार कर सकता है या नहीं?

जवाबः वह शख़्स दवा से रोज़ा इफ़्तार करे, उसमें कुछ हरज नहीं। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–495)

हुक़्क़ा से इफ़्तार करना

सवालः जिस शख़्स ने रोज़ा रखा और इफ़्तार किया हुक़्क़ा से और बेहोश हो गया, उसका रोज़ा जाइज़ है या नहीं?

जवाबः उसका रोज़ा हो गया। हाशिया में ये है– इसलिए कि रोज़ा सुब्ह सादिक़ से ग़ुरूबे आफ़ताब तक रोज़ा की नीयत के साथ खाना पीना और जिमाअ़ के छोड़ देने का नाम है और इस पर उसने अमल किया।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–498, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–110)

इफ़्तार के वक़्त कबूलियत का हुक्म

रोज़ादार को हर इफ़्तार के वक़्त एक ऐसी दुआ की इजाज़त होती है, जिसके क़बूल करने का ख़ास वादा है।

(अलहदीस हाकिम, बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–71)

इफ़्तार की दुआ

हदीस में है कि जब तुम में से किसी के सामने खाना क़रीब किया जाए इस हाल में कि वह रोज़ादार हो। यानी रोज़ा इफ़्तार करने के लिए कोई चीज़ उसके पास रखी जाए तो चाहिए कि इफ़्तार से पहले ये दुआ पढ़े–

"بِسْمِ اللّٰهِ وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ اَللّٰهُمَّ لَکَ صُمْتُ وَعَلٰی رِزْقِکَ اَفْطَرْتُ وَعَلَیْکَ تَوَکَّلْتُ سُبْحَانَکَ وَ بِحَمْدِکَ تَقَبَّلْ مِنِّی اِنَّکَ اَنْتَ السَّمِیْعُ الْعَلِیْمُ."

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–73, बहवाला दारेकुतनी)

मुअज़्ज़िन पहले इफ़्तार करे या अज़ान दे?

सवालः रमज़ान में इफ़्तार के बाद कितनी देर से अज़ान दी जाए?

जवाबः गुरूबे आफ़ताब के बाद इफ़्तार कर के अज़ान पढ़े, इफ़्तार की वजह से जमाअत में पाँच सात मिनट ताख़ीर की गुंजाइश है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–38)

इफ़्तार और मग़रिब की नमाज़ का वक़्त

सवालः मग़रिब की नमाज़ का वक़्त और इफ़्तार का वक़्त सूरज गुरूब पर ही हो जाता है, या कुछ देर बाद में, जब कि पहाड़ छः सात कोस मग़रिब की जानिब फ़ासिला पर वाक़ेअ हो और आफ़ताब पहाड़ के पीछे हो

जाए, तो इफ़्तार व मग़रिब की नमाज़ का वक़्त हो जाता है या नहीं?

जवाबः इफ़्तार और मग़रिब की नमाज़ का वक़्त सूरज गुरूब होते ही हो जाता है, कुछ देर की ज़रूरत नहीं, अगरचे जानिबे मग़रिब पहाड़ वाक़ेअ़ हो, क्योंकि गुरूब के ये माना नहीं कि दुनिया में कहीं भी सूरज नज़र न आए ऐसा तो मुम्किन नहीं। कहीं गुरूब होता है और कहीं तुलूअ़।

बल्कि गुरूब के माना ये हैं, कि हमारे उफ़ुक़ से गुरूब हो जाए और मशरिक़ में तारीकी नमूदार हो जाए, हाँ अगर कोई शख़्स पहाड़ पर खड़ा हुआ आफ़ताब देख रहा है उसको इफ़्तार हलाल नहीं, क्योंकि उसके उफ़ुक़ से आफ़ताब ग़ाइब नहीं हुआ है। (इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–170, बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–80)

मज़ाहिरे हक़ जदीद जिल्द–2 क़िस्त–4 में है कि शहरों में आफ़ताब गुरूब होने की अलामत ये है कि मशरिक़ की जानिब सियाही बुलंद हो जाए, यानी जहां से सुब्ह सादिक़ शुरू होती है वहां तक पहुंच जाए। आसमान के बीचों बीच सियाही का पहुंचना शर्त नहीं है।

इफ़्तार की वजह से जमाअ़त में ताख़ीर

सवालः माहे रमज़ान में इफ़्तार के वक़्त मग़रिब की नमाज़ किस क़दर ताख़ीर से कर सकते हैं?

जवाबः इफ़्तार के लिए जमाअ़ते मग़रिब में पाँच सात मिनट की ताख़ीर की गुंजाईश है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–37, बहवाला कबीरी सफ़्हा–233)

❑❑❑

तेईसवाँ बाब

सदक़ए फ़ित्र के मसाइल

ईद का दिन बहुत मुबारक और ख़ुदा की मेहमानी का दिन है। आज के दिन हम सब ख़ुदा के मेहमान हैं, इसकी वजह से आज का रोज़ा हराम हो गया। क्योंकि जब ख़ुदा ने हमें मेहमान बना कर खाने पीने का हुक्म दिया है तो हम को उससे मुंह मोड़ना हरगिज़ न चाहिए। आज के दिन रोज़ा रखना गोया ख़ुदा की मेहमानी का रद करना है। ये हम मुसलमानों का बहुत बड़ा तेह्वार है। हमारे तेहवार में खेल तमाशा और नाच गाना वग़ैरा नहीं होता। किसी को तकलीफ़ देना, सताना नहीं होता, बल्कि जिसको ख़ुदा ने दिया है वह दूसरे ज़रूरत मंदों की ज़रूरतें पूरी करता है। मालदार जब अपने फूल से बच्चों को उजले उजले कपड़ों में ख़ुशी ख़ुशी उछलता कूदता देखता है तो ग़रीब के मुरझाए हुए चेहरे और उसके बच्चों की हसरत भरी नज़रें उससे देखी नहीं जातीं। मुसलमान दौलतमंद अपने घर के क़िस्म क़िस्म के ख़ुशबूदार और लज़ीज़ खानों को उस वक़्त तक हाथ नहीं लगाता जब तक कि मुफ़्लिस पड़ोसी के घर में से धुवां उठता न देख ले। भला मेरी क्या ईद अगर मेरा पड़ोसी आज के दिन भी भूका रहा, भला मेरी जगमग बीवी मुझे कैसे भा

सकती है, जब कि बराबर में एक नादार की बीवी के कपड़ों में तीन तीन पेवंद हैं। अगर ख़ुदा नख़ास्ता हम इतने ग़ैरत मंद नहीं हैं और मुसलमान ग़ैरतमंद क्यों न हो? तो हमारा ग़य्यूर ख़ुदा तो इसको बरदाश्त नहीं कर सकता कि मेरा एक मुहताज बंदा अपने मैले कपड़ों की वजह से ईद की नमाज़ तक में शरीक होने से शरमा रहा है, और उसके छोटे छोटे बच्चे जब अपने साथ खेलने वाले बच्चों के पास झिल मिल करते हुए शानदार कपड़े और खनाखन बजते हुए पैसे देख कर अपनी माँ से मुंह बिसोर कर "अम्माँ हम भी ऐसा ही लेगें" कहते हैं फिर उनकी माँ बच्चों को कलेजे से लगाते हुए आँसू पोंछते हुए कहती है कि– "बेटा हाँ तुम को भी दिलाऐंगे।" और ये कहते हुए मारे ग़म के बेइख़्तियार उसकी चीख़ निकल पड़ती है और उसके दुखी दिल पर फ़िक्र व ग़म के बादल छा जाते हैं, तो ये मंज़र ख़ुदाए रहीम व करीम से देखा नहीं जाता और कौन ग़ैरतमंद देख सकता है? इसलिए ख़ुदा ने अपने ख़ुशहाल बंदों पर ये लाज़िम कर दिया है कि जब तक वह मेरे ग़रीब बंदों और बंदियों के आँसू न पोंछ दें, जब तक उनका तन न ढाँप दें, जब तक उनका चूल्हा गर्म न कर दें, जब तक उनके नौनिहालों को मुस्कुराता न देख लें ख़ुद ईद न मनाऐं, जब तक उनके दिल की कली न खिल जाए मेरे सामने न आऐं, जब तक उसकी बीवी की सुख से ईद मनाने का इंतिज़ाम न हो जाए अपनी बीवी की पाज़ेब को बेड़ी और हार को तौक़ समझें। आपस की इस हमदर्दी के कम से कम और ज़रूरी से हिस्से का नाम "सदक़ए फ़ित्र" है सदक़ए फ़ित्र

मुसलमानों की आपस की हमदर्दी का वह कम से कम और गिरे से गिरा हिस्सा है कि अगर इतना भी न हो तो मालदारों पर ख़ुदाई क़हर उतरता है, उनकी कमाईयों की बरकतें ख़त्म हो जाती हैं। ख़ुदाए क़ह्हार उनके पीछे ऐसी उलझनें लगा देता है कि सदक़ए फ़ित्र से कहीं ज़्यादा पैसा बरबाद हो जाता है और किसी ग़रीब के एक दिन के रोने की परवा न करने की सज़ा में ख़ुदाए गय्यूर उस बेग़ैरत दौलतमंद को कभी कभी बरसों घुटनों में सर दे कर रुलाता है और जब ये बंदे ख़ुशियों और मुसर्रतों में दूसरों को अपना शरीक नहीं बनाते तो ख़ुदाए दाना व बीना ग़मों, तकलीफ़ों, आँसुवों और हिचकियों में दोनों को शरीक कर के अपने तमाम बंदों को यक्साँ कर देता है।

(रमज़ान क्या है? सफ़्हा–175)

सदक़ए फ़ित्र के शराइत

सदक़ए फ़ित्र वाजिब है, फ़र्ज़ नहीं, और सदक़ए फ़ित्र के वाजिब होने के लिए सिर्फ़ तीन चीज़ें शर्त हैं। (1) आज़ाद होना (2) मुसलमान होना (3) किसी ऐसे माल के निसाब का मालिक होना जो असली ज़रूरतों से फ़ारिग़ हो, और क़र्ज़ से बिल्कुल या बक़द्र एक निसाब के महफ़ूज़ हो। इस माल पर साल का गुज़र जाना शर्त नहीं न माल का तिजारती होना शर्त है, न साहबे माल का बालिग़ होना और आक़िल होना शर्त है। यहाँ तक नाबालिग़ बच्चों और मजनूनों पर सदक़ए फ़ित्र वाजिब है उनके औलिया को उनकी तरफ़ से अदा करना चाहिए और अगर वली न अदा करे और वह उस वक़्त ख़ुद मालदार हों तो बालिग़ हो जाने के बाद या जुनून ज़ाएल हो जाने

के बाद खुद उकनो अदम बुलूग़ या जुनून के ज़माने का सदक़ए फ़ित्र अदा करना चाहिए।

सदक़ए फ़ित्र का हुक्म नबी करीम (स.अ.व.) ने उसी साल दिया था जिस साल रमज़ानुलमुबारक के रोज़े फ़र्ज़ हुए थे।

सदक़ए फ़ित्र की मसलिहत ये मालूम होती है कि वह दिन ख़ुशी का है और उस दिन इस्लाम की शान व शौकत, कसरते जमईयत के साथ दिखाई जाती है और सदक़ा देने से ये मक़्सद ख़ूब कामिल हो जाता है। अलावा इसके उसमें रोज़ा की तकमील है। सदक़ए फ़ित्र के देने से रोज़ा मक़बूल हो जाता है और इस सदक़ा में हक़ तआला का अज़ीमुश्शान एहसान है कि उसने माहे मुबारक से मुशर्रफ़ किया और उसमें रोज़ा रखने की हम को तौफ़ीक़ दी और कुछ अदाए शुक्र भी है।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–51)

सदक़ए फ़ित्र अदा करना उस शख़्स के ज़िम्मा वाजिब हे जो साहबे निसाब मालदार हो, यानी 52 तोला चाँदी या साढ़े सात तोला सोना हो। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–326, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–3 सफ़्हा–99)

ज़रूरते असलीया क्या है

किसी के पास बड़ा भारी घर है अगर बेचा जाए तो हज़ार पाँच सौ का बिके और पहनने के लिए क़ीमती क़ीमती कपड़े हैं मगर उनमें सच्चा (चाँदी सोने का) गोटा नहीं है और ख़िदमत के लिए दो चार ख़िदमतगार हैं। घर में हज़ार पाँच सौ का ज़रूरी असबाब भी है, मगर ज़ेवर नहीं और वह सब काम में अया करता है, या कुछ

सामान ज़रूरत से ज़ाएद भी मौजूद है और कुछ सच्चा गोटा और ज़ेवर वग़ैरा भी है, लेकिन वह इतना नहीं जितने पर ज़कात वाजिब होती है, तो ऐसे पर सदक़ए फ़ित्र वाजिब नहीं है। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–34, बहवाला नवायलइज़ाह जिल्द–1 सफ़्हा–161)

नीज़ किसी के पास ज़रूरी सामान से ज़ाएद असबाब है लेकिन वह क़र्ज़दार भी है, तो क़र्ज़ का अंदाज़ा (तख़मीना) लगा कर देखो क्या बचता है, अगर इतनी क़ीमत का सामान बच जाए जितने पर ज़कात वाजिब हो जाए तो सदक़ा वाजिब है और अगर इससे कम बचे तो वाजिब नहीं। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–34, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–189)

ख़ाली मकान ज़रूरते असलीया में दाख़िल है या नहीं?

किसी के दो घर हैं, एक में ख़ुद रहता है और एक ख़ाली पड़ा है, या किराया पर दे रखा है, तो दूसरा मकान ज़रूरत से ज़ाएद है, अगर उसकी क़ीमत इतनी हो जितने पर ज़कात वाजिब होती है, तो उस पर सदक़ए फ़ित्र वाजिब है। और ऐसे को तो ज़कात का पैसा देना भी जाइज़ नहीं है, अलबत्ता अगर मालिके मकान की इसी पर गुज़र औक़ात है (यानी कोई आमदनी का ज़रीआ नहीं है) तो ये मकान भी ज़रूरी असबाब में दाख़िल हो जाएगा और उस पर सदक़ए फ़ित्र वाजिब नहीं होगा और ज़कात का पैसा लेना दुरुस्त होगा।

ख़ुलासा ये हुआ कि जिसको ज़कात व सदक़ए वाजिबा का पैसा लेना दुरुस्त है, उस पर सदक़ए फ़ित्र वाजिब नहीं है। और जिसको सदक़ा और ज़कात का लेना देना

दुरुस्त नहीं उस पर सदक़ए फ़ित्र वाजिब है।

(बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–35, बहवाला फ़तावा ख़ानिया जिल्द–1 सफ़्हा–226)

जिस शख़्स पर ज़कात फ़र्ज़ है उस पर सदक़ए फ़ित्र भी वाजिब है, लेकिन फ़र्क़ ये है कि ज़कात के निसाब में तो सौना, चाँदी या तिजारत का माल ही होना ज़रूरी है और सदक़ए फ़ित्र वाजिब होने के लिए सिर्फ़ यही तीन चीज़ें नहीं बल्कि उसके निसाब में हर क़िस्म का माल हिसाब में लिया जाता है। हाँ ये बात दोनों निसाबों में शर्त है कि अपनी रोज़मर्रा की ज़रूरतों से ज़ाएद हो और क़र्ज़े से बचा हुआ हो।

चुनांचे अगर एक शख़्स के पास रोज़ाना पहनने के कपड़ों के अलावा कुछ और कपड़े रखे हों, या रोज़मर्रा की ज़रूरत से ज़ाएद ताँबे, पीतल, स्टील, चीनी वग़ैरा के बरतन रखे हों या उसका कोई मकान ख़ाली पड़ा हुआ हो या और किसी क़िस्म का सामान है जो रोज़ाना की ज़रूरत से ज़ाएद है तो अगर इन चीज़ों की क़ीमत मिल कर निसाब के बराबर या उससे ज़ाएद हो जाती है तो उस पर ज़कात तो फ़र्ज़ नहीं लेकिन सदक़ए फ़ित्र वाजिब है। और इसी तरह सदक़ए फ़ित्र के निसाब पर साल गुजरना भी ज़रूरी नहीं, बल्कि अगर उसी दिन इतने माल का मालिक हुआ हो तब भी सदक़ए फ़ित्र अदा करना वाजिब है। (रमज़ान क्या है? सफ़्हा–177)

जो साहबे निसाब न हो उसके लिए हुक्म

एक हदीस में फ़रमाया गया है कि– "ग़नी भी सदक़ए फ़ित्र अदा करे और फ़क़ीर भी सदक़ा दे।" इन दोनों के

बारे में फ़रमाया गया है– "अल्लाह तआ़ला उस मालदार को तो उसके सदक़ए फ़ित्र देने की वजह से पाकीज़ा बना देता है और फ़क़ीर (जो मालिके निसाब न हो) उसको इससे ज़्यादा इनायत फ़रमाता है जितना उसने सदक़ए फ़ित्र के तौर पर बराबर दिया है।"

ये बशारत अगरचे मालदार के लिए भी है कि अल्लाह तआ़ला उसके माल में उससे कहीं ज़्यादा बरकत अता फ़रमाते हैं जितना उसने दिया है, मगर इस बशारत को फ़क़ीर के साथ मख़सूस इसलिए फ़रमाया ताकि उसकी हिम्मत अफ़ज़ाई हो, और वह सदक़ए फ़ित्र देने में पीछे न रहे। (मज़ाहिरे हक़ जदीद क़िस्त–3 जिल्द–2 सफ़्हा–58)

सदक़ए फ़ित्र किस वक़्त वाजिब होता है?

सदक़ए फ़ित्र का वुजूब ईदुलफ़ित्र की फ़ज्र तुलूअ़ होने पर होता है, लिहाज़ा जो शख़्स क़ब्ल तुलूए फ़ज्र के मर जाए, या फ़क़ीर हो जाए उस पर सदक़ए फ़ित्र वाजिब नहीं, इसी तरह जो शख़्स बाद तुलूए फ़ज्र के इस्लाम लाए और माल पा जाए, या जो लड़का, लड़की फ़ज्र तुलूअ़ होने से पहले पैदा हुआ हो, या जो शख़्स फ़ज्र के तुलूअ़ होने से पहले इस्लाम लाया या माल पा जाए उस पर सदक़ए फ़ित्र वाजिब है।

(इल्मुलफ़िक़्ह हिस्सा–4 सफ़्हा–51)

ईद के दिन जिस वक़्त फ़ज्र का वक़्त आता है उसी वक़्त ये सदक़ा वाजिब होता है। तो अगर कोई फ़ज्र का वक़्त आने से पहले ही मर गया तो उस पर सदक़ए फ़ित्र वाजिब नहीं, उसके माल में से न दिया जाए। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–35, बहवाला आलमगीरी

जिल्द–1 सफ़्हा–196)

रमज़ान से पहले सदक़ए फ़ित्र देना

सवालः सदक़ए फ़ित्र की अदाएगी का क्या वक़्त है? रमज़ान से पहले, मसलन शाबान या रजब में अदा करे तो जाइज़ है या नहीं?

जवाबः इख़्तिलाफ़ी मस्अला है, रमज़ान से पहले का क़ौल भी है। इस पर अमल करना ख़िलाफ़े एहतियात है। माहे रमज़ान में भी अदा करने में इख़्तिलाफ़ है, मगर क़वी ये है कि दुरुस्त है और सदक़ा अदा हो जाएगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–176, बहवाला जिल्द–2 अलबहरुर्राइक़ सफ़्हा–255)

सदक़ए फ़ित्र रमज़ान शरीफ़ में देना दुरुस्त है ख़्वाह किसी भी अशरा में दे दे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–305)

सदक़ए फ़ित्र किस किस की तरफ़ से देना वाजिब है?

सदक़ए फ़ित्र का अदा करना अपनी तरफ़ से भी वाजिब है और अपनी नाबालिग़ औलाद की तरफ़ से भी और बालिग़ औलाद की तरफ़ से भी, बशर्ते कि वह फ़क़ीर यानी साहबे निसाब न हो हों, और अपनी ख़िदमतगार लौंडी, गुलामों की तरफ़ से भी, अगरचे वह काफ़िर हों, नाबालिग़ औलाद अगर मालदार हों तो उनके माल से अदा करे, और अगर मालदार नहीं हैं तो अपने माल से। बालिग़ औलाद अगर मालदार हों तो उनकी तरफ़ से सदक़ए फ़ित्र अदा करना वाजिब नहीं। हाँ एहसानन अगर अदा कर दे तो जाइज़ है यानी फिर उन औलाद को देने की ज़रूरत नहीं रहेगी। और अगर बालिग़ औलाद

मालदार तो हों मगर मजनून हों तब भी उनकी तरफ़ से सदक़ए फ़ित्र अदा करना वाजिब है मगर उन्हीं के माल से। जो लौंडी, गुलाम ख़िदमत के न हों बल्कि तिजारत के हों उनकी तरफ़ से सदक़ए फ़ित्र अदा करना वाजिब नहीं।

बाप अगर मर गया हो तो दादा बाप के हुक्म में है, यानी पोते अगर मालदार हैं तो उनके माल से वरना अपने माल से उनका सदक़ए फ़ित्र अदा करना वाजिब है।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–52)

फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–324, बहवाला आलमगीरी में इस तरह लिखा है– "औरत पर जब कि साहबे निसाब हो तो फ़ित्रा उसी पर वाजिब है, अगर शौहर अदा कर देगा तो अदा हो जाएगा, बाप पर नहीं है।"

सदक़ए फ़ित्र में इजाज़त की ज़रूरत है या नहीं?

सवालः जिस तरह किसी दूसरे शख़्स की ज़कात उसकी इजाज़त के बग़ैर अदा नहीं होती तो क्या ये ही हुक्म सदक़ए फ़ित्र का भी है, या कुछ फ़र्क़ है?

जवाबः हाँ यही हुक्म सदक़ए फ़ित्र का भी है, इजाज़त ज़रूरी है, लेकिन चूंकि सदक़ए फ़ित्र की मिक़्दार कम और मालूम है इसलिए बीवी और औलाद की तरफ़ से जो उसके अयाल (ज़ेर किफ़ालत) हैं अदा कर देता है, और आदतन उसकी इजाज़त होती है। इसलिए इस्तेहसानन जाइज़ है, बख़िलाफ़ ज़कात के उसकी मिक़्दार ना मालूम और ज़्यादा होती है, बग़ैर कहे अदा करने की आदत नहीं है इसलिए इजाज़त और वकालत ज़रूरी है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–173, बहवाला शामी

जिल्द–1 सफ़्हा–103)

जिसने रोज़े न रखे हों उसका हुक्म

जिसने किसी वजह से रमज़ान के रोज़े नहीं रखे उस पर भी सदक़ए फ़ित्र वाजिब है। और जिसने रोज़े रखे उस पर भी वाजिब, दोनों में कुछ फ़र्क़ नहीं, बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–35, बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–192 और फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–114 पर– "जिसने रोज़े न रखे हों तब भी उस पर सदक़ए फ़ित्र वाजिब है, न अदा किया हो तो अब दे दे, जब तक वह अदा न करे बरिउज़्ज़िम्मा न होगा।"

शादी शुदा लड़की का फ़ित्रा किस पर वाजिब है?

सवालः लड़की की शादी हो चुकी हो और वह लड़की अपने माँ बाप के घर है, नाबालिग़ है, उसका फ़ित्रा किस पर है, माँ बाप पर, या ससुराल वालों पर?

जवाबः अगर वह लड़की मालदार है, तो ख़ुद उसके माल में सदक़ए फ़ित्र वाजिब है, ख़्वाह बालिग़ हो, या नाबालिग़, और अगर मालदार नहीं तो अगर बालिग़ है तो किसी के ज़िम्मा नहीं, और अगर मालदार नहीं और नाबालिग़ है और रुख़्सती नहीं हुई तो बाप के ज़िम्मा, और अगर रुख़्सती हो गई है तो बाप के ज़िम्मा नहीं।

(इमदादुलफ़तावा जदीद जिल्द–2 सफ़्हा–80)

माल तक़्सीम होने के बाद साहबे निसाब न हो तो क्या फ़ित्रा वाजिब है?

सवालः चार भाईयों का माल मुशतरक है अगर तक़्सीम किया जाए तो किसी का हिस्सा बक़द्रे निसाब नहीं होता है, क्या क़ुर्बानी या सदक़ा वाजिब है?

जवाब: इस सूरत में कि किसी एक भाई का हिस्सा क़द्रे निसाब नहीं पहुंचता, किसी पर भी फ़ित्रा और कुर्बानी वाजिब नहीं होगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–308, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब सदक़ए फ़ित्र जिल्द–2 सफ़्हा–99)

जो जवान लड़के अपनी कमाई बाप को देते हैं उनके फ़ित्रे का हुक्म

सवाल: एक शख़्स के दो लड़के हैं, जो कुछ कमाते हैं बाप को देते हैं, लड़कों के पास कुछ नहीं है, तो ऐसी हालत में उन भाईयों पर सदक़ए फ़ित्र, ज़कात या कुर्बानी वाजिब है या नहीं?

जवाब: उन पर ज़कात और सदक़ए फ़ित्र और कुर्बानी वाजिब है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–311, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–99)

क्या साहबे निसाब बच्चा बालिग़ होने के बाद फ़ित्रा अदा करे?

सवाल: अगर बच्चा मालिके निसाब है और उसका वली उसकी तरफ़ से सदक़ए फ़ित्र अदा न करे तो उस बच्चा पर बालिग़ होने के बाद अदा करना क्या वाजिब है?

जवाब: हाँ उसको बालिग़ होने के बाद सदक़ए फ़ित्र अदा करना होगा, अगर बच्चा साहबे निसाब न हो गो बाप साहबे निसाब था, और उसने अदा न किया तो बच्चा पर बालिग़ होने के बाद अदा करना वाजिब नहीं है।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–78)

सब का फ़ित्रा अदा करने की गुंजाइश न हो तो?

अगर किसी शख़्स के पास इतना ही ग़ल्ला मौजूद हो कि कुछ लोगों का सदक़ा अदा कर सकता है और

कुछ लोगों का अदा नहीं कर सकता, तो उन लोगों का सदक़ा पहले अदा करे जिनके नफ़क़ा की ताकीद ज़्यादा हो, आँहज़रत (स.अ.व.) ने औलाद के नफ़क़ा (ख़र्चा) को बीवी के नफ़क़ा पर और बीवी के नफ़क़ा को ख़ादिम के नफ़क़ा पर मुक़द्दम फ़रमाया है।

मुसलमान मर्द पर उसका, उसकी बीवी, बच्चों, गुलामों और उन रिश्तादारें का सदक़ए फ़ित्र अदा करना वाजिब है, जिनका ख़र्चा उस पर है, जैसे बाप, दादा, माँ, नानी, वग़ैरा। हदीस में उन लोगों का सदक़ा अदा करना आया है जिनका ख़र्च तुम उठाते हो। (एहयाउलउलूम जिल्द–1 क़िस्त–5, सफ़्हा–527, बहवाला अबूदाऊद शरीफ़)

फ़ित्रा ईद गुज़र जाने से मआफ़ नहीं होता

अगर किसी ने ईद के दिन सदक़ए फ़ित्र न दिया हो तो मआफ़ नहीं हुआ, अब किसी दिन भी दे देना चाहिए।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–35, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–191)

सदक़ए फ़ित्र की मिक़्दार

सदक़ए फ़ित्र में गेहूं, या गेहूं का आटा, या गेहूं का सत्तु दे तो उसी के सेर यानी आधी छटांक और पौने दो सेर (पौने दो किलो) बल्कि एहतियात के लिए पूरे दो सेर या कुछ ज़्यादा देना चाहिए, क्योंकि ज़्यादा होने में कुछ हरज नहीं है, बल्कि बेहतर है। और अगर जौ या जौ का आटा दे तो उसका दोगुना देना चहिए, और अगर जौ के अलावा कोई और अनाज दे जैसे चना, जुवार, चावल तो इतना दे कि उसकी क़ीमत उतने गेहूं के बराबर हो जाए जिसमें पौने दो किलो गेहूं आ सकें।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–3 सफ़्हा–35, बहवाला फ़तावा आलमगीरी जिल्द–2 सफ़्हा–192)

क्या चावल देने से फ़ित्रा अदा हो जाएगा

सवालः हमारे यहां बंगाल में आम तौर पर फ़र्द की ग़िज़ा चावल है, इस सूरत में हम लोग पौने दो सेर चावल से फ़ित्रा अदा कर सकते हैं?

जवाबः दुर्रेमुख़्तार में है कि अगर कोई शख़्स सदक़ए फ़ित्र में चावल अदा करना चाहे तो उस चावल का कोई वज़न या पैमाना मोतबर नहीं, बल्कि वह चावल इस क़दर हों कि क़ीमत में बराबर निस्फ़ साअ़ (पौने दो किलो) गेहूं, या एक साअ़ जौ के हो जाऐं, तो उस वक़्त सदक़ए फ़ित्र आदा होगा, अगर किसी ने पौने दो किलो चावल दे दिया और वह क़ीमत में अशियाए मज़कूरा से कम हो तो सदक़ए फ़ित्र अदा न होगा। (इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–156)

सदक़ए फ़ित्र अगर गेहूं, गेहूं के आटे, या सत्तु का दे तो पौन दो किलो दिया जाए, या उसकी क़ीमत अदा की जाए। अगर गेहूं न दे बल्कि कोई अनाज (चावल वग़ैरा) दे तो इतना दे कि उसकी क़ीमत पौने दो किलो गेहूं के बराबर हो जाए। और अगर जौ या जौ का आटा दे तो पौने दो सेर का दोगुना दे। फ़तावा हिन्दीया जिल्द–1 सफ़्हा–192 किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–293 में है ग़ैर मनसूस अशिया में हुक्म ये है कि साअ़ या निस्फ़ साअ़ (पौने दो किलो) गेहूं की क़ीमत में जिस क़दर चावल आते हैं उस क़दर दे।

सदक़ए फ़ित्र में मैदा या उसकी क़ीमत देना

सवालः यहाँ पर जज़ीरा मौरिशश में लोग गेहूं की

रोटी नहीं खाते हैं, बल्कि बाहर से तैयर मैदा आता है उसकी रोटी खाते हैं और उसके पाँच सौ ग्राम की क़ीमत तक़रीबन पचास पैसे हैं, और जिसको ख़ास ज़रूरत हो वह लोग गेहूं ख़रीद कर खाते हैं। सवाल ये है कि हम मैदा की क़ीमत का एतेबार कर के सदक़ए फ़ित्र अदा करें या गेहूं की क़ीमत का?

जवाबः जब आटा (मैदा) गेहूं का हो, उसमें किसी और चीज़ की मिलावट न हो और पौने दो किलो दिया जाए तो सदक़ए फ़ित्र अदा हो जाएगा। इसी तरह उसकी क़ीमत दी जाए तो भी सदक़ए फ़ित्र अदा हो जाएगा, हां अगर उस मैदा में किसी और चीज़ की मिलावट हो तो पौने दो किलो देने से सदक़ए फ़ित्र अदा न होगा, और उसकी क़ीमत भी सदक़ए फ़ित्र की अदाएगी के लिए काफ़ी न होगी। ख़ालिस गेहूं की क़ीमत से सदक़ए फ़ित्र अदा किया जाए। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–177 बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–190)

जो मुख़्तलिफ़ ग़ल्ला इस्तेमाल करता हो वह क्या दे?

सदक़ए फ़ित्र उसी ग़ल्ले में से अदा करे जो ख़ुद इस्तेमाल करता हो, अगर कोई शख़्स गेहूं इस्तेमाल करता है तो उसके लिए जौ का देना सही न होगा, अगर मुख़्तलिफ़ ग़ल्ले इस्तेमाल करता हो तो वह ग़ल्ला दे जो सब से अच्छा हो, अगर कोई मामूली ग़ल्ला भी दे देगा तो सदक़ा फ़ित्र अदा हो जाएगा। (एहयाउलउलूम जिल्द–1 सफ़्हा–526, बहवाला अबूदाऊद शरीफ़)

क्या सदक़ए फ़ित्र में कंट्रोल की क़ीमत का एतेबार है?

सदक़ए फ़ित्र में अस्ल तो ये है कि गेहूं वग़ैरा का

ग़ल्ला दिया जाए, ग़ल्ला आला क़िस्म का या औसत या अदना जो भी दिया जाए सदक़ए फ़ित्र अदा हो जाएगा। क़ीमत अदा करनी हो तो बाज़ारी दाम से अदा करनी होगी। ये ज़रूरी नहीं कि आला क़िस्म के गेहूं की क़ीमत हो, औसत और अदना क़िस्म के गेहूं की क़ीमत भी मोतबर है, मगर क़ीमत हो तो बाज़ारी दाम (क़ीमत) के गेहूं की। कनट्रोल (राशन) की क़ीमत मोतबर नहीं। फ़क़ीर के हाथ में इतनी रक़म पहुंचनी चाहिए कि अगर वह उसके गेहूं ख़रीदना चाहे तो पौने दो किलो (एक किलो 633 ग्राम) गेहूं बाज़ार से मिल जाऐं, कन्ट्रोल (सरकारी राशन) के हिसाब से क़ीमत दी जाएगी तो बाज़ार से उतने गेहूं नहीं मिलेंगे और कन्ट्रोल से हासिल करने के लिए राशन कार्ड का होना ज़रूरी है और कार्ड हर फ़क़ीर के पास नहीं होता है, इसलिए कन्ट्रोल का हिसाब लगा कर अदा करना और उसके हिसाब के मुताबिक़ क़ीमत अदा करना सही नहीं होगा।

अगर गेहूं के अलावा और कोई ग़ल्ला बाजरा, चावल वग़ैरा दिया जाए तो उसमें गेहूं की क़ीमत का एतेबार होगा यानी जिस क़दर पौने दो किलो गेहूं की क़ीमत हो उतनी रक़म का दूसरा ग़ल्ला दिया जाए।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–172)

अगर आटा की क़ीमत गेहूं से कम हो जैसे कि आज कल सरकारी राशन का आटा, तो आटे की बजाए वज़न मज़कूर यानी पौने दो किलो गेहूं से सदक़ए फ़ित्र अदा करना चाहिए, या उतना आटा दिया जाए कि जिसकी क़ीमत पौने दो किलो गेहूं के बराबर हो।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–485)

फ़ित्रा में क़ीमत कहां की मोतबर होगी?

सवालः हमारे यहां गेहूं की पैदावार नहीं, और न फ़रोख़्त होता है, अलबत्ता बाज़ घरों में आटा कम और मैदा बकसरत, मैदा की क़ीमत आटे से बहुत ज़्यादा तो ऐसी सूरत में मैदा के हिसाब से फ़ित्रा दिया जाए या हिन्दुस्तान से गेहूं के दाम मालूम कर के?

जवाबः गेहूं, मैदा, आटा, तीनों में से किसी एक के देने से सदक़ए फ़ित्र अदा हो जाता है। गेहूं से आटा देना अफ़ज़ल है और आटा देने से क़ीमत देना अफ़ज़ल है। जिस क़रीब की जगह गेहूं, आटे की फ़रोख़्त होती हो, वहां के निर्ख़ से क़ीमत लगई जाए और रमज़ान के महीना की क़ीमत का एतेबार होगा और जब आप के यहां मैदा की फ़रोख़्त बकसरत होती है तो ख़ुद मैदा या उसकी क़ीमत देना चाहिए, अगरचे गेहूं से ज़्यादा बैठे, हिन्दुस्तान से गेहूं का निर्ख़ मालूम कर के क़ीमत देना काफ़ी नहीं। (क़रीब जगह की क़ीमत का एतेबार होगा)

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–271)

सदक़ए फ़ित्र में शहर या ज़िला की क़ीमत का एतेबार

सवालः अगर किसी जगह गेहूं न मिले और आटा ज़्यादा क़ीमत को मिलता है और शहर में गंदुम की क़ीमत कम हो तो शहर की क़ीमत से सदक़ए फ़ित्र अदा करना कैसा है?

जवाबः अपनी बस्ती के हिसाब से सदक़ए फ़ित्र अदा करना चाहिए। अगर वहां गंदुम न मिले तो आटा की क़ीमत का हिसाब करना चाहिए, या जुवार और छुहारे के

साअ़ की क़ीमत का हिसाब करना चाहिए, ग़रज़ जो जिन्स मनसूस (यानी जिनका हदीस में ज़िक्र है मसलन गेहूं, छुहारे, मुनक़्क़ा, जौ, का एक साअ़) वहां मिलती हो उसकी क़ीमत का हिसाब किया जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–322, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब सदक़ए फ़ित्र जिल्द–1 सफ़्हा–103)

सब से बेहतर फ़ितरा

अगर गेहूं या जौ की क़ीमत दे दी जाए तो ये सब से बेहतर है। (आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–192)

अगर ज़माना अरज़ानी का हो तो नक़द देना बेहतर है, अगर ख़ुदा नख़ास्ता गिरानी का हो तो खाने की चीजों का देना अफ़ज़ल है। और इल्मुलफ़िक़्ह के हाशिये में ये है कि मेरे नज़्दीक उमरा को ये मुनासिब है कि उनको गिराँ चीज़ की क़ीमत दें, मसलन आज कल छुहारा और मुनक़्क़ा उन सब चीज़ों में गिराँ हैं लिहाज़ा उसकी क़ीमत दिया करें, क्योंकि हदीस में वारिद हुआ है। "اذاوسع اللّٰه فوسعوا" जब अल्लाह तुम्हें ज़्यादा दे तो तुम भी ज़्यादा दो। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–53)

ग़ैर मुमालिक वालों का फ़ित्रा किस हिसाब से दिया जाए?

सवाल: बैरूने ममालिक के बाशिंदे अपने ख़ेश अक़ारिब से फ़ित्रा की अदाएगी के लिए लिखते हैं कि हमारी तरफ़ से इतना फ़ितरा अदा कर दें। एहतियातन चार सेर गेहूं या उसकी क़ीमत दी जाती है, मालूम ये करना है कि उनके फ़ित्रा की क़ीमत यहां पर किस क़ीमत पर अदा की जाए, यहां की क़ीमत से, या वहां की क़ीमत से?

जवाब: उनके फ़ित्रे उमदा क़िस्म के गेहूं से पौने दो

किलो गेहूं अदा करे, या वहां के हिसाब से गेहूं की क़ीमत दी जाए, अगर यहां के गेहूं की क़ीमत ज़्यादा होती है तो यहां के हिसाब से अदा करे। बेहतर यही है कि गेहूं दे दे और अगर क़ीमत दे तो वह क़ीमत लगाई जाए जिसमें सदक़ा लेने वाले ग़रीबों का फ़ाएदा हो।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–113)

अह्दे नबवी (स.) में फ़ित्रा किस वक़्त दिया जाता था?

सवाल: आप (स.अ.व.) के ज़माना में सदक़ए फ़ित्र नमाज़ से पहले निकाला जाता था या नहीं, या कुछ दिनों तक जमा रहता था उसके बाद मुहताजों को तक़्सीम किया जाता था?

हमारे यहां एक जगह के सरदार के पास सदक़ए फ़ित्र जमा होना ज़रूरी है और सरदार या नाइब सरदार जब मर्ज़ी हो तब तक़्सीम करते हैं, ये अमल कैसा है?

जवाब: दुर्रेमुख़्तार में लिखा है जिसका हासिल ये है कि सदक़ए फ़ित्र नमाज़ से पहले अदा करना मुस्तहब है। आँहज़रत (स.अ.व.) के हुक्म और फ़ेल के मुवाफ़िक़। चुनांचे मिश्कात शरीफ़ में अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि.) से रिवायत है कि– आँहज़रत (स.अ.व.) ने ईद की नमाज़ को जाने से पहले सदक़ए फ़ित्र के निकालने का हुक्म फ़रमाया है। पस साबित हुआ कि जो कुछ अमल इन सरदारों का है ख़िलाफ़े सुन्नत है और बे–अस्ल है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–303, बहवाला मिश्कता शरीफ़ बाब सदक़ए फ़ित्र फ़स्ल औवल सफ़्हा–160)

सदक़ए फ़ित्र अगर ईद के दिन से पहले अदा न किया गया तो ईदगाह जाने से पहले अदा कर देना

मुस्तहब है। (इल्मुलफ़िक्ह हिस्सा–4 सफ़्हा–54)

क्या सैयद को सदक़ए फ़ित्र दे सकते हैं?

मुफ़्ता बिही मज़हब ये है कि सादात को इस ज़माने में भी ज़कात और सदक़ाते वाजिबा मसलन चर्म क़ुर्बानी और सदक़ा वग़ैरा देना हराम है, और ज़कात वग़ैरा आदा न होगी। फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–169। फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–170 पर है कि सैयद को ज़कात व उश्र का रुपया या ग़ल्ला देना दुरुस्त नहीं। हां हीला कर के दिया जाए तो कोई मुज़ाएक़ा नहीं। हीला की सूरत में है कि किसी ग़रीब को ये कह कर दे दिया जाए कि फ़लाँ सैयद को देना था मगर वह सैयद है उसके लिए ज़कात जाइज़ नहीं, लिहाज़ा तुम को देते हैं अगर कुल या बाज़ उसको भी अपनी तरफ़ से दे दो तो बेहतर है और वह लेकर दे दे, तो सैयद के लिए जाइज़ है।

(बहवाला किफ़ायतुलमुफ़्ती सफ़्हा–272)

सदक़ा की तक़सीम का तरीक़ा

एक आदमी का सदक़ए फ़ित्र एक ही फ़क़ीर को दे दे या थोड़ा–थोड़ा कर के कई फ़क़ीरों को दे दे दोनों बातें जाइज़ हैं। नीज़ अगर कई आदमियों का सदक़ए फ़ित्र एक ही फ़क़ीर को दे दिया तो ये भी दुरुस्त है, हाशिया में लिखा है लेकिन वह इतने आदमियों का न हो कि ये सब मिल कर निसाबे ज़कात या निसाबे सदक़ए फ़ित्र को पहुंच जाए। इसलिए इस क़दर देना एक शख़्स को मकरूह है। नीज़ सदक़ए फ़ित्र के मुस्तहिक़ वह लोग हैं जो ज़कात के मुस्तहिक़ हैं। हाशिया में लिखा है कि ग़ैर मुस्लिम को भी सदक़ए फ़ित्र देना दुरुस्त है, लेकिन

ज़कात देना जाइज़ नहीं। (बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–2 सफ़्हा–36, बहवाला फ़तावा हिन्दीया जिल्द–1 सफ़्हा–191)

सदक़ए फ़ित्र की रक़म से मदरसा की ज़मीन ख़रीदना

सवालः "बरमंघम मस्जिद ट्रस्ट" मस्जिद से मुलहक़ ज़मीन पर बच्चों के लिए दीनी मदरसा बनाना चाहता है। यहाँ पर इस वक़्त बच्चों की तालीम के लिए कोई माक़ूल इंतिज़ाम नहीं है। हमारे पास रुपये की कमी एक देरीना शिकायत है, लेकिन सदक़ए फ़ित्र की रक़म की मद में कुछ रक़म पड़ी हुई है, आप से ये मालूम करना है कि क्या ये रक़म इस ज़मीन की ख़रीदारी में इस्तेमाल की जा सकती है?

जवाबः सदक़ए फ़ित्र का हुक्म ये है कि ईद के दिन नमाज़े ईद से पहले अदा किया जाए और इससे पहले भी अदा करना दुरुस्त है, अगर किसी ने अदा न किया तो जल्दी अदा करने की फ़िक्र करे। साक़ित और मआफ़ नहीं होता है।

इस हुक्म के बावजूद आप हज़रात के पास सदक़ए फ़ित्र की कसीर रक़म कैसे जमा है, तअज्जुब होता है और अफ़सोस भी, और अगर आप की माली हालत मदरसा बनाने के क़ाबिल न इस वक़्त है न मुस्तक़बिल क़रीब में होने की तवक़्क़ो है तो उस रक़म का शरई हीला कर के मदरसा के लिए ख़रीदी जा सकती है, बिला इज़्तिरारी हालत और बिदूने उज़्रे शरई के हीला कर के भी ये रक़म ज़मीन ख़रीदने में इस्तेमाल करने की इजाज़त नहीं। सदक़ए फ़ित्र के अस्ल हक़दार फ़ुक़रा व मसाकीन हैं उनकी हक़ तल्फ़ी होगी।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–178)

फ़िदया की रक़म को मक़रूज़ के क़र्ज़ में मुजरा करना

सवालः एक शख़्स का क़र्ज़ किसी के ज़िम्मा है और मदयून मुफ़्लिस और नादार है अगर कर्ज़दार सदक़ए फ़ित्र में इस क़र्ज़ को मुजरा कर ले तो क्या सदक़ए फ़ित्र अदा हो जाएगा?

जवाबः इस तरह सदक़ा फ़ित्र अदा न होगा, बग़ैर वसूल किए क़र्ज़ में मुजरा कर लेने से ज़कात व फ़ित्रा अदा नहीं होता है। क़र्ज़ में वसूल कर सकते हैं मगर देना ज़रूरी है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–303, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 बाबुलमस्रफ़ सफ़्हा–85 व किबुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–16)

मस्जिद के इमाम को सदक़ा देना

सवालः इमामे मस्जिद को सदक़ए फ़ित्र देना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः इमामत की वजह से उसको फ़ित्रा देना जाइज़ नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–328)

जो सहरी के लिए उठाता है उसको फ़ित्रा देना

सदक़ए फ़ित्र का माल उस शख़्स को देना जो सहरी के लिए लोगों को उठाता हो जाइज़ है, मगर बेहतर ये है कि उसको उसकी उजरत में क़रार न दे, बल्कि पहले कुछ और उसको दे दे, उसके बाद सदक़ए फ़ित्र का माल दे। (इल्मुलफ़िक़्ह हिस्सा–4 सफ़्हा–54)

नाबालिग़ को फ़ित्रा देना

सवालः फ़ित्रा ग़रीब व यतीम मिस्कीन नाबालिग़ बच्चों को देने से अदा हो जाता है या नहीं?

जवाब: अगर ग़रीब नाबालिग़ हों तो उनको सदक़ए फ़ित्र देना जाइज़ नहीं, अलबत्ता उनके लिए सरपरस्तों को देना जाइज़ है। अगर वह बच्चे समझदार हैं तो ख़ुद उनको भी देना जाइज़ है। और अगर वह बच्चे मालदार के हैं तो उनको किसी तरह भी देना दुरुस्त नहीं।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–269)

जहाँ फ़ुक़रा न हों, वहाँ फ़ित्रा किस वक़्त निकाला जाए?

सवाल: जिस मुल्क में शरई फ़क़रा न हों, वहां के लोग सदक़ए फ़ित्र ईद के दिन नमाज़ से पहले निकाल कर अलाहिदा रख लें, या किसी मोअ़तमद को दे दें, उसके बाद दूसरे ग़रीब मुल्क को रवाना कर दिया जाए तो मुस्तहब अदा होगा या नहीं?

जवाब: सदक़ए फ़ित्र ईद से पहले फ़ुक़रा को देना मुस्तहब है, पस इस सूरत में कि सदक़ए फ़ित्र अलाहिदा कर के रख दिया जाए और फ़ुक़रा को न दिया जाए तो मुस्तहब अदा न होगा। और ये आदतन मुतहक़्क़क़ नहीं हो सकता कि किसी मुल्क में फ़ुक़रा न हों। अगर हक़ीक़त में ऐसा होता है तो फिर दूसरी जगह के फ़ुक़रा को भेजना चाहिए और उज़्र की वजह से वह शख़्स तारिके मुस्तहब न कहलाएगा। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–317, बहवाला आलमगीरी मिस्री जिल्द–1 सफ़्हा–180, बाब सामिन सदक़तुल फ़ित्र)

क्या क़ैदियों का शुमार मसाकीन में है?

सवाल: यहां क़ैदियों के सिवा कोई मिस्कीन नहीं, तो किस तरह सदक़ए फ़ित्र अदा किया जाए। क्या क़ैदियों का मसाकीन में शुमार है?

जवाबः जब कि उनके पास बक़द्रे निसाब माल न हो तो वह मसाकीन हैं और उनको सदक़ए फ़ित्र देना दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–312 बहवाला दुर्रेमुख़्तार बाब मसरफ़ जिल्द–2 सफ़्हा–79, 80)

फ़ित्रा मनी आर्डर से पहुंचे तो क्या दोबारा देना होगा?

सवालः ज़ैद ने सदक़ए फ़ित्र की रक़म किसी यतीम ख़ाना में बज़रीआ रजिस्ट्री रवाना किया, वहां के नाज़िम साहब का ख़त आया कि रजिस्ट्री तो मिल गई है मगर रक़म नहीं, तो क्या ज़ैद के ज़िम्मा से फ़ित्रा अदा हो गया या नहीं?

जवाबः इस सूरत में भी भेजने वाले के ज़िम्मा से ज़कात व फ़ित्रा अदा नहीं हुआ, क्योंकि डाक ख़ाना भेजने वाले का वकील है और जिसके पास भेजा गया उसका नहीं होता।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–279)

एक इल्तिजा

आख़िर में क़ारिईन से दरख़्वास्त है कि रमज़ानुलमुबारक के आम व ख़ास औक़ात में जब अपने लिए दुआऐं करें तो अहक़र और उसके वालिदैन मरहूमीन को भी शामिल फ़रमा लें। क्या बईद है कि करीम आक़ा आपकी मुख़लिसाना दुआवों से मरहूमीन की मग़फ़िरत और बंदा के अंजाम बख़ैर होने का फ़ैसला फ़रमा दे। (आमीन)

मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी
मुदर्रिस दारुलउलूम, देवबंद
1407 हिजरी मुताबिक़ 1987 ई0